VISIONIAS
INSPIRING INNOVATION

राजव्यवस्था

Classroom Study Material 2020

(September 2019 to September 2020)

www.visionias.in
+91 8468022022 DELHI | JAIPUR | PUNE | HYDERABAD | AHMEDABAD | LUCKNOW | CHANDIGARH

राजव्यवस्था एवं संविधान

1. केंद्र राज्य संबंध (Centre State Relations) 4
1.1. कोविड-19 के दौरान केंद्र राज्य संबंध (Centre-State relations during COVID-19) 4
1.2. छठी अनुसूची के तहत दर्जे की मांग (Demand for Sixth Schedule status) 6
1.3. इनर लाइन परमिट (Inner Line Permit) 8
1.4. अनुच्छेद 370 (Article 370) 10
1.5. अन्य राज्यों के लिए विशेष उपबंध- भारत का विषम संघवाद (Specific Provisions for Other States- India's Asymmetric Federalism) 12
2. संवैधानिक प्रावधानों से संबंधित मुद्दे (Issues Related to Constitutional Provisions) 15
2.1. अधिकार (Rights) 15
2.1.1. इंटरनेट एक मूलभूत अधिकार (Internet as Basic Right) 15
2.1.2. राइट टू बी फॉरगॉटन (Right to be Forgotten) 16
2.1.3. संपत्ति का अधिकार (Right to Property) 18
2.1.4. राजद्रोह (Sedition) 20
2.1.5. सबरीमाला मंदिर मामला (Sabarimala Temple Issue) 22
2.1.6. धार्मिक शिक्षा और राज्य वित्तपोषण (Religious Education and State Funding) 23
2.2. आरक्षण (Reservation) 24
2.2.1. आरक्षण नीति (Reservation Policy) 24
2.2.2. पदोन्नति में अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति के लिए क्रीमी लेयर मानदंड (Creamy Layer Criteria for SC/ST in Promotions) 26
2.2.3. अन्य पिछड़े वर्गों का उप-वर्गीकरण {Sub-Categorization of Other Backward Classes (OBCs)} 27
2.2.4. निजी क्षेत्र में रोजगार के लिए स्थानीय आरक्षण का मुद्दा (Issue of Local Reservation in Private Sector Jobs) 30
2.2.5. नौकरी में आरक्षण और पदोन्नति के लिए कोटा मूल अधिकार नहीं (Job Reservations, Promotion Quotas not a Fundamental Right) 32
2.2.6. राज्यों में 'आर्थिक रूप से कमजोर वर्गों' के लिए कोटा (EWS Quota in States) 33
2.3. केशवानंद भारती वाद (Kesavananda Bharati Case) 34
2.4. एक राष्ट्र एक भाषा (One Nation One Language) 36
2.5. भारतीय संविधान की 9वीं अनुसूची (9th Schedule of Indian Constitution) 39
3. संसद/राज्य विधायिका और कार्यपालिका की कार्य-प्रणाली (Functioning of Parliament/State Legislatute and Executive) 41
3.1. विधायिका (Legislature) 41
3.1.1. संसदीय समितियां (Parliamentary Committees) 41
3.1.2. संसदीय विशेषाधिकार (Parliamentary Privileges) 42
3.1.3. दल-परिवर्तन रोधी कानून (Anti-Defection law) 43
3.1.4. प्रश्नकाल (Question Hour) 45

VISION IAS

3.2. कार्यपालिका (Executive) 47
3.2.1. तटस्थता का सिद्धांत (Doctrine of Neutrality) 47
3.2.2. राज्यपाल की शक्तियां (Powers of Governor) 48
3.2.3. अमेरिकी राष्ट्रपति पर महाभियोग (Impeachment of US President) 49
3.2.4. संयुक्त राज्य अमेरिका में राष्ट्रपति का चुनाव (US Presidential Election) 50
4. महत्वपूर्ण अधिनियम और विधान (Important Acts and Legislations) 52
4.1. नागरिकता संशोधन अधिनियम (Citizenship Amendment Act) 52
4.1.1. राष्ट्रीय जनसंख्या रजिस्टर (National Population Register) 54
4.1.2. राष्ट्रव्यापी राष्ट्रीय नागरिक रजिस्टर (Nationwide NRC) 56
5. भारत में निर्वाचन (Elections In India) 60
5.1. चुनाव सुधार (Electoral Reforms) 60
5.1.1. राजनीति का अपराधीकरण (Criminalization of Politics) 60
5.1.2. चुनावी बॉण्ड्स (Electoral Bonds) 63
5.1.3. राजनीतिक दलों में आंतरिक लोकतंत्र (Intra Party Democracy) 65
5.1.4. चुनाव सुधार के अन्य क्षेत्र (Other areas of Electoral Reforms) 66
5.2. परिसीमन आयोग (Delimitation Commission) 67
5.3. राजनीति में महिलाओं की भागीदारी (Women Participation in Politics) 69
5.4. निर्वाचन में मतदान संबंधी आचरणों को प्रभावित करने वाले कारक (Factors Affecting Voting Behaviour in Elections) 71
6. न्यायपालिका (Judiciary) 74
6.1. उच्चतर न्यायपालिका (Higher Judiciary) 74
6.1.1. न्यायालय की अवमानना (Contempt of Court) 74
6.1.2. राज्य सभा में न्यायाधीशों की नियुक्ति (Judges in Rajya Sabha) 76
6.1.3. न्यायाधीशों का स्थानांतरण (Transfer of Judges) 78
6.1.4. उच्चतम न्यायालय की क्षेत्रीय न्यायपीठ (Regional Bench of Supreme Court) 79
6.1.5. भारतीय संविधान का अनुच्छेद 131 (Article 131 of Indian Constitution) 80
6.2. न्यायिक सुधार (Judicial Reforms) 81
6.2.1. अखिल भारतीय न्यायिक सेवा (All India Judicial Services) 81
6.2.2. फास्ट ट्रैक स्पेशल कोर्ट (Fast Track Special Courts) 83
6.2.3. ऑनलाइन न्याय प्रदायगी (Online Justice Delivery) 84
6.3. ग्राम न्यायालय (Gram Nyayalayas) 87
6.4. अधिकरणों के लिए नए नियम (New Rules for Tribunals) 88
7. पारदर्शिता और जवाबदेही (Transparency and Accountability) 91
7.1. सूचना का अधिकार अधिनियम {Right to Information (RTI) Act} 91
7.1.1. 'सूचना का अधिकार' के दायरे में भारत के मुख्य न्यायाधीश का कार्यालय (CJI Under RTI) 92
7.2. गैर-सरकारी संगठनों का विनियमन (NGOs Regulation) 93
7.3. शासकीय गुप्त बात अधिनियम (Official Secrets Act: OSA) 96

VISION IAS

7.4. आधार (Aadhar) 97
8. शासन (Governance) 100
8.1. सरकारी विज्ञापनों का विनियमन (Regulation of Government Advertisements) 100
8.2. आपराधिक कानूनों में सुधार (Reforms in Criminal Laws) 102
8.2.1. महत्वपूर्ण डेटा - 'भारत में अपराध रिपोर्ट 2019' (Important Data - Crime In India 2019 Report) 103
8.3. भारत में जेल सुधार (Prison Reform in India) 104
8.3.1. हिरासत में हिंसा (Custodial Violence) 107
8.4. लोक सेवा वितरण के लिए ई-गवर्नेंस (E-Governance for Public Service Delivery) 109
8.5. संकटकाल में नागरिक समाज की भूमिका (Role of Civil Society In Times of Crisis) 110
8.6. आकांक्षी जिला कार्यक्रम (Aspirational Districts Programme) 113
8.7. राष्ट्रीय भर्ती एजेंसी (National Recruitment Agency) 115
8.8. सिविल सेवाओं में सुधार (Civil Services Reforms) 116
8.8.1. मिशन कर्मयोगी (Mission Karmayogi) 117
8.9. स्वयं सहायता समूह (Self- Help Groups) 119
8.10. अप्रचलित कानूनों का निरसन (Repeal of Obsolete Laws) 120
9. स्थानीय शासन (Local Governance) 122
9.1. पंचायतें और महामारी (Panchayats and Pandemic) 122
9.2. शहरी स्थानीय निकायों का वित्तीय सशक्तीकरण (Financially Empowering Urban Local Bodies) 124

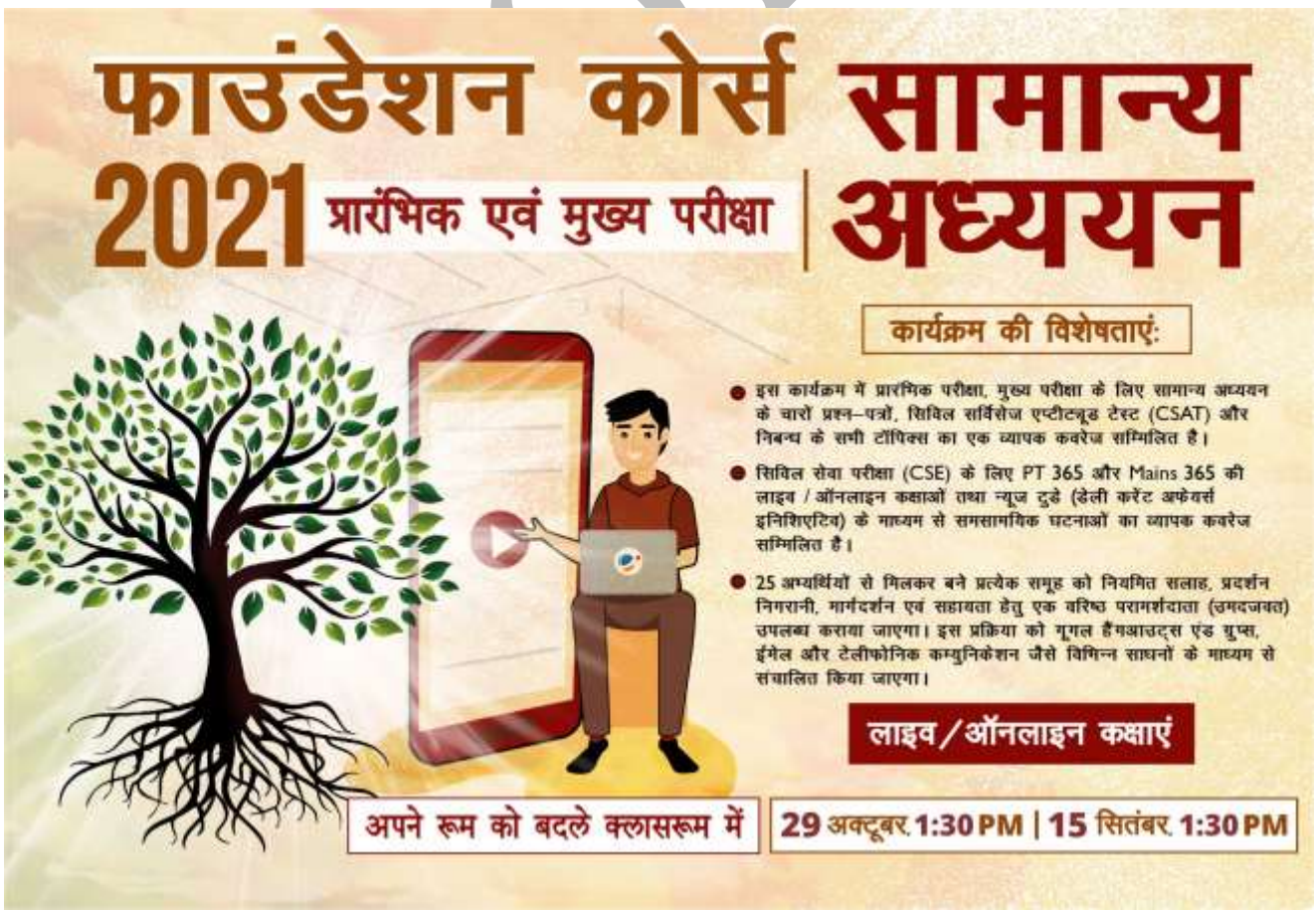

1. केंद्र राज्य संबंध (Centre State Relations)

1.1. कोविड-19 के दौरान केंद्र राज्य संबंध (Centre-State relations during COVID-19)

सुर्ख़ियों में क्यों?

कोविड-19 ने केंद्र और राज्यों के मध्य इस संकट के प्रबंधन को लेकर वर्तमान कानूनी ढांचे के संबंध में गतिरोध की स्थिति उत्पन्न की है।

कोविड-19 के दौरान केंद्र-राज्य मुद्दे

- **विभिन्न स्थितियों के लिए एक समान निर्देश का दृष्टिकोण:** इस महामारी के दौरान, केंद्र ने राज्यों को एक समान दिशा-निर्देशों को जारी करने के लिए आपदा प्रबंधन अधिनियम, 2005 {Disaster Management Act, 2005 (DM Act)} के तहत टॉप डाउन (शीर्ष से नीचे की ओर) दृष्टिकोण का पालन किया। उदाहरण के लिए, जब केरल ने विशिष्ट क्षेत्रों में रेस्तरां, बसें और निजी वाहनों को छूट प्रदान करने का फैसला किया, तो केंद्र सरकार ने इन कदमों को अपने दिशा-निर्देशों को कमजोर करने वाला माना।
- **गैर-परामर्शी निर्णयन प्रक्रिया:** केंद्र सरकार ने लॉकडाउन लागू करने से पूर्व न तो कोई योजना बनाई और न ही राज्य सरकारों से परामर्श लिया। इस प्रकार, राज्यों को लॉजिस्टिक्स (प्रचालन-तन्त्र) के संचालन के लिए पर्याप्त समय नहीं मिला, जैसे कि प्रवासी मजदूरों का मुद्दा।
- **सूक्ष्म-प्रबंधन:** अतिरिक्त शमन उपायों का सुझाव देने हेतु और आकलन के लिए अंतर-मंत्रालयी केंद्रीय टीमों को उन स्थानों पर भेजा गया जहां कोविड-19 के प्रसार को गंभीर माना गया था। हालांकि, यह जिलों के चयन के आधार के मानदंडों को स्पष्ट किए बिना किया गया था, जिन्हें संघवाद की भावना के उल्लंघन के रूप में देखा गया था।
- **राज्यों की वित्तीय स्वायत्तता पर प्रभाव:**
    - जहां एक ओर राज्यों के राजस्व का प्रवाह कम हो रहा था (शराब बिक्री पर प्रतिबंध, अचल संपत्ति बाजार में गिरावट आदि के कारण), वहीं दूसरी ओर, केंद्र सरकार के कदमों ने उन राज्यों की वित्तीय स्वायत्तता को और क्षति पहुंचाई, जो महामारी के विरुद्ध संघर्ष में सबसे अग्रणी थे।
    - केंद्र सरकार ने राज्य सरकारों की उधार सीमा को उनके सकल राज्य घरेलू उत्पाद के 3 प्रतिशत से बढ़ाकर 5 प्रतिशत कर दिया। हालांकि, इस वृद्धि का केवल पहला 0.5 प्रतिशत बिना शर्त है और शेष भाग ऋण संधारणीयता, रोजगार सृजन, विद्युत क्षेत्र में सुधार आदि जैसे विशिष्ट सुधारों से संबद्ध हैं।
    - केंद्र ने घोषणा की है कि **पी.एम.-केयर्स फंड** में दान करने वाले निगम, निगमित सामाजिक दायित्व (कॉर्पोरेट सोशल रिस्पॉन्सिबिलिटी) के संदर्भ में छूट का लाभ प्राप्त कर सकते हैं, जबकि मुख्य मंत्री राहत कोष में दान करने वाले ऐसा लाभ नहीं उठा सकते। केंद्र के इस कदम ने मुख्य मंत्री राहत कोष में दान करने वालों को हतोत्साहित किया है और यह राज्यों को केंद्र सरकार पर निर्भर करता है।

इस प्रकार की अस्पष्टता के लिए उत्तरदायी कारक

- **संवैधानिक प्रावधानों से संबंधित मुद्दे:**
    - संविधान की **सातवीं अनुसूची में आपदा प्रबंधन** के संबंध में कोई स्पष्ट प्रविष्टि नहीं है। इसलिए, आपदा प्रबंधन अधिनियम के उपबंधों को अमल में लाने के लिए संसद द्वारा समवर्ती सूची की **प्रविष्टि 23** - "सामाजिक सुरक्षा और सामाजिक बीमा; नियोजन और बेरोजगारी" - का सहारा लेना पड़ा।
    - भारतीय संविधान के द्वारा **लोक व्यवस्था और स्वास्थ्य** को **राज्य सूची** के अंतर्गत शामिल किया गया है। इस प्रकार विभिन्न राज्यों ने सामाजिक सुरक्षा उपायों को अपनाने, प्रतिष्ठानों को बंद करने और गतिविधियों को सीमित करने के आदेश एवं दिशा-निर्देश पारित करने के लिए **महामारी अधिनियम, 1897** {Epidemic Diseases Act (EDA), 1897} का सहारा लिया। इन कानूनी प्रावधानों को जिस तरह से प्रयुक्त किया गया है, उसने **केंद्र और राज्यों के मध्य संविधान के तहत अपनी भूमिकाओं की व्याख्या के संबंध में स्पष्टता के अभाव** को उजागर किया है।

कोविड-19 से निपटने के दौरान अवलोकित अन्य विधिक और संस्थागत अंतराल

- किसी भी विधि या कानून में "खतरनाक", "संक्रामक", या "संक्रामक रोगों" और "महामारी" को स्पष्ट तौर पर **परिभाषित नहीं किया गया** है। मौजूदा नियमों और प्रक्रियाओं के तहत ऐसा कोई प्रावधान नहीं है कि किस मानक पर पहुंचने के पश्चात् एक विशेष रोग को महामारी घोषित किया जाना चाहिए।

VISION IAS

- मौजूदा विधियों, नियमों और प्रक्रियाओं में **आइसोलेशन (अलगाव), ड्रग्स/वैक्सीन की उपलब्धता या टीकाकरण के लिए आवश्यक तारतम्यता और क्वारंटाइन उपायों** तथा अन्य निवारक उपायों के बारे में कोई स्पष्ट प्रावधान नहीं है।
- ऐसे में स्वास्थ्य संकट का प्रबंधन कानून और व्यवस्था का मुद्दा बन गया है। कोविड-19 से संबंधित प्रमुख सूचनाएं और दिशा-निर्देश गृह मंत्रालय द्वारा जारी किए गए थे न कि स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय द्वारा। प्रयुक्त शब्द/भाषा कानून और व्यवस्था से संबंधित हैं, यथा- "लॉकडाउन," "कर्फ्यू," "जुर्माना" और "निगरानी"।
- एक समेकित व अग्रसक्रिय नीतिगत दृष्टिकोण का अभाव देखा गया है। वास्तव में, तदर्थ और प्रतिक्रियाशील नियम-निर्धारण किया गया है, जैसा कि प्रवासी श्रमिकों के साथ व्यवहार में देखा गया है।
- **महामारी अधिनियम, 1897** में उपयुक्त उपबंधों के अभाव के कारण क्वारंटाइन आदि उपायों को लागू करने के लिए भारतीय दण्ड संहिता (IPC) के प्रावधानों को लागू किया गया।

अन्य संघीय सरकारों ने कोविड-19 की स्थिति को कैसे नियंत्रित किया

- **कनाडा:** संघीय स्तर पर आपातकालीन उपायों और आपातकालीन प्रबंधन को **इमरजेंसी एक्ट, 1988** और **इमरजेंसी मैनेजमेंट एक्ट, 2007** द्वारा नियंत्रित किया जाता है।
  - अधिकांश प्रांतों के स्वयं के स्वास्थ्य अधिनियम भी प्रचलित हैं, जो स्वास्थ्य आपातकाल के मामले में किए जाने वाले उपायों को अधिसूचित करते हैं।
  - इसलिए, कनाडा में अधिकांश स्वास्थ्य संकटों को केंद्र सरकार के समन्वय के साथ प्रांतीय स्तर पर नियंत्रित किया जाता है।
- **ऑस्ट्रेलिया: नेशनल हेल्थ सिक्योरिटी एक्ट, 2007,** प्रक्रियाओं और संरचनाओं को राष्ट्रीय स्वास्थ्य आपात स्थितियों में प्रथम कार्यवाही करने, उन्हें रोकने और उनसे निपटने के लिए, नामित संस्थाओं के साथ समन्वय और राष्ट्रीय स्तर पर समन्वय स्थापित करने तथा प्रांतों को अपने अनुप्रयोग के लिए कानून, न्यायिक प्रतिक्रियाएँ और समन्वय प्रक्रियाएँ निर्धारित करने का प्रावधान करता है।

- **आपदा प्रबंधन अधिनियम, 2005 से संबंधित मुद्दे**
  - आपदा प्रबंधन अधिनियम के उपबंधों को लागू कर कोविड-19 को एक **"अधिसूचित आपदा" (notified disaster)** के रूप में घोषित किया गया है। यह अधिनियम आपदा के प्रति अनुक्रिया करने तथा आपदा प्रबंधन के लिए समयबद्ध रीति से और प्रभावी प्रतिक्रिया सुनिश्चित करने हेतु केंद्र सरकार को नीतियों एवं योजनाओं को बनाने और दिशा-निर्देश जारी करने के लिए व्यापक शक्तियां प्रदान करता है।
  - यह अधिनियम विशेष रूप से महामारियों को लक्षित करने के उद्देश्य से नहीं है, अतः केंद्र सरकार द्वारा इससे संबंधित कानून को लागू करने के लिए इसके उपबंधों का उपयोग नहीं किया जा सका। इसलिए, आपदा प्रबंधन अधिनियम के उपबंधों को अमल में लाने के लिए संसद को समवर्ती सूची की एक प्रविष्टि का भी सहारा लेना पड़ा।
- **महामारी अधिनियम, 1897 से संबंधित मुद्दे:**
  - यह महामारी रोगों के प्रसार को नियंत्रित करने के लिए केंद्र और राज्य दोनों सरकारों को सशक्त बनाता है। हालाँकि, यह अधिनियम महामारी के दौरान केवल केंद्र और राज्य सरकारों की शक्तियों पर बल देता है, लेकिन यह महामारी को रोकने एवं नियंत्रित करने में **सरकार के कर्तव्यों का वर्णन नहीं** करता है।

आगे की राह

- भारत में बहु-स्तरीय संघीय प्रणाली का एक प्रमुख लाभ यह है कि यहाँ स्थानीय स्तर पर एक कुशल शासन संरचना की उपस्थिति है, जो कि आकस्मिक संकटों से निपटने के लिए सर्वाधिक उपयुक्त हैं। उत्तरदायी और कुशल शासन के लिए (जो स्थानीय अनिवार्यताओं के अनुरूप है), राज्य और स्थानीय निकायों को सार्वजनिक स्वास्थ्य संकटों से निपटने का उत्तरदायित्व ग्रहण करना चाहिए। केंद्र सरकार की भूमिका राज्यों के मध्य समन्वय को सुनिश्चित करने के लिए होनी चाहिए न कि राज्यों को निर्देश देने के लिए।
- प्रशासनिक सुधार आयोग ने "प्राकृतिक या मानव निर्मित आपदाओं और आपात स्थितियों के प्रबंधन", के लिए समवर्ती सूची में एक नई प्रविष्टि को शामिल करने की सिफारिश की थी। इसे 'संविधान के कामकाज की समीक्षा के लिए राष्ट्रीय आयोग' और बाद में आपदा प्रबंधन अधिनियम की समीक्षा करने के लिए गृह मंत्रालय द्वारा गठित एक टास्क फोर्स द्वारा भी दोहराया गया था।

VISION IAS

1.2. छठी अनुसूची के तहत दर्जे की मांग (Demand for Sixth Schedule status)

सुर्ख़ियों में क्यों?

अरुणाचल प्रदेश विधान सभा ने संपूर्ण राज्य को संविधान की छठी अनुसूची में सम्मिलित किए जाने हेतु सर्वसम्मति से एक प्रस्ताव पारित किया है।

पृष्ठभूमि

- राज्य सरकार ने **जनजातीय लोगों के प्रथागत अधिकारों को संरक्षित और सुरक्षित करने हेतु** राज्य को छठी सूची के अंतर्गत सम्मिलित किए जाने की मांग की थी। ये अधिकार राज्य की भूमि और वन उत्पादों के स्वामित्व और हस्तांतरण से संबंधित हैं।
    - इससे पहले, राज्य सरकार ने **मांग की थी कि संविधान में संशोधन करके अनुच्छेद 371(H) को निरस्त किया जाए तथा अरुणाचल प्रदेश** को नागालैंड और मिज़ोरम की तर्ज पर **अनुच्छेद 371(A) और अनुच्छेद 371(G) के अंतर्गत शामिल किया जाए।**
        - अनुच्छेद 371(A) और 371(G) क्रमश: नागालैंड और मिजोरम राज्य के जनजातीय लोगों की धार्मिक और सामाजिक प्रथाओं, रुढ़िजन्य विधियों और भूमि के स्वामित्व और हस्तांतरण के अधिकारों के संबंध में विशेष सुरक्षा प्रदान करता है।
        - अनुच्छेद 371(H) के अंतर्गत, अरुणाचल प्रदेश के राज्यपाल को विधि एवं व्यवस्था के संबंध में और इस संबंध में उसके कृत्यों का निर्वहन करने के लिए विशेष उत्तरदायित्व प्रदान किया गया है।
- हालांकि, वर्तमान में अरुणाचल प्रदेश के संदर्भ में **वर्ष 1873 का बंगाल ईस्टर्न फ्रंटियर रेगुलेशन (BEFR) एक्ट** लागू है। यह भारत के सभी नागरिकों को बिना वैध **इनर लाइन परमिट** के अरुणाचल प्रदेश में प्रवेश करने से प्रतिबंधित करता है।

विदेशियों के लिए परमिट: भूटान के नागरिकों को छोड़कर प्रत्येक विदेशी जो संरक्षित या प्रतिबंधित क्षेत्र में प्रवेश करने या रहने का इच्छुक है, उसे सक्षम प्राधिकारी से एक विशेष परमिट प्राप्त करना आवश्यक होता है जिसे **संरक्षित क्षेत्र परमिट (Protected Area Permit) / प्रतिबंधित क्षेत्र परमिट (Restricted Area Permit)** कहते हैं।

छठी अनुसूची

- संविधान की छठी अनुसूची असम, मेघालय, त्रिपुरा और मिजोरम के जनजातियों को संविधान के अनुच्छेद 244(2) और 275(1) के प्रावधानों के अंतर्गत जनजातीय क्षेत्रों का प्रशासन चलाने का अधिकार प्रदान करती है।
    - **अनुच्छेद 244** 'अनुसूचित क्षेत्रों' और 'जनजातीय क्षेत्रों' के रूप में निर्दिष्ट **कुछ क्षेत्रों के प्रशासन के लिए विशेष उपबंध करता है।**
    - **अनुच्छेद 275** भारत की संचित निधि पर भारित **विधिक अनुदानों के लिए प्रावधान करता है।** ऐसे अनुदानों में विशिष्ट अनुदान भी सम्मिलित हैं जो अनुसूचित जनजातियों के कल्याण की अभिवृद्धि करने या किसी राज्य में अनुसूचित क्षेत्रों के प्रशासन के स्तर को उन्नत करने के लिए होते हैं।

छठी अनुसूची में सम्मिलित होने के लाभ

छठी अनुसूची के लाभ हैं- शक्तियों का लोकतांत्रिक हस्तांतरण, क्षेत्र की विशिष्ट संस्कृति का संरक्षण और प्रोत्साहन, भूमि अधिकारों सहित कृषि-संबंधी अधिकारों का संरक्षण तथा तीव्र विकास के लिए वित्तीय अंतरण में वृद्धि। ये लाभ निम्नलिखित विशेषताओं के कारण प्राप्त होते हैं:

- **स्वशासी जिला परिषद (Autonomous District Councils: ADCs):** ADCs एक जिले का प्रतिनिधित्व करने वाले निकाय हैं, जिन्हें संविधान द्वारा राज्य विधायिका के दायरे के भीतर अलग श्रेणी की स्वायत्तता प्रदान की गयी है। प्रत्येक ADC में 30 से अनधिक सदस्य होते हैं, जिनमें 4 से अनधिक सदस्य राज्यपाल द्वारा नामनिर्देशित होते हैं और शेष 26 निर्वाचित होते हैं। सभी पांच वर्ष के कार्यकाल के लिए पद पर बने रहते हैं।
- **स्वशासी प्रदेश या क्षेत्र (Autonomous region):** यदि एक स्वशासी जिले में कई अनुसूचित जनजातियां हैं तो राज्यपाल सार्वजनिक अधिसूचना द्वारा उनके निवास क्षेत्र या क्षेत्रों को स्वशासी क्षेत्रों या प्रदेशों में विभाजित कर सकता है।
- **विधायी शक्ति:** ADC को राज्यपाल की विधिवत मंजूरी से विधियों के निर्माण का अधिकार है।
- **स्वशासी क्षेत्रों पर संसदीय या राज्य विधान मंडल की शक्ति की सीमा:** संसद या राज्य विधान मंडल द्वारा पारित अधिनियमों को इन क्षेत्रों में राष्ट्रपति और राज्यपाल की स्वीकृति के बिना कार्यान्वित नहीं किया जा सकता है।
- **न्यायिक शक्ति:** जनजातियों से संबद्ध मामलों की सुनवाई के लिए ये परिषदें अपने अधिकार-क्षेत्र के भीतर ग्राम अदालतों का गठन कर सकती हैं।

VISION IAS

- **नियामक शक्ति (Regulatory power):** जिला परिषद जिले में स्कूलों, औषधालयों, बाजारों, घाटों, मत्स्य पालन, सड़कों इत्यादि की स्थापना, निर्माण या प्रबंधन कर सकती है। यह गैर-जनजातियों द्वारा ऋण प्राप्त करने के साथ ही व्यापार करने पर नियंत्रण के लिए विनियम भी बना सकती है। लेकिन ऐसे विनियमनों के लिए राज्यपाल की स्वीकृति आवश्यक है।
- **कर राजस्व संग्रह:** जिला परिषद और प्रादेशिक परिषद को भू-राजस्व के आकलन और संग्रह तथा कुछ विशिष्ट करों को आरोपित करने का अधिकार है। ये विकास से संबंधित योजनाओं, स्वास्थ्य सेवा, शिक्षा, सड़क और राज्य के नियंत्रण वाली नियामक शक्तियों से संबंधित लागतों की पूर्ति के उद्देश्य से भारत की संचित निधि से सहायता के रूप में अनुदान भी प्राप्त कर सकती हैं।

छठी अनुसूची से संबंधित मुद्दे

- **शक्तियों और प्रशासन का विकेंद्रीकरण ना होना:** यह विकेंद्रीकरण छठी अनुसूची में सम्मिलित कई क्षेत्रों में नहीं किया गया है। उदारणस्वरूप, बोडोलैंड टेरिटोरियल एरिया डिस्ट्रिक्ट (BTAD) में केवल जिला परिषद द्वारा ही सदस्यों को निर्वाचित किया जाता है जो निरंकुश शक्तियों का उपभोग करते हैं। अत: ऐसी ईकाइयों का सृजन किया जाना चाहिए जो सभी स्तरों के लोगों का प्रतिनिधित्व कर सकें।
- **परिषद पर राज्य का विधायी नियंत्रण:** परिषद द्वारा निर्मित विधियों को राज्यपाल की सहमति की आवश्यकता होती है। इस प्रक्रिया की कोई समय-सीमा निश्चित नहीं है जिससे विधियां वर्षों तक लंबित रहती हैं। इसके अतिरिक्त, छठी अनुसूची के पैरा 12(A) में उपबंधित है कि जब भी जिला परिषद और राज्य विधान मंडल के मध्य हितों का टकराव होगा तो राज्य विधान मंडल ही अभिभावी होगा।
- **राज्यपाल की विवेकाधीन शक्तियों में टकराव:** इन क्षेत्रों के प्रशासन के संबंध में राज्यपाल की विवेकाधीन शक्ति के संदर्भ में भिन्न-भिन्न दृष्टिकोण हैं। इसी प्रकार, मंत्री परिषद के लिए राज्यपाल के परामर्श की आवश्यकता के संदर्भ में भी टकराव है।
- **रुढ़िजन्य विधियां संहिताबद्ध नहीं हैं:** जनजातियों की सांस्कृतिक पहचान की सुरक्षा को सुनिश्चित करने के लिए रुढ़िजन्य विधियों को संहिताबद्ध करने और व्यावहारिक रूप से प्रयोग करने की आवश्यकता है।
- **कुशल पेशेवरों का अभाव:** लगभग सभी परिषदों की कुशल नियोजित पेशेवरों तक पहुंच नहीं है, जिसके परिणामस्वरूप उचित तकनीकी एवं वित्तीय विमर्श के बिना विकास परियोजनाओं की अनौपचारिक कल्पना की जाती है।
- **वित्तीय निर्भरता:** स्वशासी परिषद, विशेष पैकेज के अतिरिक्त धन के लिए संबंधित राज्य सरकारों पर निर्भर होती है। जिला परिषदों तथा क्षेत्रीय परिषदों को धनराशि प्रदान करने की रीति की अनुशंसा करने के लिए राज्य वित्त आयोग की स्थापना नहीं की गई है।
- **विकास का अभाव:** यद्यपि, लोगों को और अधिक लाभ प्रदान करने तथा त्वरित विकास हेतु छठी अनुसूची को संविधान में शामिल किया गया है, तथापि स्थानीय स्तर पर पंचायतों या परिषदों का गठन नहीं होने के कारण, इन स्थानीय निकायों के पास मनरेगा (MGNREGA) इत्यादि जैसी विभिन्न योजनाओं के क्रियान्वयन के लिए पर्याप्त शक्ति तथा धन का अभाव है, (जैसा कि गैर-छठी अनुसूची क्षेत्र के पास उपलब्ध है)।
- **भ्रष्टाचार:** छठी अनुसूची के प्रावधान के अंतर्गत विभिन्न परिषदों के कार्य में अक्सर वित्तीय कुप्रबंधन एवं बृहद स्तर पर भ्रष्टाचार की घटनाएं घटित होती हैं।

आगे की राह

- सभी क्षेत्रों में **निर्वाचित ग्राम परिषद का गठन** तथा ग्राम सभा के प्रति ग्राम परिषद की जवाबदेही सुनिश्चित करना।
- राज्य निर्वाचन आयोग द्वारा **नियमित निर्वाचन** सुनिश्चित करना।
- विधि के अंतर्गत ग्राम सभा को मान्यता प्रदान करना तथा इसकी शक्तियों व कार्यों का उल्लेख करना।
- यह सुनिश्चित करना कि **महिलाएं एवं अन्य जातीय अल्पसंख्यक** परिषद के प्रतिनिधित्व से वंचित न रहे।
- विकासात्मक कार्यक्रमों के नियोजन, क्रियान्वयन तथा निगरानी में **पारदर्शिता लाना।**

अन्य संबंधित तथ्य

- अरुणाचल प्रदेश को छठी अनुसूची में सम्मिलित किए जाने के लिए **संवैधानिक संशोधन (अनुच्छेद 358 के दायरे से बाहर) की आवश्यकता है।**
- राष्ट्रीय अनुसूचित जनजाति आयोग (अनुच्छेद 338A) द्वारा **संघ राज्य क्षेत्र लद्दाख को संविधान की छठी अनुसूची के अंतर्गत एक 'जनजाति क्षेत्र'** घोषित करने की अनुशंसा की गयी है।
- **नागरिकता संशोधन अधिनियम (Citizenship Amendment Act: CAA)** के तहत छठी अनुसूची के क्षत्रों तथा इनर लाइन

VISION IAS

परमिट वाले क्षत्रों को इसके उपबंधों से छूट प्रदान की गयी है।

संविधान की पांचवीं अनुसूची

- संविधान की पांचवीं अनुसूची चार राज्यों, यथा- असम, मेघालय, त्रिपुरा तथा मिज़ोरम को छोड़कर किसी भी राज्य के अनुसूचित क्षेत्रों और अनुसूचित जनजातियों के प्रशासन एवं नियंत्रण के संदर्भ में उपबंध करता है।
  - अग्रलिखित 10 राज्यों में पांचवीं अनुसूची के क्षेत्र हैं: आंध्र प्रदेश, तेलंगाना, छत्तीसगढ़, गुजरात, हिमाचल प्रदेश, झारखंड, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, ओडिशा तथा राजस्थान।
- **राष्ट्रपति** को यह अधिकार है कि वह किसी क्षेत्र को अनुसूचित क्षेत्र घोषित कर सकते हैं तथा **राज्यपाल** को यह अधिकार है कि वह संसद या राज्य के विधान सभा के अधिनियमों में उपयुक्त संशोधन तथा छूट के साथ उसे लागू करने के निर्देश दे सकते हैं।
- किसी राज्य में संचालित सामान्य प्रशासनिक मशीनरी को पाँचवीं अनुसूची वाले क्षेत्रों में सामान्यतया विस्तारित नहीं किया जाता है।
- **पंचायत उपबंध (अनुसूचित क्षेत्रों पर विस्तार) अधिनियम, 1996 {Panchayats (Extension to Scheduled Areas) Act, 1996 (PESA)}** को उपयुक्त छूटों तथा संशोधनों सहित पांचवीं अनुसूची वाले क्षेत्रों में पंचायती राज के उपबंधों के विस्तार के लिए विधिक रूप दिया गया है।

छठी अनुसूची वाले क्षेत्र, पांचवीं अनुसूची वाले क्षत्रों से किस प्रकार भिन्न हैं?

- छठी अनुसूची **अधिक स्वायत्तता** प्रदान करती है।
  - इसके तहत अधिक शक्तियों को सौंपा गया है तथा इसमें शामिल क्षेत्रों को विभिन्न विषयों पर विधि निर्माण की शक्ति प्राप्त है। पांचवीं अनुसूची के अंतर्गत, जनजातीय सलाहकार परिषद (tribal advisory council) के पास केवल राज्य सरकारों के लिए परामर्शदायी शक्तियां हैं और वह भी केवल राज्यपाल द्वारा परिषद को भेजे गए मामलों पर। भूमि के हस्तांतरण से संबंधित मामले में, यह अपनी शक्तियों का उपयोग स्वयं कर सकती है।
- पांचवीं अनुसूची में शामिल परिषदें राज्य विधान सभा द्वारा सृजित हैं जबकि छठी अनुसूची में शामिल परिषदें संविधान द्वारा व्यवस्थित या निर्मित हैं।
- पांचवीं अनुसूची वाले क्षेत्रों के विपरीत इनके पास स्वयं के बजट निर्माण की वित्तीय शक्ति है।
- छठी अनुसूची वाले क्षेत्रों को विकास, स्वास्थ्य, शिक्षा, सड़कों आदि से संबंधित वित्तीय योजनाओं के लिए **भारत की संचित निधि से धन प्राप्त होता है।**

1.3. इनर लाइन परमिट (Inner Line Permit)

सुर्ख़ियों में क्यों?

हाल ही में, मणिपुर ने यात्रियों को इनर लाइन परमिट (ILP) प्रदान करने हेतु एक ऑनलाइन पोर्टल का शुभारंभ किया है।

ILP के बारे में

- यह एक **यात्रा दस्तावेज़** है, जो एक भारतीय नागरिक को ILP व्यवस्था के तहत संरक्षित राज्य में भ्रमण करने या रहने की अनुमति प्रदान करता है।
  - विदेशी पर्यटकों को इन राज्यों के पर्यटन स्थलों की यात्रा करने के लिए एक **संरक्षित क्षेत्र परमिट (Protected Area Permit: PAP)** की आवश्यकता होती है। हालांकि, यह घरेलू पर्यटकों हेतु आवश्यक ILP से भिन्न होता है।
- वर्तमान में यह प्रणाली पूर्वोत्तर भारत के चार राज्यों, यथा- **अरुणाचल प्रदेश, नागालैंड, मणिपुर** तथा **मिज़ोरम** में लागू है।
- यदि कोई भारतीय नागरिक इन राज्यों में से किसी का निवासी नहीं है तो, वह ILP के बिना इन राज्यों में प्रवेश नहीं कर सकता है और न ही वह ILP में निर्दिष्ट अवधि से अधिक समय तक इन राज्यों में निवास कर सकता है।

- इस प्रणाली की शुरुआत **बंगाल ईस्टर्न फ्रंटियर रेगुलेशन एक्ट, 1873** से हुई है, जिसकी सहायता से अंग्रेजों ने कुछ क्षेत्रों में अनधिकृत प्रवेश को प्रतिबंधित कर, ऐसे निर्दिष्ट क्षेत्रों में बाहरी लोगों के प्रवेश या अस्थायी निवास को विनियमित करने का कार्य किया था।
- हालांकि, इस व्यवस्था का उद्देश्य **"ब्रिटिश प्रजा"** (भारतीयों) को इन क्षेत्रों में व्यापार करने से रोकना तथा ब्रिटिश राजशाही के व्यावसायिक हितों को सुरक्षित करना था।
- वर्ष 1950 में, भारत सरकार द्वारा "ब्रिटिश प्रजा" को "भारत के नागरिक" शब्दावली के साथ प्रतिस्थापित कर दिया गया।
    - इस परिवर्तन का प्रमुख उद्देश्य अन्य भारतीय राज्यों से संबंधित लोगों से मूल निवासियों (indigenous people) के हितों की रक्षा कर स्थानीय चिंताओं का समाधान करना था।
- ILP को संबंधित **राज्य सरकार** द्वारा जारी किया जाता है।
- ILP पर यात्रा की तिथि अर्थात् अवधि निर्धारित करने के साथ ही राज्य में उन विशेष क्षेत्रों को भी निर्दिष्ट किया जाता है, जहाँ ILP धारक यात्रा कर सकता है।

विभिन्न राज्यों में ILP की स्थिति

- **मेघालय:** हाल ही में, मेघालय विधान सभा ने राज्य में ILP व्यवस्था को लागू करने के संबंध में एक संकल्प (resolution) को अंगीकृत किया।
    - नवंबर 2019 में, मेघालय मंत्रिमंडल ने **मेघालय निवासी संरक्षा और सुरक्षा अधिनियम (Meghalaya Residents Safety and Security Act: MRSSA), 2016** में संशोधन को मंजूरी प्रदान की, जिससे गैर-निवासी आगंतुकों के पंजीकरण संबंधी कानूनों का अधिनियमन किया जाएगा।
    - हालांकि, मेघालय सरकार ने इस कानून में संशोधन के पश्चात् भी यह स्पष्ट नहीं किया है कि आगंतुकों को राज्य के किस कानून का पालन करना होगा। आधिकारिक तौर पर, अब तक यह घोषित नहीं किया गया है कि यह ILP व्यवस्था की प्रतिकृति (replication) है अथवा नहीं।
- **असम:** असम में भी कुछ वर्गों द्वारा ILP को लागू करने की मांग की जा रही है।
    - **असोम जातीयवादी युवा छात्र परिषद** (नवयुवकों का एक संगठन) जैसे समूह संपूर्ण राज्य में ILP की मांग को लेकर विरोध प्रदर्शन आयोजित करते रहे हैं।
    - हाल ही में, असम के वित्त मंत्री ने टिप्पणी की है कि असम में ILP लागू नहीं होगा।
- **मणिपुर:** 1 जनवरी 2020 से मणिपुर में ILP व्यवस्था को लागू कर दिया गया है और यहाँ चार प्रकार के परमिट जारी किए जा रहे हैं - **अस्थायी, नियमित, विशेष** और **श्रम परमिट।**
    - पिछले वर्ष, **मणिपुर जन सुरक्षा विधेयक, 2018** (Manipur People's Protection Bill, 2018) को राज्य विधान सभा द्वारा सर्वसम्मति से पारित किया गया था।
    - इस विधेयक को पुरःस्थापित करने से पूर्व "मणिपुरी" लोगों को परिभाषित करने के संबंध में अनेक बार चर्चा की गई थी, जिसके उपरांत इसके परिभाषा के लिए निर्धारित वर्ष (कट-ऑफ ईयर) के रूप में वर्ष 1951 पर सहमति बनी है।

ILP के प्रभाव

- **आर्थिक प्रभाव:** ऐसी आशंकाएँ उत्पन्न हुई हैं कि इन पर्वतीय राज्यों में **'बाहरी लोगों'** के प्रवेश पर प्रतिबंध आरोपित करने से पर्यटन प्रभावित हो सकता है और स्थानीय अर्थव्यवस्था अपनी क्षमता का दोहन करने में असमर्थ हो सकती है।
- **त्रुटियां:** इन दस्तावेज़ों को जारी करने में मानवीय हस्तक्षेप की भूमिका को स्वीकार किया गया है, जिससे आगंतुकों को असुविधा होगी।
- **कुछ समुदायों के अधिकारहीन होने का जोखिम:** जैसे मेघालय में, जहां **गैर-आदिवासी जनसंख्या** का एक बड़ा हिस्सा अधिवासित है। गैर-आदिवासियों में यह भय बना हुआ है कि यदि ILP को लागू किया जाता है तो उनके हितों को महत्व नहीं दिया जाएगा।
    - इस भय में और अधिक वृद्धि हुई है, क्योंकि राज्य के **मूल व्यक्ति (indigenous person) की परिभाषा अस्पष्ट** है, जैसे- ऑल नागा स्टूडेंट एसोसिएशन मणिपुर (ANSAM) का मत है कि **मणिपुर** में ILP के दिशा-निर्देशों में **'प्रवासी कौन है और कौन नहीं',** इसकी परिभाषा उल्लिखित नहीं है।

VISION IAS

1.4. अनुच्छेद 370 (Article 370)

सुर्ख़ियों में क्यों?

अगस्त माह में **अनुच्छेद 370 और 35A** के उत्सादन तथा जम्मू और कश्मीर के प्रशासनिक पुनर्गठन का एक वर्ष पूर्ण हो गया।

पृष्ठभूमि

- **वर्ष 1948** में भारत सरकार ने पाकिस्तान के आक्रमण के विरूद्ध कश्मीर को सुरक्षा प्रदान करने के लिए कश्मीर के शासक के साथ विलय संधि पर हस्ताक्षर किए थे। विलय संधि पर हस्ताक्षर करने के उपरांत संविधान के **भाग XXI में अनुच्छेद 370** अंतर्विष्ट किया गया था। इस अनुच्छेद को **"अस्थायी, संक्रमणकालीन और विशेष प्रावधान"** घोषित किया गया था, जो जम्मू-कश्मीर (J&K) को विशेष दर्जा देने का प्रावधान करता था।
- इस अनुच्छेद के अनुसार, केंद्र को **रक्षा, विदेश मामलों, वित्त और संचार को छोड़कर** अन्य कानून लागू करने के लिए राज्य सरकार की सहमति की आवश्यकता होती थी।
- साथ ही, राज्य के निवासी अन्य भारतीय नागरिकों की तुलना में **नागरिकता, संपत्ति के स्वामित्व, पृथक दंड संहिता और मूल अधिकारों से संबंधित क़ानूनों** के एक पृथक समूह के अधीन शासित होते थे।
    - भारतीय संविधान का **अनुच्छेद 35A** जम्मू-कश्मीर की विधान सभा को राज्य के स्थायी निवासियों, उनके विशेषाधिकारों और अन्य अधिकारों को परिभाषित करने हेतु अधिकृत करता था।
- अगस्त 2019 में, भारत के राष्ट्रपति द्वारा **संविधान (जम्मू-कश्मीर में लागू) आदेश, 2019** प्रख्यापित किया गया, जिसमें यह उपबंध किया गया था कि भारतीय संविधान के प्रावधान जम्मू-कश्मीर में लागू होंगे।
- इसका प्रभावी अर्थ यह था कि जम्मू-कश्मीर के लिए पृथक संविधान का आधार निर्मित करने वाले सभी प्रावधान समाप्त हो गए हैं। इसके साथ ही, अनुच्छेद 35A भी स्वत: समाप्त हो गया।
- साथ ही, संसद द्वारा **जम्मू-कश्मीर पुनर्गठन अधिनियम, 2019** पारित किया गया, जिसके माध्यम से जम्मू-कश्मीर को दो संघ राज्य क्षेत्रों (UTs) में पुनर्गठित किया गया, यथा-
    - विधान सभा के साथ **जम्मू-कश्मीर** संघ राज्य क्षेत्र; तथा
    - विधान सभा रहित **लद्दाख** संघ संघ राज्य क्षेत्र।

उच्चतम न्यायालय में अनुच्छेद 370 के निरसन से संबंधित याचिकाएं

- **अनुच्छेद 370 के निरसन (या उत्सादन) को चुनौती:**
  - संविधान के **अनुच्छेद 370** के उत्सादन को चुनौती देने वाली याचिकाएं **उच्चतम न्यायालय** में लंबित हैं।
  - इन पर अभी तक कोई महत्वपूर्ण सुनवाई नहीं हुई है।
- **लॉकडाउन के विरूद्ध और 4G सेवाओं की पुनर्स्थापना करने के लिए याचिकाएं:**
  - इंटरनेट सेवाओं और संचार प्रणाली पर आरोपित प्रतिबंधों के विरूद्ध उच्चतम न्यायालय में याचिकाएं दायर की गई हैं।
  - **उच्चतम न्यायालय** ने इंटरनेट तक पहुंच को मूल अधिकार घोषित किया है तथा सरकार को ऐसे प्रतिबंधों की समीक्षा करने और **4G** सेवाओं की पुनर्स्थापना पर विचार करने का निर्देश दिया है।

अनुच्छेद 370 के निरसन के बाद हुए विकासक्रम का विश्लेषण

विकासक्रम	विश्लेषण
जम्मू-कश्मीर क्षेत्र में परिवर्तनकारी विकास के लिए केंद्र सरकार द्वारा उठाए गए कदम: • जनवरी 2020 में, केंद्र सरकार ने जम्मू-कश्मीर में विकास कार्यों के लिए **80,000 करोड़ रुपये** का पैकेज प्रदान किया था।	• इस क्षेत्र के विकास से निवेश संवर्धन, औद्योगिक विकास को बढ़ावा देने, रोज़गार के अवसर सृजित करने, आतंकवाद कम करने और इसकी अर्थव्यवस्था सुदृढ़ करने संभावना में बढ़ोतरी होगी।
विधायी परिवर्तन: पूर्ववर्ती जम्मू-कश्मीर राज्य के **354** राज्य क़ानूनों में से अधिकांश क़ानूनों को निरस्त या संशोधित किया गया है, जबकि **170** केंद्रीय कानून लागू किए गए हैं।	भारत सरकार द्वारा पारित किए गए कई महत्वपूर्ण विधेयक अब जम्मू-कश्मीर में लागू हैं: • **शासन में पारदर्शिता और जवाबदेही से संबंधित कानून:** जैसे- सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005 और व्हिसल ब्लोअर्स प्रोटेक्शन एक्ट, 2014
सरकार ने इस क्षेत्र में अनेक केंद्रीय योजनाएं आरंभ की हैं।	• जम्मू-कश्मीर में रहने वाले नागरिक अब **आयुष्मान भारत योजना, अटल पेंशन योजना, पी.एम.- किसान (PM-KISAN), प्रधान मंत्री जन धन योजना और स्टैंड-अप इंडिया** जैसी केंद्रीय योजनाओं का लाभ उठा सकते हैं। • **राष्ट्रीय केसर मिशन** के अंतर्गत J&K में केसर की खेती के लिए 3,500 हेक्टेयर से अधिक भूमि का कायाकल्प किया जा रहा है।
संघ राज्य क्षेत्र घोषित किए जाने के उपरांत जम्मू-कश्मीर और लद्दाख में प्रशासनिक परिवर्तन	• विभिन्न विभागों में **संरचनात्मक सुधार** किए गए हैं। साथ ही, परस्पर अतिव्यापन करने वाले कार्यों का विलय कर दिया गया है या आकार घटा दिया गया है।
अनुच्छेद 35A निरस्त किए जाने के पश्चात अधिवास क़ानूनों में शिथिलता: • संसद ने जम्मू-कश्मीर के अधिवासियों को उन लोगों के रूप में पुनर्परिभाषित किया है, जो इस संघ राज्य क्षेत्र में 15 वर्ष की अवधि तक निवासी रहे हैं या जिन्होंने जम्मू-कश्मीर में पंजीकृत शैक्षिक संस्थान में सात वर्ष की अवधि	• **अधिवास कानून में संशोधन से अपेक्षित लाभ:** ○ भूमि की खरीद में सुगमता से राज्य में और अधिक निवेशक आकर्षित होंगे, जिससे जम्मू-कश्मीर की आर्थिक संरचना को बढ़ावा मिलेगा। ○ जम्मू-कश्मीर में नियुक्त केंद्र सरकार के कर्मचारी अब शेष देश की भांति ही लाभ उठा सकते हैं।

VISION IAS

तक अध्ययन किया है और दसवीं/बारहवीं कक्षा की परीक्षा में सम्मिलित हुए हैं। • अधिवासियों में अब केंद्र सरकार या केंद्र सरकार के सहायता प्राप्त संगठनों, एवं PSU के उन कर्मचारियों के बच्चे भी सम्मिलित हैं जो 10 वर्ष की अवधि तक जम्मू-कश्मीर में सेवारत रहे हैं। • जम्मू-कश्मीर में **4 लाख** से अधिक लोगों को नए अधिवास प्रमाण-पत्र जारी किए गए हैं।	
• **जम्मू-कश्मीर क्षेत्र में हिंसक विरोध प्रदर्शन रोकने और शांति बनाए रखने के लिए कई कदम उठाए गए हैं:** कुछ क्षेत्रों में लगे कर्फ्यू में विस्तार किया गया है, राजनीतिक बंदियों की निरंतर नजरबंदी जारी है आदि।	• लॉकडाउन तथा संचार एवं इंटरनेट पर प्रतिबंध जैसे कठोर सुरक्षा उपायों का प्रभाव: रोजगार की हानि, स्कूलों और कॉलेजों का बंद होना आदि।
राजनयिक और अंतर्राष्ट्रीय घटनाक्रम: • पाकिस्तान ने कश्मीर में हुए इन परिवर्तनों को ऐसे "मानवीय संकट" के रूप में चित्रित किया है, और कहा है कि इस क्षेत्र की स्थिरता को खतरा उत्पन्न हो गया है। • **तुर्की और मलेशिया** जैसे देशों ने संयुक्त राष्ट्र महासभा में जम्मू-कश्मीर घाटी में लगाए गए प्रतिबंधों की आलोचना की थी। • अमेरिका, ब्रिटेन और अन्य यूरोपीय देशों में भी कुछ वर्गों द्वारा **कश्मीर में मानवाधिकारों के उल्लंघन** के संबंध में चिंताएं व्यक्त की गई थीं।	• जहां पाकिस्तान ने UNSC परिचर्चा के माध्यम से कश्मीर मुद्दे का अंतर्राष्ट्रीयकरण करने का प्रयास किया, वही यह बैठक अत्यल्प सदस्यीय एवं अनौपचारिक थी और जिसका कोई विशेष परिणाम भी नहीं निकला। ○ लगभग सभी देशों ने इस तथ्य को रेखांकित किया कि जम्मू-कश्मीर द्विपक्षीय मुद्दा है और इसे परिषद के विशेष ध्यान एवं समय की आवश्यकता नहीं है।

निष्कर्ष

- भारतीय संविधान के अनुच्छेद 370 के अंतर्गत जम्मू-कश्मीर राज्य को प्रदान किए गए विशेष दर्जे के निरसन ने शांति और प्रगति का एक महत्वाकांक्षी मार्ग प्रशस्त किया है, जिससे यह संपूर्ण क्षेत्र समावेशी विकास और पारदर्शी शासन के एक नए युग में प्रवेश करेगा।
- विकेंद्रीकृत स्थानीय निकायों का विकास, युवाओं में विश्वास बहाली के उपाय और चरणबद्ध तरीके से इंटरनेट सेवाओं की पुनर्स्थापना से क्षेत्र के प्रतिभागितापूर्ण सामाजिक-आर्थिक विकास में आगे और सहायता मिल सकती है।

1.5. अन्य राज्यों के लिए विशेष उपबंध- भारत का विषम संघवाद (Specific Provisions for Other States- India's Asymmetric Federalism)

सुर्ख़ियों में क्यों?

जम्मू-कश्मीर के विशेष दर्जे में परिवर्तन से अन्य राज्यों को प्राप्त विशेष उपबंधों पर ध्यान केंद्रित हुआ है।

असममित (विषम) संघवाद क्या है?

- संघीय व्यवस्था में घटक इकाइयों की पहचान क्षेत्र या नृजातीयता के आधार पर की जाती है तथा विभिन्न रूपों में स्वायत्तता या प्रशासनिक और विधायी शक्तियों को कुछ स्तर प्रदान किया जाता है।
- "असममित संघवाद" का अर्थ परिसंघ का गठन करने वाली इकाइयों के मध्य राजनीतिक, प्रशासनिक और राजकोषीय व्यवस्थाओं के स्तरों में असमान शक्तियों एवं संबंधों के आधार पर संघवाद के रूप में समझा जाता है।

VISION IAS

भारत में व्यवहार में असममित संघवाद

- **कुछ राज्यों के लिए विशेष प्रावधान:** राज्यों पर लागू विशेष उपबंध मुख्य रूप से राज्यपालों को कुछ विशेष उत्तरदायित्वों का निर्वहन करने के लिए सशक्त बनाते हैं। उदाहरणार्थ, अनुच्छेद 371 से 371J।
- **संघ राज्यक्षेत्र:** इन्हें प्रत्यक्ष रूप से केंद्र द्वारा प्रशासित किया जाता है। साथ ही, भारत में कुछ (वर्तमान में दो) संघ राज्यक्षेत्रों में विधायिकाओं का गठन किया गया है, जबकि कुछ विधायिका रहित संघ राज्यक्षेत्र भी विद्यमान हैं।
- पांचवीं और छठी अनुसूची के अंतर्गत **जनजातीय क्षेत्र और अनुसूचित क्षेत्र।**
- **आर्थिक विषमता:** उदाहरण के लिए, स्थानीय निकायों, राज्य आपदा राहत कोष को वित्त प्रदान करने वाले और करों के हस्तांतरण के उपरांत राज्यों को किसी भी राजस्व हानि की प्रतिपूर्ति करने वाले वित्त आयोग के अनुदान।

भारत के असममित संघवाद के कारण

- **आर्थिक कारण:** आर्थिक अवसरों का विस्तार करना और संघ के बड़े एवं अधिक शक्तिशाली राज्यों द्वारा शोषण से सुरक्षा प्रदान करना आदि विशेष दर्जे की मांग के विशुद्ध प्रेरक कारण हो सकते हैं। उदाहरण के लिए, विशेष श्रेणी और गैर-विशेष श्रेणी के दर्जे वाले राज्यों का पूर्ववर्ती भेद।
- **राजनीतिक कारक और समूहगत पहचान का परिरक्षण करना:** पांचवीं और छठी अनुसूचियां देश में 'अनुसूचित जनजातियों' द्वारा अधिवासित क्षेत्रों एवं 'जनजातीय क्षेत्रों' में विशेष शासन उपायों का प्रावधान करती हैं। इनका उद्देश्य देश में अनुसूचित जनजातियों को **अपनी स्वायत्तता प्राप्त करने तथा अपनी भूमि, अर्थव्यवस्था और समुदाय का परिरक्षण करने** के लिए सक्षम बनाकर उनकी रक्षा करना है।
- **सांस्कृतिक कारक:** अनुच्छेद 371 से 371J तक विभिन्न धाराएं शामिल की गई हैं, जो विभिन्न राज्यों को विशेष शक्तियां प्रदान करती हैं। इन विशेष उपबंधों में **रूढ़िजन्य विधि, धार्मिक और सामाजिक प्रथाओं के प्रति सम्मान तथा राज्य में गैर-निवासियों के प्रवास पर प्रतिबंध** सम्मिलित हैं। उदाहरण के लिए अनुच्छेद 371G में मिजोरम में मिजो की धार्मिक और सामाजिक प्रथाओं तथा उनकी रूढ़िजन्य विधि एवं प्रक्रियाओं का परिरक्षण करने के लिए विशेष प्रावधान अंतर्विष्ट हैं।
- **ऐतिहासिक:** अंग्रेजों द्वारा भारतीय क्षेत्रों को अपने शासन के अधीन और बाद में भारतीय संघ में एकीकृत करने की प्रक्रिया ने भी भारत की इस विषम व्यवस्था को आकार प्रदान किया है। उदाहरण के लिए, जम्मू-कश्मीर के लिए पूर्ववर्ती अनुच्छेद 370।
- **प्रशासनिक और अन्य कारक:** संघ राज्यक्षेत्रों का गठन इसलिए किया गया, क्योंकि इनका आकार इतना कम था कि इन्हें स्वतंत्र राज्य नहीं बनाया जा सकता था या सांस्कृतिक भिन्नताओं के कारण उन्हें उनके पड़ोसी राज्यों में नहीं मिलाया जा सकता था।

असममित संघवाद की आलोचना

- **स्वेच्छाचारिता: अल्पकालिक राजनीतिक लाभ प्राप्ति या प्रशासनिक स्वायत्तता हेतु** स्थापित विशेष व्यवस्थाएं संस्थानों की क्षमता ह्रास या पतन का कारण बन सकती हैं। इस प्रकार की व्यवस्थाओं का परिणाम मनमाने ढंग से विशेष कृपा प्रदान करना हो सकता है। साथ ही ऐसी व्यवस्थाएं दीर्घकाल में संघ में वैमनस्य और अस्थिरता उत्पन्न कर सकती हैं।
- **राजनीतिक गत्यात्मकता द्वारा उत्पन्न:** केंद्रीकृत संघ में**, केंद्र सरकार के पास इकाइयों के मध्य भेदभाव के अनेक विषय विद्यमान होते हैं।** जब केंद्र में सरकार कमजोर होती है और इकाइयां केंद्र पर महत्वपूर्ण नियंत्रण रखती हैं तो भेदभाव की संभावना विशेष रूप से प्रबल हो जाती है। उदाहरणार्थ सशक्त क्षेत्रीय राजनीतिक दल वाली गठबंधन सरकार।
- **तनाव का स्रोत:** ऐसी युक्तियों के उपयोग से उन **क्षेत्रों के मध्य उभरने वाले तनाव के नए रूपों की संभावनाएं बढ़** जाती हैं, जिनका विषम उपायों के माध्यम से समाधान नहीं किया जा सकता है। उदाहरण के लिए, पूर्वोत्तर राज्यों में विषम सिद्धांतों के उपयोग ने राज्य द्वारा मान्यता प्राप्त क्षेत्रों के दायरे से बाहर रह गए समूहों द्वारा उठाए गए स्वायत्तता के व्यापक दावों का मार्ग प्रशस्त किया है।

VISION IAS

- **इनकी समाप्ति अत्यधिक कठिन होती है:** उदाहरण के लिए, अनुच्छेद 370 केवल एक अस्थायी प्रावधान था, जो सैन्य संघर्ष के समाधान से पूर्व भारत और राज्य के मध्य शांतिपूर्ण संबंधों की स्थापना हेतु निर्मित किया गया था। हालांकि, 7 दशकों तक जारी रहने के पश्चात् भी इसे कठिनाईपूर्वक ही निरस्त किया जा सका है।

निष्कर्ष

भारत के अनुभव से यह ज्ञात होता है कि पारदर्शी और नियम आधारित असममित (विषम) संघवाद जैसा कि भारत में विद्यमान है, सांस्कृतिक रूप से विविध समूहों की सुरक्षा की पूर्वापेक्षा है। पारदर्शी और नियम आधारित विषमता बहुराष्ट्रीय संघों में लोकतांत्रिक समेकन से संबद्ध है। यह केवल एक एकीकृत ढांचे के भीतर विविध समूहों के हितों को समायोजित करने का एक साधन हो सकता है।

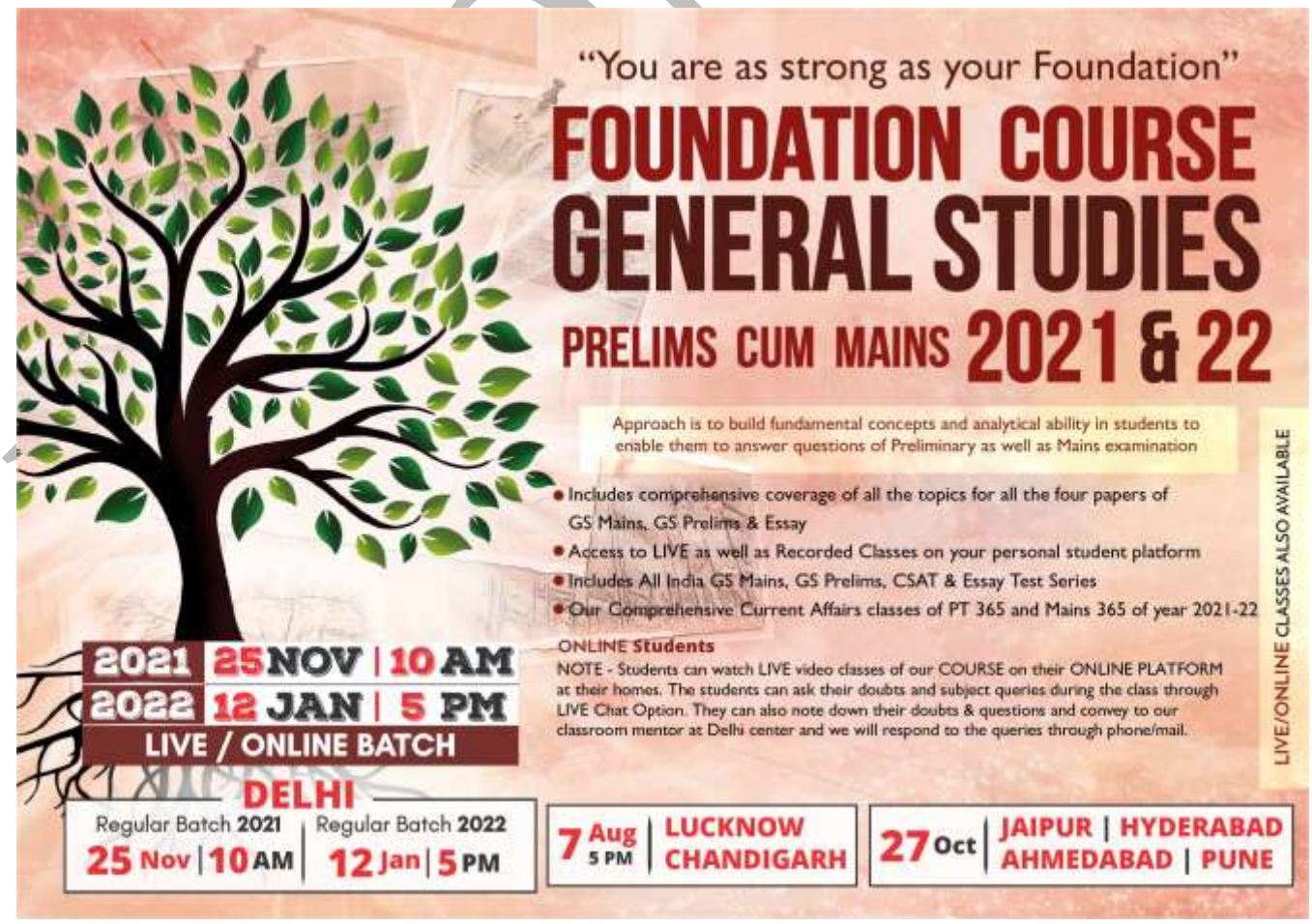

2. संवैधानिक प्रावधानों से संबंधित मुद्दे (Issues Related to Constitutional Provisions)

2.1. अधिकार (Rights)

2.1.1. इंटरनेट एक मूलभूत अधिकार (Internet as Basic Right)

सुर्ख़ियों में क्यों?

हाल ही में, **फहीमा शिरिन बनाम केरल राज्य वाद** में, केरल उच्च न्यायालय द्वारा इंटरनेट तक पहुँच के अधिकार (right to Internet access) को मूल अधिकार घोषित किया गया है।

मानवाधिकार के रूप में इंटरनेट का अधिकार

- इंटरनेट तक पहुँच का अधिकार यह उपबंधित करता है कि **अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता एवं विचार व्यक्त करने तथा अन्य मूलभूत मानवाधिकारों का लाभ उठाने और इनका उपयोग करने के क्रम में सभी लोग इंटरनेट तक पहुँच प्राप्त करने में अवश्य सक्षम हों।**
- संयुक्त राष्ट्र मानवाधिकार आयोग (UNHRC) द्वारा एक गैर-बाध्यकारी प्रस्ताव (resolution) पारित किया गया है, जो इंटरनेट तक पहुँच को प्रभावी रूप से एक मूलभूत मानवाधिकार घोषित करता है।
- इसे **सतत विकास लक्ष्यों (Sustainable Development Goals: SDGs)** के अंतर्गत अभिस्वीकृति प्रदान की गयी है। **SDG-9** सूचना और संचार प्रौद्योगिकी तक पहुंच में उल्लेखनीय वृद्धि को लक्षित करता है तथा वर्ष 2020 तक अल्प विकसित देशों में इंटरनेट तक सार्वभौमिक एवं वहनीय पहुंच प्रदान करने का प्रयास करता है।
- **साबू मैथ्यू जॉर्ज बनाम भारत संघ एवं अन्य वाद (वर्ष 2018) में उच्चतम न्यायालय ने यह घोषणा की थी कि इंटरनेट तक पहुँच का अधिकार एक आधारभूत मूल अधिकार है,** जिसे "अवैध गतिविधियों हेतु इसके उपयोग" के अतिरिक्त किसी भी स्थिति में कम/संक्षिप्त नहीं किया जा सकता है।

मानवाधिकारों की तीन पीढियां

- **प्रथम पीढ़ी:** "नागरिक-राजनीतिक" अधिकार, जो स्वतंत्रता और राजनीतिक जीवन में भागीदारी से संबंधित हैं।
- **द्वितीय पीढ़ी:** "सामाजिक-आर्थिक" मानवाधिकार, समान परिस्थितियों और उपचार की गारंटी प्रदान करते हैं।
- **तृतीय पीढ़ी:** लोगों और समूहों के "सामूहिक विकासात्मक" अधिकार, जो "बंधुता" के सिद्धांत के आधार पर राज्य के विरुद्ध प्रदान किए गए हैं।

इंटरनेट शटडाउन (प्रतिबंध) पर उच्चतम न्यायालय का अवलोकन

- इंटरनेट के माध्यम से वाक्-स्वातंत्र्य और अभिव्यक्ति-स्वातंत्र्य संविधान के अनुच्छेद 19(1)(a) के तहत एक मूल अधिकार है।
- इंटरनेट के माध्यम से व्यापार और वाणिज्य की स्वतंत्रता भी अनुच्छेद 19(1)(g) के तहत संवैधानिक रूप से संरक्षित अधिकार है।
- इंटरनेट पर प्रतिबंध, अनुच्छेद 19(2) के तहत शामिल आनुपातिकता के सिद्धांतों (principles of proportionality) के अनुरूप होने चाहिए।
    - उल्लेखनीय है कि प्रशासनिक कार्रवाई के मामलों में न्यायिक पुनर्विलोकन के लिए एक आधार के तौर पर विशिष्ट रूप से आनुपातिकता के सिद्धांत का उपयोग किया जाता है।
- अनिश्चित काल के लिए इंटरनेट का निलंबन स्वीकृति योग्य नहीं है। इसे केवल एक उचित अवधि के लिए ही प्रतिबंधित किया जा सकता है तथा साथ ही, इसकी आवधिक समीक्षा भी की जानी चाहिए। सरकार को इस प्रकार के निषेधाज्ञा (prohibition) से संबंधित सभी आदेशों को प्रकाशित करना चाहिए ताकि प्रभावित व्यक्ति इसे चुनौती देने में सक्षम हो सके।
- धारा 144 के तहत प्राप्त शक्ति का उपयोग किसी भी विचार या शिकायत की वैध अभिव्यक्ति या लोकतांत्रिक अधिकार के उपयोग को प्रतिबंधित करने हेतु नहीं किया जा सकता है।

इंटरनेट शटडाउन (प्रतिबंध) पर विधायी प्रावधान

- इंटरनेट सेवाओं के निलंबन के संबंध में **सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम, 2000; दंड प्रक्रिया संहिता (CrPC), 1973** और

VISION IAS

भारतीय तार अधिनियम, 1885 (The Indian Telegraph Act, 1885) के तहत कार्यवाही की जाती है।

- वर्ष 2017 से पूर्व, CrPC की धारा 144 के तहत इंटरनेट के निलंबन के आदेश जारी किए जाते थे। लेकिन, वर्ष 2017 में, केंद्र सरकार ने इंटरनेट के निलंबन को शासित करने के लिए **टेलीग्राफ अधिनियम** के तहत **'दूरसंचार सेवाओं का अस्थायी निलंबन (लोक आपात या लोक सुरक्षा) नियम, 2017'** को अधिसूचित किया।

यूनाइटेड नेशन रिजोल्यूशन ऑन इंटरनेट शटडाउन

- वर्ष 2016 में, संयुक्त राष्ट्र मानवाधिकार परिषद द्वारा एक गैर-बाध्यकारी संकल्प का प्रकाशन किया गया था। यह प्रस्ताव इसकी पुष्टि करता है कि "लोगों को प्राप्त ऑफ़लाइन अधिकारों को ऑनलाइन रूप से भी संरक्षित किया जाना चाहिए"।

इंटरनेट का अधिकार अन्य अधिकारों से किस प्रकार संबद्ध है?

- **शिक्षा का अधिकार:** इंटरनेट ने छात्रों को ज्ञान प्राप्त करने हेतु एक अवसर प्रदान किया है।
- **वाक्-स्वातंत्र्य का अधिकार:** इंटरनेट, अभिव्यक्ति का एक सशक्त माध्यम बन गया है। संयुक्त राष्ट्र के एक प्रस्ताव में कहा गया है कि जिस प्रकार लोगों को ऑफ़लाइन अधिकार प्राप्त हैं, उसी प्रकार उनके ऑनलाइन अधिकारों को भी संरक्षित किया जाना चाहिए।
- **विकास का अधिकार: विकास का अधिकार एक तीसरी पीढ़ी का अधिकार है** जिसे संयुक्त राष्ट्र महासभा द्वारा मान्यता प्रदान की गई है। इंटरनेट तक पहुँच से आर्थिक विकास के अवसरों में और अधिक वृद्धि होगी।
- **सम्मेलन की स्वतंत्रता का अधिकार:** विरोध आंदोलनों और प्रदर्शन का संचालन करने के लिए इंटरनेट एक उपयोगी उपकरण बन गया है। ट्विटर और फेसबुक जैसे इंटरनेट एवं सोशल मीडिया नेटवर्क ने अरब स्प्रिंग जैसी राजनीतिक घटनाओं के लिए ऑनलाइन रूप से लोगों को एकजुट करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी।

मानव अधिकार के रूप में इंटरनेट तक पहुँच के अधिकार से संबंधित मुद्दे

- **मानवाधिकार के तौर पर अर्ह नहीं:** कई आलोचकों का तर्क है कि प्रौद्योगिकी, अधिकारों को सक्षम बनाने में सहायक हो सकती है, न कि यह स्वयं एक अधिकार है।
- **विकासशील राष्ट्र के लिए व्यवहार्यता:** विकासशील और अल्प विकसित देशों द्वारा सामना की जा रही अन्य प्राथमिकताओं को देखते हुए इंटरनेट तक पहुँच का अधिकार प्रदान करना एक विवाद का विषय बना हुआ है।
- **डिजिटल विभाजन का मुद्दा:** भारत में, वृहत डिजिटल विभाजन विद्यमान है। इस प्रकार, अवसंरचनात्मक अंतराल, डिजिटल साक्षरता की कमी और पहुंच के अभाव के कारण इंटरनेट को एक अधिकार के रूप में स्वीकार्य करना व्यवहारिक नहीं होगा।
- **सहिष्णुता और शिष्टता के प्रोत्साहन के साथ स्वतंत्र अभिव्यक्ति की रक्षा करना:** प्रत्येक व्यक्ति अपने विचार ऑनलाइन व्यक्त कर सकता है। घृणास्पद या अपमानजनक शब्द शत्रुता की भावना, विभाजन तथा हिंसा में वृद्धि कर सकते हैं।
- **इंटरनेट के दुरुपयोग की संभावनाओं** को देखते हुए कई मुद्दे उत्पन्न हो गए हैं। उदाहरण के लिए, आतंकवादी एवं चरमपंथी समूहों द्वारा अपने सदस्यों की भर्ती करने और आतंकी हमलों का संचालन करने हेतु इंटरनेट का उपयोग किया जा रहा है। इसके अतिरिक्त, डेटा चोरी और निजता से संबंधित मुद्दे भी विद्यमान हैं।

निष्कर्ष

विश्व का तीव्र गति से डिजिटलीकरण हो रहा है, ऐसी स्थिति में यदि हाशिए पर स्थित लोगों को इंटरनेट तक पहुंच प्राप्त नहीं हो पाएगी तो वे हाशिए पर ही बने रहेंगे। अतः, सरकार द्वारा इंटरनेट तक निःशुल्क एवं समान पहुंच सुनिश्चित करने हेतु तत्काल उपाय किए जाने चाहिए।

2.1.2. राइट टू बी फॉरगॉटन (Right to be Forgotten)

सुर्ख़ियो में क्यों?

हाल ही में, यूरोपियन कोर्ट ऑफ जस्टिस (ECJ) द्वारा निर्णय दिया गया कि पर **राइट टू बी फॉरगॉटन** संबंधी यूरोपीय संघ का विनियमन **{सामान्य डेटा संरक्षण विनियमन (General Data Protection Regulation: GDPR)}** इसकी सीमाओं से बाहर लागू नहीं होगा।

सामान्य डेटा संरक्षण विनियमन (General Data Protection Regulation: GDPR) और राइट टू बी फॉरगॉटेन

- GDPR में यह उल्लेख है कि व्यक्ति के पास किसी भी प्रकार के अनुचित विलंब के बिना स्वयं से संबंधित व्यक्तिगत डेटा को नियंत्रक (controller) के पास से हटाने (विलोपन) का अधिकार होगा और साथ ही, नियंत्रक के पास व्यक्तिगत डेटा को विलोपित करने का

VISION IAS

दायित्व होगा।

- इसमें उन परिस्थितियों को रेखांकित किया गया है जिसके अंतर्गत यूरोपीय संघ (EU) के नागरिक छह शर्तों के तहत इस अधिकार का उपयोग कर सकते हैं, जिसमें डेटा (या यदि डेटा उस उद्देश्य के लिए लम्बे समय तक प्रासंगिक नहीं है जिसके लिए इसे एकत्र किया गया था) के उपयोग करने संबंधी प्रदत्त सहमति को वापस लेना भी शामिल है।

"राइट टू बी फॉरगॉटन (RTF)" के बारे में

- यह इंटरनेट पर भ्रामक, निन्दनीय, अप्रासंगिक और अप्रचलित व्यक्तिगत सूचनाओं के प्रकटीकरण को सीमित करने, असंबद्ध करने, हटाने या सुधार करने संबंधी व्यक्ति के अधिकारों को संदर्भित करता है।
- इस प्रकार का प्रकटीकरण, डेटा उपयोगकर्ता (data fiduciary) द्वारा इस डेटा के अवैध उपयोग का परिणाम हो भी सकता है अथवा नहीं भी।
- RTF की उत्पत्ति फ्रांसीसी न्यायशास्त्र के 'राईट टू ओब्लिवियन (right to oblivion)' से हुई है।
  - पूर्व अपराधियों (जो अपने अपराध की सजा काट चुके हों) द्वारा उनके अपराध और परिणामी सजा के संबंध में तथ्यों के प्रकाशन पर आपत्ति व्यक्त करने हेतु इस अधिकार का उपयोग किया जाता है।

भारत में राइट टू बी फॉरगॉटन (RTF)

- वर्तमान में, राइट टू बी फॉरगॉटन भारत में पूर्णतया स्थापित नहीं है।
- **व्यक्तिगत डेटा संरक्षण विधेयक, 2018** (Personal Data Protection Bill, 2018) का मसौदा सीमित तौर पर RTF का अधिकार प्रदान करता है।
  - GDPR के विपरीत, व्यक्तिगत डेटा संरक्षण विधेयक, 2018 व्यक्तिगत डेटा के विलोपन के बजाए केवल व्यक्तिगत डेटा के निरंतर प्रकटीकरण पर प्रतिबंध आरोपित करने का प्रावधान करता है।
    - इस अधिकार का प्रयोग करने के आधारों में ऐसे मामले शामिल हैं जहाँ व्यक्तिगत डेटा के प्रकटीकरण ने उस उद्देश्य की पूर्ति की है जिसके लिए इसे संग्रहित किया गया था अथवा जिसे संग्रहित रखने की अब आवश्यकता नहीं है। इसका निर्धारण सर्वप्रथम एक न्यायनिर्णायक अधिकारी (Adjudicating Officer) द्वारा किया जाना चाहिए।
    - न्यायनिर्णायक अधिकारी को यह भी सुनिश्चित करना होता है कि राइट टू बी फॉरगॉटन, किसी भी नागरिक के वाक् एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के अधिकार तथा सूचना के अधिकार का अधिरोहण (उल्लंघन) करता है अथवा नहीं।
- वर्ष 2017 में, दो पृथक भारतीय उच्च न्यायालयों ने इस मुद्दे पर विपरित निर्णय दिए।
  - गुजरात उच्च न्यायालय के समक्ष इससे संबद्ध प्रथम वाद में, याचिकाकर्ता ने एक मामले में रिपोर्ट न करने योग्य एक निर्णय के ऑनलाइन प्रकाशन पर रोक लगाने की मांग की थी, जहां याचिकाकर्ता को गैर-इरादतन हत्या के अपराध से दोषमुक्त कर दिया गया था।
  - कर्नाटक उच्च न्यायालय ने सामान्य रूप से महिलाओं से संबंधित संवेदनशील मामलों में "राइट टू बी फॉरगॉटन" को संदर्भित करते हुए अपने एक निर्णय से व्यक्तिगत विवरणों को हटाने का आदेश दिया था।

राइट टू बी फॉरगॉटन से संबंधित मुद्दे

- **जहां लोक हित में सूचना अधिक महत्वपूर्ण होती है, वहां संघर्ष की स्थिति:** यौन उत्पीड़न जैसे गंभीर अपराधों के मामले में।
- **वाक् एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के विरुद्ध:** पत्रकारिता से संबंधित आदि।
- **क्रियान्वयन संबंधी चुनौतियाँ:** इंटरनेट से पोर्नोग्राफिक वेबसाइट्स या टोरेंट साइट्स को प्रतिबंधित करने या हटाने में
- **जटिल प्रक्रिया:** राइट टू बी फॉरगॉटन की बढ़ती मान्यता के साथ, सर्च इंजनों को सूचनाओं के हटाए जाने या असंबद्ध (delinking) करने से संबंधित प्राप्त होने वाले अनुरोधों की संख्या में केवल वृद्धि होने की संभावना है, जिससे मैन्युअल (व्यक्ति द्वारा) रूप से ऐसे अनुरोधों की जांच करना अत्यंत कठिन और जटिल हो जाता है।
- **अधिकार का दुरुपयोग:** इससे सर्च इंजनों को सतर्कतापूर्वक कार्य करने में बाधा आएगी तथा नियमों के गैर-अनुपालन की स्थिति में कानूनी चुनौतियों का सामना करने के बजाए, उन्हें लोगों द्वारा किए गए संबंधित अनुरोधों की जांच में समय व्यतीत करना पड़ सकता है।

निजता का अधिकार बनाम राइट टू बी फॉरगॉटन बनाम सूचना का अधिकार

- राइट टू बी फॉरगॉटन को लागू करने में सबसे बड़ी चुनौती मानहानि और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के मध्य असंतुलन (ट्रेड-ऑफ) का होना है।

VISION IAS

- राइट टू बी फॉरगॉटन एक निरपेक्ष अधिकार नहीं हो सकता है और इस पर युक्तियुक्त प्रतिबंध आरोपित किए जा सकते हैं।
- राइट टू बी फॉरगॉटन, निजता के अधिकार की परिधि में शामिल है, जिसे भारतीय संविधान के अनुच्छेद 19(1)(a) - वाक् एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता - के तहत संरक्षण प्राप्त है।
- यदि किसी सूचना का संबंध लोक हित से है, तो सूचना के अधिकार को निजता के अधिकारों पर वरीयता प्रदान की जाएगी।
- राइट टू बी फॉरगॉटन को लागू करते समय, वाक् एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, लोक हित और व्यक्तिगत निजता के अधिकार के मध्य उचित संतुलन स्थापित होना चाहिए।
- इन परस्पर विरोधी अधिकारों के मध्य संतुलन स्थापित करने हेतु, न्यायपालिका द्वारा एक ऐसी प्रणाली के क्रियान्वयन पर विचार किया जा सकता है, जहां याचिकाकर्ताओं की व्यक्तिगत सूचना, जैसे- नाम, पता आदि को विशेष रूप से व्यक्तिगत विवादों में रिपोर्ट किए जाने योग्य निर्णयों/आदेशों से संशोधित कर दिया जाता है।
- अतीत में न्यायालयों द्वारा, बलात्कार या चिकित्सा-विधिक (मेडिको-लीगल) के कई मामलों में निजता का सम्मान करने के लिए पक्षकारों की पहचान को प्रकाशित नहीं किया गया था।

आगे की राह

- अभी तक, इस संबंध में स्पष्ट व्याख्या नहीं की गई है कि भारतीय न्यायालयों द्वारा राइट टू बी फॉरगॉटन को किस प्रकार लागू किया जाएगा। वर्तमान में, यह एक नई न्यायिक अवधारणा है जिसे अर्थपूर्ण बनाने हेतु इसके संबंध में परिचर्चा और विश्लेषण किए जाने की आवश्यकता है।
- इन कठिनाइयों के बावजूद, विशेषज्ञों का मानना है कि भारत में इस प्रकार के प्रावधान व्यक्तिगत डेटा का उपयोग करने वाली कंपनियों की जवाबदेहिता को सुनिश्चित करेंगे तथा इनके द्वारा सूचना को एकत्र, उपयोग और साझा करने के उपायों की समीक्षा की जा सकती है।

2.1.3. संपत्ति का अधिकार (Right to Property)

सुर्ख़ियों में क्यों?

हाल ही में, उच्चतम न्यायालय ने यह दोहराया है कि "किसी व्यक्ति को विधि की सम्यक् प्रक्रिया के बिना उसकी निजी संपत्ति से बलपूर्वक निष्कासित करना मानवाधिकारों का उल्लंघन है।"

मानवाधिकार के रूप में संपत्ति का अधिकार

- कई मामलों में, भारत के उच्चतम न्यायालय ने माना है कि संपत्ति का अधिकार केवल एक **वैधानिक अधिकार** नहीं है, बल्कि यह एक मानवाधिकार भी है।
- **मानवाधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा, 1948** की धारा 17 (i) और (ii) के तहत, संपत्ति के अधिकार को मान्यता प्रदान की गई है। इनमें प्रावधान किए गए हैं कि:
  - प्रत्येक व्यक्ति को एकल या साझी संपत्ति रखने का अधिकार प्राप्त है; और
  - किसी भी व्यक्ति को उसकी संपत्ति से मनमाने ढंग से वंचित नहीं किया जाएगा।
- **महत्व:**
  - यह राज्य की मनमानी कार्यवाही के विरुद्ध सुरक्षा प्रदान करता है;
  - संपत्ति को आत्मरक्षा के साधन के रूप में उचित महत्व देता है; तथा
  - लोगों को उद्यमी बनने में सक्षम बनाता है।

भारत में संपत्ति के अधिकार का उद्भव

- मूलतः संविधान के **अनुच्छेद 19** और **31** के तहत **संपत्ति के अधिकार** को एक मूल अधिकार घोषित किया गया था।
  - **अनुच्छेद 19 (1)(f)** भारतीय नागरिकों को संपत्ति के अधिग्रहण, धारण और निपटान के अधिकार को प्रत्याभूत करता था।
  - भारतीय संविधान के **अनुच्छेद 31** में यह उल्लेख था कि, किसी भी व्यक्ति को एक सक्षम प्राधिकारी की सहमति के बिना उसकी संपत्ति से वंचित नहीं किया जा सकता है।
  - इसके अतिरिक्त, **अनुच्छेद 31(2)** ने भूमि अधिग्रहण संबंधी राज्य की शक्ति पर दो सीमाएं निर्धारित की थीं:
    - प्रथम, भूमि का अनिवार्य अधिग्रहण या अर्जन सार्वजनिक प्रयोजन के लिए अपेक्षित होना चाहिए।

- दूसरा, इस प्रयोजन के लिए अधिनियमित कानून में क्षतिपूर्ति का प्रावधान होना चाहिए।

- हालांकि, स्वतंत्रता के उपरांत, इसके कारण सरकार और नागरिकों के मध्य कई विवाद उत्पन्न हुए। इनमें से कुछ प्रमुख विवादास्पद मुद्दे थे:
  - भूमि सुधारों के संबंध में सरकार द्वारा अधिनियमित विधियां;
  - शहरी क्षेत्र में लोगों को आवास उपलब्ध कराने के उपाय;
  - निजी उद्यमों का विनियमन; तथा
  - कुछ वाणिज्यिक उपक्रमों का राष्ट्रीयकरण।
- अतः, इसके दायरे को संकीर्ण करने के लिए **पहले, चौथे, 17वें, 25वें** और **42वें संविधान संशोधन अधिनियमों** द्वारा इसे कई बार संशोधित किया गया।
- इसे देश के सामाजिक-आर्थिक विकास में एक अवरोध के रूप में संदर्भित किया जाता रहा था।
- अंतत: **44वें संविधान संशोधन अधिनियम** द्वारा **अनुच्छेद 31 और अनुच्छेद 19(1)(f) के संपूर्ण उपबंधों को निरसित कर दिया गया तथा इनके स्थान पर अनुच्छेद 300A को समाविष्ट किया गया।**

अनुच्छेद 300A के तहत संपत्ति का अधिकार

- अनुच्छेद 300A में यह उपबंध है कि "किसी व्यक्ति को उसकी संपत्ति से विधि के प्राधिकार से ही वंचित किया जाएगा, अन्यथा नहीं।" इसका आशय यह है कि-
  - संपत्ति का अधिकार अब एक मूल अधिकार नहीं है, अर्थात् अनुच्छेद 300A के किसी भी प्रकार के उल्लंघन के मामले में पीड़ित व्यक्ति अनुच्छेद 32 के तहत सीधे उच्चतम न्यायालय में याचिका दायर करने में सक्षम नहीं होगा।
  - साथ ही, किसी व्यक्ति को उसकी संपत्ति से वंचित करने के लिए एक कानून का अधिनियमन आवश्यक होगा।

संपत्ति के अधिकार को मूल अधिकार के रूप में पुनर्स्थापित करने के पक्ष में तर्क

- **यह नागरिकों को अधिग्रहण के नाम पर राज्य की अनुचित कार्रवाई से संरक्षण प्रदान करेगा:** विकास के नाम पर अनिवार्य भूमि अधिग्रहण और व्यापक विस्थापन ने कुछ सामाजिक-आर्थिक मुद्दों को उत्पन्न किया है। इस प्रकार, सरकार पर कठोर नियंत्रण की आवश्यकता है।
- **यह न्यायपालिका को सहायता प्रदान करेगा:** वर्तमान में राज्य की मनमानी कार्रवाई के भय के विरुद्ध उच्चतम न्यायालय द्वारा विकसित न्याय शास्त्र का सिद्धांत (doctrinal jurisprudence) ही एकमात्र रक्षोपाय के रूप में उपलब्ध है, उदाहरण के लिए- **निष्पक्ष संतुलन परीक्षण (Fair Balance test)।**
  - संपत्ति के अधिकार की उभरती स्थिति न्यायपालिका को न्याय के प्रभावी वितरण में सहायता प्रदान करेगी।
- **उचित क्षतिपूर्ति की गणना में स्वार्थपरक प्रथाओं से निपटने में सहायक:** प्राय: भू-स्वामी भूमि अधिग्रहण से संबंधित क़ानूनों में अस्पष्टता के कारण उचित क्षतिपूर्ति से वंचित हो जाते हैं।
- **असुरक्षित स्वत्वाधिकार और निम्नस्तरीय भूमि अभिलेख एवं प्रशासन (Insecure Titles and Poor Land Records and Administration):** कई नागरिकों के पास अपनी भूमि के लिए स्पष्ट स्वत्वाधिकारों का अभाव है तथा राज्य संगठनों द्वारा भूमि अभिलेखन के निम्नस्तरीय अनुरक्षण से इसमें और वृद्धि हो जाती है। उदाहरणार्थ- देशज जनजातियों के भू-अधिकारों को राज्यों द्वारा मान्यता प्रदान नहीं की गई है, जबकि वे पीढ़ियों से उस भूमि पर अधिवासित हैं।

निष्पक्ष संतुलन परीक्षण (Fair Balance test)

- इसके अनुसार, किसी संपत्ति के मूल्य से यथोचित रूप से संबंधित राशि के भुगतान के बिना संपत्ति का अधिग्रहण, एक प्रकार से अनुचित हस्तक्षेप माना जाएगा, जिसे न्यायोचित नहीं माना जा सकता।

संपत्ति के अधिकार के विधिक अधिकार के रूप में ही बने रहने के पक्ष में तर्क

- **भूमि अधिग्रहण में सुगमता:** भारत एक विकासशील देश है और इस प्रयोजन के लिए भूमि अधिग्रहण की आवश्यकता अनुच्छेद 300A द्वारा सुगम हो जाती है।
- **न्यायपालिका के कार्यभार में कमी:** ज्ञातव्य है कि पूर्व में, न्यायपालिका में संपत्ति के अधिकारों से संबंधित अत्यधिक मुकदमे लंबित थे, वर्तमान में इसमें काफी कमी हुई है।
- **सरकार के कल्याणकारी उद्देश्यों में सहायक:** चूँकि, सरकार द्वारा उचित क्षतिपूर्ति प्रदान की जाती है, इसलिए कल्याणकारी उद्देश्यों को पूरा करने के लिए भूमि अधिग्रहण आवश्यक हो जाता है, जैसे- सड़क संपर्क सुनिश्चित करना, सभी के लिए विद्युत् उपलब्ध करवाना आदि।

VISION IAS

निष्कर्ष

संपत्ति के अधिकार को संपूर्ण समाज और देश के विकास के साथ संतुलित करने की आवश्यकता है। इस संबंध में निम्नलिखित कदम उठाए जा सकते हैं:

- **भू-अभिलेखों का कम्प्यूटरीकरण** किया जाना चाहिए।
- ऐसी संस्थाएँ और प्रक्रियाएँ विकसित करने की आवश्यकता है जो सर्वसुलभ हों और लोगों को निश्चित रूप से अपने **भूमि का स्वत्वाधिकार** स्थापित करने के लिए तंत्र प्रदान करती हों।
- सरकार को **उचित क्षतिपूर्ति की गणना** करते समय उच्चतम न्यायालय द्वारा निर्धारित दिशा-निर्देशों का अनुपालन करना चाहिए। इस संबंध में **भूमि अधिग्रहण, पुनर्वास और पुनर्स्थापन में उचित मुआवजा और पारदर्शिता का अधिकार अधिनियम, 2013** में सुधार किया जा सकता है।
- लोगों को व्यापक पैमाने पर विस्थापित होने से सुरक्षा प्रदान करनी चाहिए। परंतु यदि आवश्यक हो, तो **उचित पुनर्वास** प्रदान किया जाना चाहिए और क्षतिपूर्ति के अंतर्गत विस्थापन की सामाजिक लागत को भी शामिल किया जाना चाहिए।

2.1.4. राजद्रोह (Sedition)

सुर्ख़ियों में क्यों?

हाल ही में, नागरिकता संशोधन अधिनियम के विरोध और पाकिस्तान समर्थक नारे लगाने के कारण बेंगलुरु और कश्मीर में हुई गिरफ्तारियों ने भारत के राजद्रोह कानून से संबंधित वाद-विवाद को पुनः प्रज्वलित कर दिया है।

भारत में राजद्रोह कानून से संबंधित तथ्य

- **भारतीय दंड संहिता (IPC) की धारा 124A के अंतर्गत राजद्रोह को भारत सरकार के प्रति घृणा या अवमानना प्रवृत्त करने वाली किसी भी कार्रवाई के रूप में परिभाषित किया गया है।**
- **उद्गम और विकास**– इसे औपनिवेशिक शासन के दौरान वाक् और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का दमन करने के लिए वर्ष 1870 के विशेष अधिनियम XVII के माध्यम से अंत:स्थापित किया गया था। **महात्मा गांधी ने धारा 124A को** "नागरिकों की स्वतंत्रता का दमन करने के लिए निर्मित IPC की राजनीतिक धाराओं में सर्वप्रमुख धारा" **के रूप में वर्णित किया था।**
- **राजद्रोह कानून से संबंधित हालिया आंकड़े:**
  - अन्य अपराधों की तुलना में, **राजद्रोह एक दुर्लभ अपराध बना हुआ** है (IPC से संबंधित सभी अपराधों में इसकी हिस्सेदारी 0.01% से कम है)।
  - भारत के भीतर **कुछ भाग राजद्रोह के मुख्य केंद्र के रूप में उभर रहे हैं**। उदाहरण के लिए, वर्ष 2014-2018 के मध्य राजद्रोह के कुल मामलों में 37-37 मामलों के साथ असम और झारखंड की हिस्सेदारी 32% थी।
  - **राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड ब्यूरो (NCRB)** के अनुसार, वर्ष 2014 में राजद्रोह के 47 मामले थे परन्तु वर्ष 2018 में यह संख्या बढ़कर 70 हो गई।
- **धारा 124A का महत्व:** विधि द्वारा स्थापित सरकार का निरंतर अस्तित्व राज्य की स्थिरता की एक अनिवार्य शर्त है।
  - भारतीय दंड संहिता की धारा 124A की राष्ट्र-विरोधी, अलगाववादी और आतंकवादी तत्वों से निपटने में महत्वपूर्ण उपयोगिता है, क्योंकि विभिन्न राज्यों में कई जिले माओवादी विद्रोह का सामना कर रहे हैं और विद्रोही समूह वस्तुत: समानांतर प्रशासन का संचालन करते हैं।

भारतीय दंड संहिता (IPC) की धारा 124A के संबंध में

- इसका प्रारूप **थॉमस बैबिंगटन मैकाले** ने तैयार किया था और इसे 1870 ई. में IPC में सम्मिलित किया गया था।
- इसमें उल्लिखित है कि, "जो कोई भी बोले गए या लिखित शब्दों द्वारा या संकेतों द्वारा या दृश्य निरूपण द्वारा या अन्यथा, घृणा या अवमान प्रवृत्त करना या करने का प्रयास करता है, या भारत में विधि द्वारा स्थापित सरकार के प्रति अप्रीति (वैमनस्य) भड़काता है या भड़काने का प्रयास करता है, वह आजीवन कारावास या अर्थदंड अथवा दोनों या तीन वर्ष तक के कारावास या अर्थदंड अथवा दोनों से दंडित किया जाएगा।
- धारा 124A के अंतर्गत राजद्रोह एक **गैर-जमानती अपराध** है।
- इस कानून के अंतर्गत आरोपित व्यक्ति **सरकारी नौकरी के लिए आवेदन नहीं कर सकता है**। उन्हें अपने पासपोर्ट के बिना रहना होगा और किसी भी समय आवश्यकता पड़ने पर अपने आपको न्यायालय में प्रस्तुत करना होगा।

VISION IAS

राजद्रोह की आलोचना

- **औपनिवेशिक युग का कानून:** यह एक औपनिवेशिक अवशेष और निवारक प्रावधान है, जिसका केवल आपातकालीन उपाय के रूप में प्रयोग किया जाना चाहिए।
- **अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का अधिकार:** सरकार द्वारा धारा 124A का उपयोग संविधान के अनुच्छेद 19 के अनुसार वाक् और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के मूल अधिकार के तहत उपबंधित युक्तियुक्त निर्बंधनों से परे हो सकता है।
- **लोकतांत्रिक आधार:** असहमति और सरकार की आलोचना एक जीवंत लोकतंत्र में सशक्त सार्वजनिक वाद-विवाद के आवश्यक तत्व हैं। इसलिए, इनकी राजद्रोह के रूप में व्याख्या नहीं करनी चाहिए। राजद्रोह कानून का दुरुपयोग राजनीतिक असहमति के दमन के साधन के रूप में किया जा रहा है।
- **न्यूनतम दोषसिद्धि दर:** हालांकि पुलिस अधिक लोगों को राजद्रोह का आरोपी बना रही है, लेकिन कुछ ही मामले वास्तव में दोषसिद्धि में परिणत हो पाते हैं। वर्ष 2016 से न्यायालय में राजद्रोह के केवल चार मामलों में दोषसिद्धि की जा सकी है, जो प्रदर्शित करती है कि अपराध के रूप में राजद्रोह का भारत में कोई ठोस कानूनी आधार नहीं है।
- **राजद्रोह कानूनों का अस्पष्ट प्रावधान: धारा 124A** के अंतर्गत प्रयुक्त शब्द जैसे 'अप्रीति (वैमनस्य)' अस्पष्ट है और जांच अधिकारियों की मनोवृत्ति एवं अभिरुचि के अनुसार विभिन्न व्याख्या के अधीन है।
- **राज्य के विरुद्ध अपराधों के लिए अन्य कानूनी उपाय:** भारतीय दंड संहिता और विधिविरुद्ध क्रियाकलाप (निवारण) अधिनियम, 1967 में ऐसे प्रावधान उपबंधित किए गए हैं जो "सार्वजनिक व्यवस्था में व्यवधान उत्पन्न करने" या "हिंसा और अवैध साधनों से सरकार को गिराने" जैसे कृत्यों में लिप्त व्यक्तियों को दंडित करते हैं। ये राष्ट्रीय अखंडता की रक्षा करने के लिए पर्याप्त हैं।
  - इसी प्रकार से, राज्य के विरुद्ध अपराधों के लिए **लोक संपत्ति नुकसान निवारण अधिनियम** भी अधिनियमित किया गया है।
- **विधि की धारणा:** विश्व स्तर पर, राजद्रोह को उत्तरोत्तर एक कठोर कानून के रूप में देखा जा रहा है और वर्ष 2010 में यूनाइटेड किंगडम में इसे निरस्त कर दिया गया था। ऑस्ट्रेलिया में, ऑस्ट्रेलियन लॉ रिफॉर्म्स कमीशन (ALRC) की अनुशंसाओं के उपरांत राजद्रोह शब्द का लोप कर दिया गया।
  - भारत में भी, **अगस्त 2018 में, विधि आयोग ने एक परामर्श-पत्र प्रकाशित किया** था, जिसमें यह अनुशंसा की गई कि थी धारा **124A पर पुनर्विचार करने या इसे निरस्त करने** की आवश्यकता है।

राजद्रोह: न्यायपालिका के विचार

- राजद्रोह की संवैधानिकता **को केदार नाथ बनाम बिहार राज्य (1962)** वाद में उच्चतम न्यायालय में चुनौती दी गई थी। न्यायालय ने इस आधार पर इस कानून को उचित ठहराया कि राज्य को स्वयं के संरक्षण के लिए इस शक्ति की आवश्यकता है।
  - हालांकि, न्यायालय ने यह महत्वपूर्ण चेतावनी दी थी कि "किसी व्यक्ति पर राजद्रोह का अभियोग केवल तभी चलाया जा सकता है **"यदि उसके कृत्य हिंसा भड़काने या उसका मंतव्य सार्वजनिक अव्यवस्था उत्पन्न करने या सार्वजनिक शांति भंग करने के आशय से प्रेरित है।"**
  - न्यायालय के अनुसार "किसी नागरिक को तब तक आलोचना या टिप्पणी के माध्यम से सरकार, या उसके कदमों के संबंध में अपने मतानुसार कुछ कहने या लिखने का अधिकार है, जब तक कि वह लोगों को विधि द्वारा स्थापित सरकार के विरुद्ध हिंसा के लिए या सार्वजनिक अव्यवस्था उत्पन्न करने के आशय से उत्प्रेरित नहीं करे।"
- **वर्ष 1995** के **बलवंत सिंह वाद** के निर्णय में उच्चतम न्यायालय ने कहा था कि, 'केवल दो व्यक्तियों द्वारा एक या दो बार आकस्मिक नारे लगाने को सरकार के प्रति घृणा या वैमनस्य को उकसाने वाला या उकसाने का प्रयास करने वाला नहीं कहा जा सकता।
- **सितंबर 2016 में**, उच्चतम न्यायालय ने इन आवश्यक रक्षोपायों को दोहराया और यह माना कि उनका सभी प्राधिकरणों द्वारा अनुपालन किया जाना चाहिए।
- **राजद्रोह के कृत्य के लिए आवश्यक घटक सामग्री: रोमेश थापर वाद, केदार नाथ सिंह वाद, कन्हैया कुमार वाद** आदि में विभिन्न निर्णयों ने राजद्रोह के कृत्य को पुनर्परिभाषित करते हुए वर्णित किया कि, कोई कृत्य केवल तभी राजद्रोह होगा यदि उसमें निम्नलिखित शामिल हैं यथा:
  - लोक व्यवस्था का व्यवधान;
  - हिंसक रूप से विधिसम्मत सरकार को गिराने का प्रयास; तथा
  - राज्य या जनता की सुरक्षा के लिए संकट उत्पन्न करना।

VISION IAS

निष्कर्ष

यह पर्याप्त रूप से स्पष्ट है कि भारतीय विधिक परंपरा में वाक् एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के दायरे में आलोचना, असहमति और विरोध का कोई भी रूप सम्मिलित है। असहमति एक जीवंत लोकतंत्र में सुरक्षा वाल्व के रूप में कार्य करती है और वाक् स्वातंत्र्य और अभिव्यक्ति स्वातंत्र्य पर प्रत्येक प्रतिबंध उसके औचित्य के अनुरूप आरोपित किया जाना चाहिए। भारतीय विधि आयोग के सुझाव के अनुसार, 124A का आरोपण केवल स्पष्ट हिंसा और अवैध साधनों से लोक व्यवस्था को बाधित करने या सरकार को गिराने के आशय से किए गए कृत्यों को आपराधिक बनाने तक ही सीमित किया जाना चाहिए।

2.1.5. सबरीमाला मंदिर मामला (Sabarimala Temple Issue)

सुर्ख़ियों में क्यों?

हाल ही में, उच्चतम न्यायालय ने **"सबरीमाला निर्णय" (2018)** के पुनर्विलोकन पर अपना निर्णय, सात न्यायाधीशों की पीठ द्वारा **धार्मिक प्रथाओं की अनिवार्यता और संवैधानिक नैतिकता** जैसे व्यापक मुद्दों की जांच किए जाने तक, आस्थगित कर दिया है।

इस मुद्दे की पृष्ठभूमि

- सबरीमाला मंदिर की प्राचीन प्रथा के तहत, महिलाओं को उनके प्रजनन चरण (मासिक धर्म के चरण) के दौरान इस आधार पर मंदिर में प्रवेश करने से **प्रतिबंधित** किया गया है कि मंदिर में विराजमान **देवता पूर्णत: ब्रह्मचारी** हैं।
- **इंडियन यंग लॉयर्स एसोसिएशन और अन्य बनाम केरल राज्य और अन्य वाद (2018)** में, उच्चतम न्यायालय की पांच-न्यायाधीशों की पीठ द्वारा 4:1 के बहुमत से एक ऐतिहासिक निर्णय में मासिक धर्म के दौरान महिलाओं के सबरीमाला मंदिर में प्रवेश पर आरोपित दशकों पुराने प्रतिबंधों को समाप्त कर दिया गया था।
  - इस निर्णय में टिप्पणी की गई कि सबरीमाला मंदिर में महिलाओं के प्रवेश पर प्रतिबंध, **अस्पृश्यता का समर्थन करने जैसा है और इस प्रकार यह अनुच्छेद 17 का उल्लंघन है।**
  - **न्यायमूर्ति इंदु मल्होत्रा** ने इस आधार पर बहुमत के निर्णय के विरुद्ध असंतोष व्यक्त किया था कि न्यायालय को सती जैसी घृणित प्रथाओं के अतिरिक्त किसी अन्य हानिरहित धार्मिक मान्यताओं पर निर्णय नहीं देना चाहिए।
- हाल ही में, उपर्युक्त निर्णय के विरुद्ध समीक्षा याचिका (Review Petition) दायर की गई थी। याचिकाकर्ताओं का तर्क था कि वर्ष 2018 का निर्णय त्रुटिपूर्ण है, क्योंकि **संवैधानिक नैतिकता एक प्रकार की अस्पष्ट अवधारणा है** जिसका उपयोग आस्था और विश्वास के ह्रास के संदर्भ में नहीं किया जा सकता है।
- भविष्य में, मस्जिद में महिलाओं के प्रवेश और दाऊदी बोहरा संप्रदाय में प्रचलित फीमेल जेनिटल म्यूटिलेशन (खतना प्रथा) से संबंधित धार्मिक मुद्दों पर बड़ी बेंच द्वारा निर्णय किया जाएगा।

सबरीमाला मामले में उच्चतम न्यायालय के हालिया निर्णय के निहितार्थ

- **इससे अन्य प्रमुख संवैधानिक प्रश्न उत्पन्न होंगे:** सात न्यायाधीशों की पीठ निम्नलिखित प्रश्नों की जाँच करेगी:
  - संविधान के **अनुच्छेद 25 और 26 के तहत धर्म की स्वतंत्रता** तथा अन्य मूल अधिकारों, विशेषकर समता के अधिकार (अनुच्छेद 14) के मध्य संतुलन संबंधी प्रश्न।
  - क्या **"अनिवार्य धार्मिक प्रथाओं" या "अनिवार्यता के सिद्धांत (Doctrine of Essentiality)"** को **अनुच्छेद 26** (धार्मिक कार्यों के प्रबंधन की स्वतंत्रता) के तहत संवैधानिक संरक्षण प्रदान किया जाना चाहिए?
  - एक व्यक्ति, जो उस धर्म {जिससे संबंधित प्रथा का परीक्षण करने के लिए उसने जन हित याचिका (PIL) दायर की है} से संबंधित नहीं है, द्वारा दायर PIL के संदर्भ में न्यायालय द्वारा दी जाने वाली न्यायिक मान्यता की **"अनुमेय सीमा"** (permissible extent) क्या है?
  - क्या एक न्यायालय यह जांच कर सकता है कि एक धर्म के लिए कोई प्रथा अनिवार्य है अथवा नहीं या क्या इस प्रश्न को संबंधित धार्मिक समुदाय के प्रमुख द्वारा निर्धारण किए जाने हेतु छोड़ दिया जाना चाहिए?
- **इस व्यापक मुद्दे के साथ लैंगिक समानता पर संवैधानिक बहस** पुनः प्रारंभ हो जाएगी कि क्या कोई धर्म महिलाओं को पूजा स्थलों में प्रवेश करने से प्रतिबंधित कर सकता है अथवा नहीं।

अनिवार्यता के सिद्धांत (Doctrine of Essentiality) की समझ और संबंधित विवाद

- **अनिवार्यता का सिद्धांत:** "अनिवार्यता" का सिद्धांत वर्ष 1954 में 'शिरुर मठ' मामले में उच्चतम न्यायालय की सात न्यायाधीशों की पीठ द्वारा प्रतिपादित किया गया था, जिसके तहत न्यायालय ने निर्णय दिया था कि "धर्म" शब्द में एक धर्म के लिए "अनिवार्य"

सभी "संस्कार और प्रथाएं" शामिल होंगी और एक धर्म के लिए अनिवार्य तथा गैर-अनिवार्य प्रथाओं को निर्धारित करने का उत्तरदायित्व उच्चतम न्यायालय का होगा।

- **संबंधित विवाद:**
  - **अनिवार्यता बनाम धर्म की स्वतंत्रता का अधिकार: 'रतिलाल गांधी बनाम द स्टेट ऑफ बॉम्बे' (1954)** में उच्चतम न्यायालय ने स्वीकार किया कि "प्रत्येक व्यक्ति को उसके निर्णय या अंतरात्मा से अनुमोदित धार्मिक विश्वासों का आचरण करने का मूल अधिकार प्राप्त है। हालाँकि, इस स्वायत्तता पर अनिवार्यता परीक्षण लागू होता है।
    - शीर्ष न्यायालय ने निजता (2017), धारा 377 (2018), और व्यभिचार (2018) से संबंध वादों में स्वयं अपने निर्णयों में स्वायत्तता और चयन की स्वतंत्रता पर बल दिया है।
  - **न्यायिक अतिक्रमण (Judicial overreach) का मामला:** अनिवार्यता के सिद्धांत की कई संवैधानिक विशेषज्ञों द्वारा आलोचना की गई है। उनका तर्क है कि यह न्यायपालिका को अपने अधिकार-क्षेत्र से इतर कार्य करने हेतु प्रेरित करता है और न्यायाधीशों को **विशुद्ध धार्मिक विषयों पर निर्णय करने की शक्ति प्रदान करता है**, जिनका निर्धारण धर्मशास्त्रियों द्वारा किया जाना चाहिए।
- **धारणा संबंधी मुद्दे:** धर्म के केवल उन तत्वों को संवैधानिक संरक्षण प्रदान करने की परिकल्पना की गई है, जिन्हें न्यायालय "अनिवार्य" मानता है, और जो त्रुटिपूर्ण हैं। यह दृष्टिकोण धर्म के एक तत्व या प्रथा को दूसरे से स्वतंत्र मानता है।
- **अनुप्रयोग संबंधी स्वेच्छाचारिता:** विगत वर्षों में, इस विषय के संबंध में न्यायालय द्वारा विपरीत निर्णय दिए गए हैं अर्थात् कुछ मामलों में उन्होंने अनिवार्यता के निर्धारण हेतु धार्मिक ग्रंथों का सहारा लिया है जबकि कुछ मामलों में अनुयायियों के अनुभवजन्य व्यवहार का, वहीं अन्य मामलों में निर्णय इस तथ्य के आधार पर किए गए हैं कि क्या धर्म के उद्भव के समय ये प्रथाएं अस्तित्व में थी अथवा नहीं?
- **सामूहिक अधिकार बनाम व्यक्तिगत अधिकार:** उच्चतम न्यायालय द्वारा स्वीकार किया गया है कि "प्रत्येक व्यक्ति को स्वयं के धार्मिक विश्वासों का आचरण करने का मूल अधिकार प्राप्त है"। हालांकि, अनिवार्य प्रथाओं की जांच करना, **अधिकारों की व्यक्तिपरक अवधारणा** के विपरीत है। इस परीक्षण के तहत, न्यायालय कुछ धार्मिक प्रथाओं को अन्य पर वरीयता प्रदान करता है और इस प्रकार समूह के अधिकारों की रक्षा करता है।

2.1.6. धार्मिक शिक्षा और राज्य वित्तपोषण (Religious Education and State Funding)

सुर्ख़ियों में क्यों?

हाल ही में असम सरकार ने राज्य संचालित मदरसों और संस्कृत विद्या केंद्रों को बंद करने और उन्हें विद्यालयों में परिवर्तित करने का निर्णय लिया है।

धार्मिक शिक्षा के संबंध में संवैधानिक प्रावधान

- **अनुच्छेद 28** चार प्रकार के शैक्षिक संस्थाओं के मध्य भेद करता है यथा:
  - **पूर्णतः राज्य निधि से वित्त पोषित संस्था**- यहां, धार्मिक शिक्षा पूर्णतः निषिद्ध है।
  - **ऐसी शिक्षा संस्था, जिसका प्रशासन राज्य करता है, किंतु जो किसी ऐसे विन्यास या न्यास के अधीन स्थापित हुई है जिसके अनुसार उस संस्था में धार्मिक शिक्षा देना आवश्यक है-** यहां धार्मिक शिक्षा की अनुमति होती है।
  - **राज्य द्वारा मान्यता प्राप्त संस्था**- स्वैच्छिक आधार पर अर्थात सहमति से धार्मिक शिक्षा की अनुमति होती है।
  - **राज्य निधि से सहायता प्राप्त करने वाली संस्था**- स्वैच्छिक आधार पर अर्थात सहमति से धार्मिक शिक्षा की अनुमति होती है।

धार्मिक शिक्षा के पक्ष में तर्क

- **नीतिशास्त्रीय और नैतिक मूल्य समाहित करने के लिए:** हिंद स्वराज में, गांधी जी ने समर्थन किया था कि धार्मिक शिक्षा में अपने धर्म से भिन्न अन्य धर्मों के सिद्धांतों का अध्ययन सम्मिलित होना चाहिए। साथ ही उपासना, विवेक और नैतिकता के मूल्य और भारतीय आदर्श भी धार्मिक भावना द्वारा उत्पन्न हो सकते हैं।
- **भारतीय धर्मनिरपेक्षता के अनुरूप:** भारत में धर्मनिरपेक्षता की विशेषता धर्मविहीनता नहीं है (जैसा कि लैसिते की फ्रांसीसी अवधारणा में उपबंधित है, जो राज्य और धर्म के मध्य पृथक्करण का आह्वान करता है), बल्कि सभी धर्मों से समान व्यवहार है।
- **अनुच्छेद 30:** यह प्रावधान करता है कि धर्म या भाषा पर आधारित सभी अल्पसंख्यक-वर्गों को अपनी रुचि की शिक्षा संस्थाओं की स्थापना और प्रशासन का अधिकार होगा। साथ ही, यह भी उपबंधित करता है कि शिक्षा संस्थाओं को सहायता देने में राज्य किसी शिक्षा संस्था के विरुद्ध उपर्युक्त आधार पर विभेद नहीं करेगा।

VISION IAS

धार्मिक शिक्षा के विपक्ष में तर्क

- **सार्वजनिक कार्य के रूप में शिक्षा: हाल ही में, केरल उच्च न्यायालय ने निर्णय दिया था** कि शिक्षा का अधिकार (RTE) अधिनियम के अंतर्गत राज्य सरकार से मान्यता प्राप्त विद्यालय को **अन्य धर्मों के विरुद्ध वरीयता देते हुए किसी एक धर्म की धार्मिक शिक्षा प्रदान करने का अधिकार नहीं है,** क्योंकि वह सार्वजनिक कार्य का निर्वहन कर रहा है।
- केरल उच्च न्यायालय ने यह भी वर्णित किया कि संविधान के अंतर्गत अल्पसंख्यकों के अधिकार उन्हें संविधान के मूलभूत मूल्यों अर्थात **धर्मनिरपेक्षता को निष्प्रभावी करने की अनुमति नहीं देते हैं**। इससे तटस्थता का अस्वीकरण होता है, भेदभाव को बढ़ावा मिलता है और समान व्यवहार से वंचन संभव होता है।
- कुछ लोगों का तर्क है कि, **धार्मिक शिक्षा की स्वांग में, सांप्रदायिक विचार सिखाए और आगे बढ़ाए जाते हैं।** साथ ही, इस संबंध में सामान्य समझ की कमी कि धार्मिक शिक्षा क्या अपरिहार्य बनाती है के कारण इसे विनियमित करना कठिन हो जाता है।

आगे की राह

वर्ष 1964 में कोठारी आयोग ने "धार्मिक शिक्षा" और "धर्मों के संबंध में शिक्षा" के मध्य भेद किया था। इसने धर्मनिरपेक्ष दृष्टिकोण विकसित करने के लिए नैतिक और आध्यात्मिक शिक्षा की अनुशंसा की थी। साथ ही, जैसा कि उच्च न्यायालय ने रेखांकित किया है कि भारत जैसे बहुलवादी समाज में, जो धर्मनिरपेक्षता को शिक्षा सहित धर्मनिरपेक्ष गतिविधियों को नियंत्रित करने में आधारभूत मानदंड के रूप में स्वीकार करता है, धार्मिक शिक्षा प्रदान करने या धार्मिक बहुलवाद पर आधारित अध्ययन में कोई कठिनाई नहीं हो सकती है। इसमें अनन्यता निषिद्ध है।

2.2. आरक्षण (Reservation)

2.2.1. आरक्षण नीति (Reservation Policy)

सुर्ख़ियों में क्यों?

हाल ही में, उच्चतम न्यायालय की पांच न्यायाधीशों वाली एक संविधान पीठ ने यह निर्णय दिया है कि **किसी राज्य के अनुसूचित क्षेत्रों में अनुसूचित जनजातियों के लिए 100 प्रतिशत आरक्षण प्रदान करना स्वीकार्य नहीं है।**

विवरण

- आंध्र प्रदेश राज्य द्वारा वर्ष 2000 में एक आदेश जारी किया गया था, जिसमें राज्य के अनुसूचित क्षेत्रों में स्थित स्कूलों में शिक्षकों के पद के लिए **अनुसूचित जनजाति के उम्मीदवारों को 100% आरक्षण प्रदान किया गया था (जिसमें से 33% महिलाएँ होंगी)।**
- हालाँकि, हाल ही में, **उच्चतम न्यायालय ने माना कि 100% आरक्षण भेदभावपूर्ण और अस्वीकार्य है,** क्योंकि इसने संविधान के अनुच्छेद 14 (विधि के समक्ष समता), 15 (विभेद का प्रतिषेध) तथा 16 (अवसर की समता) का उल्लंघन किया है।
  - अनुसूचित जनजातियों के लिए 100% आरक्षण वस्तुतः सामान्य वर्ग, अनुसूचित जातियों और अन्य पिछड़े वर्गों को उनके उचित प्रतिनिधित्व से भी वंचित करता है। **न्यायालय ने इंदिरा साहनी वाद के निर्णय का भी उल्लेख किया, जो आरक्षण को 50% तक सीमित करता है।**
  - इसके अतिरिक्त न्यायालय ने इस निर्णय में यह भी कहा कि **अवसर की समता** और अनुच्छेद 51A के तहत **चयन के अनुसरण (pursuit of choice)** को स्वेच्छाचारी रूप से वंचित नहीं किया जा सकता है।
  - न्यायालय ने यह भी कहा कि **संविधान की पांचवीं अनुसूची के तहत** किसी भी संसदीय कानून में 'अपवादों और उपांतरणों' को स्पष्ट करने की राज्यपाल की शक्ति उसे कानून का विकल्प प्रदान करने या पूर्णतः नए कानून के निर्माण का अधिकार प्रदान नहीं करती है।

आरक्षण के संबंध में संवैधानिक प्रावधान

- **अनुच्छेद 15(4)** राज्य को सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े नागरिकों के किन्हीं वर्गों की उन्नति के लिए या अनुसूचित जातियों एवं अनुसूचित जनजातियों हेतु कोई विशेष उपबंध करने की अनुमति प्रदान करता है। इस प्रावधान को **93वें संशोधन अधिनियम, 2006 द्वारा शैक्षणिक संस्थानों (अल्पसंख्यक शिक्षण संस्थानों को छोड़कर) में प्रवेश के लिए विस्तारित किया गया था।**
- **अनुच्छेद 16(4)** राज्य को पिछड़े हुए नागरिकों के किसी वर्ग के पक्ष में, जिनका प्रतिनिधित्व राज्य की राय में राज्य के अधीन

VISION IAS

सेवाओं में पर्याप्त नहीं है, नियुक्तियों या पदों के आरक्षण के लिए उपबंध करने की अनुमति प्रदान करता है।

- **अनुच्छेद 16(4A)** राज्य को अनुसूचित जातियों एवं अनुसूचित जनजातियों के लिए पदोन्नति में आरक्षण से संबंधित विधि निर्माण हेतु सक्षम बनाता है।
- **अनुच्छेद 46** में उपबंध किया गया है कि राज्य, जनता के दुर्बल वर्गों के, विशिष्टतया अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के शिक्षा और अर्थ संबंधी हितों की विशेष सावधानी से अभिवृद्धि करेगा तथा सामाजिक अन्याय एवं सभी प्रकार के शोषण से उनकी संरक्षा करेगा।
- **अनुच्छेद 243D** प्रत्येक **पंचायत** में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए सीटों के आरक्षण का प्रावधान करता है।
- **अनुच्छेद 243T** प्रत्येक **नगरपालिका** में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए सीटों के आरक्षण का प्रावधान करता है।
- **अनुच्छेद 330** में उपबंध किया गया है कि **लोक सभा में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए सीटें आरक्षित होंगी।**
- भारत के संविधान के **अनुच्छेद 332 में राज्यों की विधान सभाओं में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए सीटों के आरक्षण का प्रावधान किया गया है।**

भारतीय संदर्भ में आरक्षण

- यह **सकारात्मक कार्रवाई** का एक स्वरूप है, जिसके तहत सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े समुदायों, अनुसूचित जाति तथा अनुसूचित जनजाति के लिए जिन सेवाओं व संस्थानों में इनका अपर्याप्त प्रतिनिधित्व है, उन सरकारी सेवा तथा शैक्षणिक संस्थानों में कुछ प्रतिशत सीटें आरक्षित की गईं हैं।
- हाल ही में, **103वें संविधान संशोधन अधिनियम, 2018** द्वारा **आर्थिक रूप से कमजोर वर्गों (Economically Weaker Sections: EWS)** को **10% आरक्षण** प्रदान किया गया था। इसके तहत शैक्षणिक संस्थानों में प्रवेश और सरकारी पदों हेतु आर्थिक रूप से कमजोर वर्ग को आरक्षण प्रदान करने के लिए **अनुच्छेद 15 एवं 16** में संशोधन किया गया था।
- खुली प्रतिस्पर्धा के तहत अखिल भारतीय स्तर पर प्रत्यक्ष भर्ती के मामले में **अनुसूचित जातियों (SCs), अनुसूचित जनजातियों (STs) और अन्य पिछड़ा वर्गों (OBCs) को क्रमशः 15%, 7.5% और 27% की दर से आरक्षण** प्रदान किया जाता है।
- **नि:शक्तजन अधिनियम, 1995** भारत में दिव्यांगजनों के लिए आरक्षण का प्रावधान करता है। इस अधिनियम के तहत, दिव्यांगजनों को सरकारी नौकरियों और उच्च शैक्षणिक संस्थानों, दोनों में 3% आरक्षण प्राप्त हुआ है।

आरक्षण के संबंध में न्यायिक निर्णय

- **चंपकम दोराईराजन बनाम मद्रास राज्य वाद (1951)**
  - इस वाद में उच्चतम न्यायालय ने मद्रास उच्च न्यायालय के उस निर्णय को यथावत रखा, जिसने सरकारी नौकरियों और शैक्षणिक संस्थानों में **जाति-आधारित आरक्षण** के संबंध में वर्ष 1927 के सरकारी आदेश को रद्द कर दिया था।
    - इस निर्णय ने **प्रथम संविधान संशोधन अधिनियम, 1951** द्वारा संविधान में अनुच्छेद 15(4) को अंत:स्थापित करने हेतु आधार का सृजन भी किया था।
- **इंदिरा साहनी बनाम भारत संघ वाद (1992)**
  - उच्चतम न्यायालय की 9 न्यायाधीशों की एक संविधान पीठ ने 6:3 के बहुमत से निर्णय दिया कि केंद्र सरकार द्वारा **पिछड़े वर्गों के लिए 27% सरकारी नौकरियों को आरक्षित करने का निर्णय (क्रीमी लेयर के अलावा) संवैधानिक रूप से मान्य है।**
  - सीटों का आरक्षण केवल प्रारंभिक नियुक्तियों तक ही सीमित होगा और पदोन्नति में यह लाभ प्राप्त नहीं होगा तथा **कुल आरक्षण 50 प्रतिशत से अधिक नहीं होगा।**
- **एम. नागराज बनाम भारत संघ वाद (2006)**
  - उच्चतम न्यायालय की पांच-न्यायाधीशों वाली एक संविधान पीठ द्वारा अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए आरक्षण को पदोन्नति तक विस्तारित करने के संसद के निर्णय को निम्नलिखित **तीन शर्तों के साथ वैध घोषित किया गया:**
    - राज्य को आरक्षण से लाभान्वित होने वाले वर्ग के पिछड़ेपन का प्रमाण प्रस्तुत करना होगा।
    - राज्य को सार्वजनिक रोज़गार में उस वर्ग के प्रतिनिधित्व की अपर्याप्तता दर्शाते हुए मात्रात्मक डेटा एकत्र करना होगा।
    - राज्य को यह प्रदर्शित करना होगा कि पदोन्नति में आरक्षण कैसे प्रशासनिक दक्षता को और अधिक विस्तारित करेगा।

VISION IAS

- **जरनैल सिंह बनाम लक्ष्मी नारायण गुप्ता वाद (2018)**
  - उच्चतम न्यायालय ने निर्णय दिया कि सरकार को पदोन्नति में आरक्षण प्रदान करने के लिए अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों से संबंधित सार्वजनिक कर्मचारियों के पिछड़ेपन को प्रदर्शित करने के लिए मात्रात्मक डेटा एकत्र करने की आवश्यकता **नहीं** है।
- हाल ही में, उच्चतम न्यायालय ने **"कर्नाटक में आरक्षण के आधार पर पदोन्नत सरकारी सेवकों तक परिणामी वरिष्ठता का विस्तार (राज्य की सिविल सेवा में पदों के लिए) अधिनियम, 2018"** को मान्य ठहराया है। यह अधिनियम वर्ष 1978 से भूतलक्षी प्रभाव के साथ अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों हेतु परिणामी वरिष्ठता का प्रावधान करता है।
  - **परिणामी वरिष्ठता (consequential seniority)** वस्तुतः आरक्षित श्रेणी के उम्मीदवारों को सामान्य श्रेणी के अपने सहकर्मियों से वरिष्ठता प्रदान करने की अनुमति प्रदान करती है। यदि आरक्षित श्रेणी के एक उम्मीदवार को पदोन्नति में आरक्षण के कारण सामान्य श्रेणी के एक उम्मीदवार से पहले पदोन्नत किया जाता है, तब अनुवर्ती (subsequent) पदोन्नति के लिए आरक्षित उम्मीदवार को वरिष्ठता प्राप्त होती है। वास्तव में, परिणामी वरिष्ठता 'अधिग्रहण (कैच-अप) नियम' को रद्द कर देती है, जो आरक्षित श्रेणी के उम्मीदवार की पदोन्नति को सामान्य श्रेणी के उम्मीदवार की पदोन्नति के अधीनस्थ करती है।

2.2.2. पदोन्नति में अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति के लिए क्रीमी लेयर मानदंड (Creamy Layer Criteria for SC/ST in Promotions)

सुर्ख़ियों में क्यों?

हाल ही में, केंद्र सरकार ने पदोन्नति में अनुसूचित जातियों (SCs) या अनुसूचित जनजातियों (STs) को आरक्षण देने से संबंधित **जरनैल सिंह बनाम लक्ष्मी नारायण गुप्ता वाद, 2018** में उच्चतम न्यायालय द्वारा प्रदत्त निर्णय के पुनर्विलोकन की मांग की है।

पृष्ठभूमि

- **जरनैल सिंह बनाम लक्ष्मी नारायण गुप्ता वाद (2018)** में उच्चतम न्यायालय ने सरकार से यह भी कहा था कि वह SC/ST के लिए क्रीमी लेयर मानदंड की शुरुआत करने की संभावना की जांच करे, क्योंकि यदि SC/ST के केवल कुछ वर्ग ही सभी प्रतिष्ठित नौकरियों पर कब्जा कर लेंगे, तो शेष वर्ग हमेशा की तरह पिछड़े ही बने रहेंगे।
- केंद्र सरकार ने न्यायालय से अपने फैसले पर पुनर्विचार करने और मामले को सात न्यायाधीशों की पीठ को सौंपने का आग्रह किया है।

क्रीमी लेयर

- **इंदिरा साहनी वाद (1992)** से इस अवधारणा की उत्पत्ति हुई है। उच्चतम न्यायालय ने सरकार से क्रीमी लेयर मानदंड को परिभाषित करने के लिए **आय, संपत्ति या पद (स्टेटस)** का निर्धारण करने हेतु निर्देश दिया था।
- वर्तमान में, आरक्षण हेतु क्रीमी लेयर मानदंड **अन्य पिछड़ा वर्ग (OBC)** के लिए लागू है।
- वर्तमान में, केंद्र और राज्य सरकार दोनों के समूह 'क' और समूह 'ख' के अधिकारी आदि तथा साथ ही प्रतिवर्ष 8 लाख से अधिक आय अर्जन करने वाले व्यक्ति क्रीमी लेयर के दायरे में आते हैं।

SC/ST के लिए क्रीमी लेयर अवधारणा को लागू करने के पक्ष में तर्क

- **बेहतर आय और पद:** SC और ST समुदाय के अंदर क्रीमी लेयर की अवधारणा से सामाजिक-आर्थिक गतिशीलता में सुधार आएगा, जिसके परिणामस्वरूप उनके प्रति होने वाले भेदभाव में कमी आएगी।
- **अनुच्छेद 335:** इसमें यह उल्लेख किया गया है कि सकारात्मक कार्यवाही, लोक प्रशासन की समग्र दक्षता के अधीन होनी चाहिए। पदोन्नति में आरक्षण संगठन की योग्यता-आधारित संस्कृति को प्रभावित कर सकता है।
- **सर्वाधिक सीमांत वर्ग को प्राथमिकता:** जरनैल सिंह वाद में प्रदत्त निर्णय में उच्चतम न्यायालय ने यह टिप्पणी की थी कि, आरक्षण के अधिकांश लाभ पिछड़ी जाति या वर्ग के शीर्ष क्रीमी लेयर द्वारा उठाया जा रहा है जिससे समाज के कमजोर वर्ग के हमेशा कमजोर बने रहने की प्रवृत्ति को अनावश्यक बल मिला है।

SC/ST के लिए क्रीमी लेयर अवधारणा को लागू करने के विपक्ष में तर्क

- **सेवाओं के अंदर भेदभाव:** यह तर्क दिया जाता है कि सेवाओं के भीतर व्यापक भेदभाव व्याप्त है। उदाहरण के लिए, SC/ST आयोग के पास लगभग 12,000 मामले लंबित हैं, जो सेवाओं में भेदभाव की शिकायत पर आधारित हैं।

VISION IAS

- **गरीबी-उन्मूलन कार्यक्रम नहीं:** दलितों के लिए आरक्षण आर्थिक पिछड़ेपन को कम करने के लिए नहीं है, बल्कि यह अस्पृश्यता पर आधारित सामाजिक भेदभाव को समाप्त करने हेतु परिकल्पित है। इस प्रकार, यह आर्थिक स्थिति से प्रत्यक्षतः संबंधित नहीं हो सकता है।
- **OBCs और SC के मध्य अंतर:** ऐतिहासिक रूप से OBCs द्वारा SC के समान भेदभाव के प्रकार और तीव्रता का सामना नही किया गया है। सामान्यतया, OBC समुदाय का कोई व्यक्ति यदि एक निश्चित आर्थिक स्थिति को प्राप्त कर लेता है, तो सामाजिक भेदभाव की सीमा भी उस हद तक कम हो जाती है।

आगे की राह

- **परामर्शीय दृष्टिकोण:** आरक्षण एक अति संवेदनशील विषय है, इस प्रकार इस पर कोई भी निर्णय सभी हितधारकों के परामर्श के उपरांत ही लिया जाना चाहिए।
- **अन्य उपायों का सुदृढ़ीकरण:** जैसे- दलित उद्यमिता को प्रोत्साहित करना, वहनीय ऋण प्रदान करना (यथा- स्टैंड-अप इंडिया योजना), जागरूकता बढ़ाना आदि कार्यकलाप अप्रत्यक्ष रूप से दलितों की सामाजिक-आर्थिक गतिशीलता में सुधार कर सकते हैं।

2.2.3. अन्य पिछड़े वर्गों का उप-वर्गीकरण {Sub-Categorization of Other Backward Classes (OBCs)}

सुर्ख़ियों में क्यों?

हाल ही में, केंद्रीय मंत्रिमंडल ने अन्य पिछड़े वर्गों (OBCs) के उप-वर्गीकरण के मुद्दे की जांच के लिए गठित आयोग के कार्यकाल विस्तार को स्वीकृति प्रदान कर दी है।

अन्य संबंधित तथ्य

- वर्ष 2017 में **OBCs के उप-वर्गीकरण की जाँच के लिए न्यायाधीश जी. रोहिणी (सेवानिवृत्त) की अध्यक्षता** में एक आयोग का गठन किया गया था। इसे भारतीय संविधान के **अनुच्छेद 340** के तहत गठित किया गया था। इसे OBC वर्गों के बीच लाभ के न्यायसंगत साझेदारी में सुधार करने के उद्देश्य से गठित किया गया है।
  - **अनुच्छेद 340** राष्ट्रपति को पिछड़े वर्गों की स्थितियों की **जांच के लिए एक आयोग** नियुक्त करने का अधिकार प्रदान करता है।
- **आयोग के अधिदेश में शामिल हैं:**
  - OBCs के केंद्रीय सूची के संदर्भ में जातियों एवं समुदायों के मध्य आरक्षण (**नौकरियों और शिक्षा में 27%** आरक्षण) संबंधी लाभों के अनुचित वितरण के प्रसार की जांच करना।
  - **OBCs के उप-वर्गीकरण के लिए एक वैज्ञानिक दृष्टिकोण** पर आधारित तंत्र, मानक, मानदंड और मापदंड के लिए योजना तैयार करना।

पृष्ठभूमि: मंडल आयोग

- वर्ष 1990 में, तत्कालीन केंद्र सरकार द्वारा यह घोषणा किया गया था कि अन्य पिछड़ा वर्ग (OBCs) को केंद्र सरकार की सेवाओं और सार्वजनिक क्षेत्र की इकाइयों {संविधान के अनुच्छेद 16(4) के तहत} से संबद्ध नौकरियों में 27 प्रतिशत आरक्षण दिया जाएगा।
- यह निर्णय **मंडल आयोग प्रतिवेदन** (1980) पर आधारित था, जिसे वर्ष 1979 में स्थापित किया गया था। इसकी अध्यक्षता बी.पी.मंडल द्वारा की गई थी। मंडल आयोग का अधिदेश जातिगत भेदभाव के निवारणार्थ सामाजिक या शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्गों की पहचान करना था।
- केंद्र सरकार के संस्थानों में OBCs के लिए आरक्षण हेतु अनुशंसा वर्ष 1992 में लागू की गई थी, जबकि **शिक्षा में आरक्षण वर्ष 2006 में लागू हुआ था {संविधान के अनुच्छेद 15(4) के तहत}।**
- यह सुनिश्चित करने के लिए कि मंडल आयोग की अनुशंसाओं का लाभ सबसे पिछड़े समुदायों को प्राप्त हो, उच्चतम न्यायालय ने **'इंदिरा साहनी निर्णय' (1992)** द्वारा क्रीमी लेयर मानदंड को लागू किया था।
  - **8 लाख रुपये या उससे अधिक की वार्षिक आय वाले एक परिवार** को OBCs के मध्य 'क्रीमी लेयर' के रूप में वर्गीकृत किया गया है और इसलिए वह आरक्षण के लिए पात्र नहीं है।

उप-वर्गीकरण का विचार

- वर्ष 1955 की प्रथम पिछड़ा वर्ग आयोग की रिपोर्ट ने OBCs को **पिछड़े और अत्यंत पिछड़े समुदायों** में उपवर्गीकृत करने का

VISION IAS

प्रस्ताव प्रस्तुत किया था।

- वर्ष 1979 की मंडल आयोग की रिपोर्ट में, सदस्य एल.आर.नाइक ने एक **असहमति नोट** द्वारा **मध्यवर्ती और दमित पिछड़े वर्गों** में उप-वर्गीकरण का प्रस्ताव प्रस्तुत किया था।
- वर्ष 2015 में, **राष्ट्रीय पिछड़ा वर्ग आयोग (NCBC) ने प्रस्ताव किया था** कि OBCs को निम्नलिखित तीन श्रेणियों में विभाजित किया जाना चाहिए:
  (a) **अत्यंत पिछड़े वर्ग (Extremely Backward Classes) (EBC-ग्रुप A):** इसमें उन समुदायों शामिल किया जाना चाहिए, जो OBCs के भीतर भी सामाजिक, शैक्षणिक और आर्थिक पिछड़ेपन का सामना कर रहे हैं। इन समुदायों में आदिम जनजातियां, घुमंतू और अर्द्ध-घुमंतू जनजातियां भी सम्मिलित हैं, जो अपने पारंपरिक व्यवसायों में संलग्न हैं।
  (b) **अधिक पिछड़े वर्ग (More Backward Classes) (MBC-ग्रुप B):** इसके अंतर्गत वे व्यावसायिक समूह शामिल होंगे, जो अपने पारंपरिक व्यवसायों को जारी रखे हुए हैं।
  (c) **पिछड़े वर्ग (Backward Classes) (BC-ग्रुप C)** में तुलनात्मक रूप से अधिक समर्थ वर्ग शामिल होंगे।
- NCBC के अनुसार, **11 राज्यों** (आंध्र प्रदेश, तेलंगाना, पुडुचेरी, कर्नाटक, हरियाणा, झारखंड, पश्चिम बंगाल, बिहार, महाराष्ट्र, राजस्थान और तमिलनाडु) ने राज्य-सरकार के स्वामित्व वाले संस्थानों में **आरक्षण के लिए OBCs का उप-वर्गीकरण किया गया है।**

OBCs कौन हैं?

- OBC एक सामूहिक शब्द है, जिसका उपयोग सरकार द्वारा शैक्षिक या सामाजिक रूप से वंचित जातियों को वर्गीकृत करने के लिए किया जाता है।
- OBCs एक विशाल विजातीय समूह हैं। इसमें विभिन्न जातियां या उपजातियां शामिल हैं, जिनकी सामाजिक और आर्थिक स्थिति में काफी भिन्नताएं विद्यमान हैं।
  - उदाहरण के लिए, उत्तर और दक्षिण भारत दोनों में OBCs में भू-स्वामी समुदाय शामिल हैं, जबकि दूसरी तरफ निर्वाह श्रम पर जीवन व्यतीत करने वाले समाज के कई निर्धन वर्ग भी इसके अंतर्गत आते हैं।

उप-वर्गीकरण का और समिति की संभावित अनुशंसाओं की आवश्यकता क्यों है?

- **आरक्षण का लाभ केवल सीमित वर्गों तक ही पहुँच पाया है:** रोहिणी आयोग ने इस बात पर प्रकाश डाला कि केंद्रीय सूची में सम्मिलित **2,633 OBCs** जातियों में से लगभग **1,900 जातियों** को आनुपातिक लाभ नहीं मिला है।
  - **इन 1,900 जातियों में से आधी जातियों को आरक्षण का लाभ बिलकुल भी प्राप्त नहीं हुआ है,** तथा अन्य आधी जातियों में वे जातियां शामिल हैं जिनकी **OBC** कोटा में **3** प्रतिशत से भी कम की भागीदारी है।
  - आयोग ने इस बात पर प्रकाश डाला कि **OBC आरक्षण का 25% लाभ** केवल **10 उप-जातियों** ने उठाया है।
  - समिति के अनुसार, जिन समुदायों को आरक्षण का लगभग कोई लाभ प्राप्त नहीं हुआ है, उनमें हाशिए पर पड़े कई अन्य समूहों के अतिरिक्त व्यवसाय-आधारित जातियां जैसे कि पारंपरिक रूप से टिन पॉलिश करने वाला समुदाय **कलैगर (Kalaigars);** और पारंपरिक रूप से चाकू तेज करने वाले (चाकुओं पर धार लगाने वाले) समुदाय **सिकलीगर और सरनी** सम्मिलित हैं।
- **लाभ आर्थिक रूप से सशक्त उप-वर्गों की ओर झुके हुए हैं:** शोध से ज्ञात होता है कि मंडल आयोग की अनुशंसाओं ने अत्यंत पिछड़ी जातियों की तुलना में आर्थिक रूप से बेहतर स्थिति वाली अन्य पिछड़ी जातियों को सहायता प्रदान की है।

इस संबंध में अनुशंसाएं

- 2,633 OBCs की केंद्रीय सूची में से लगभग 1,900 जातियों के लिए 27 प्रतिशत के OBC कोटा के भीतर **8 से 10 प्रतिशत के मध्य एक निश्चित कोटा देना।**
  - ये 1,900 जातियां अन्य समूहों को महत्वपूर्ण रूप से प्रभावित नहीं करेंगी, बल्कि उनके लिए पर्याप्त अवसर उत्पन्न हो सकते हैं।
- उप-वर्गीकरण **सामाजिक पिछड़ेपन पर आधारित न होकर OBCs के मध्य सापेक्ष लाभ पर आधारित** होना चाहिए, इससे वंचित वर्गों को कोटा में उनकी उचित भागीदारी का लाभ प्राप्त करने में सक्षम होने में सहायता मिल सकती है।

इसके कार्यान्वयन में क्या चुनौतियाँ हैं?

- **इस मुद्दे की राजनीतिक संवेदनशीलता:** OBCs का उप-वर्गीकरण करने का यह कदम OBCs के कुछ वर्गों में भय उत्पन्न कर सकता है क्योंकि इससे लाभ का पुनर्वितरण होगा।

VISION IAS

- ज्ञातव्य है कि OBC आरक्षण अतीत में राजनीतिक उथल-पुथल का कारण रहा है।

- **पुराने और अविश्वसनीय प्राक्कलनों का उपयोग:** आयोग ने कोटा के भीतर कोटा के लिए वर्ष **1931 की जनगणना के जनसंख्या आंकड़ों** को अपनी अनुशंसाओं का आधार बनाया है न कि अभी हाल ही की नवीनतम सामाजिक-आर्थिक जातीय जनगणना (SECC) 2011 को आधार बनाया है।
  - मंडल आयोग की रिपोर्ट लागू होने के पश्चात्, **OBCs की केंद्रीय सूची में 500 नवीन जातियों को शामिल किया गया है।** वर्ष 1931 की जनगणना में इन नये जोड़े गए जातियों की जनसंख्या सम्मिलित नहीं थी।
  - वर्ष 1931 की जनगणना में **उन रियासतों की जनसंख्या भी सम्मिलित नहीं** थी, जिन पर **अंग्रेजों का शासन नहीं था।**
- **सामाजिक एवं शैक्षिक स्थिति पर सूचना की अनुपलब्धता:** विभिन्न जातियों के सामाजिक एवं शैक्षिक पिछड़ेपन के संबंध में जानकारी का अभाव है।
- यह निम्नलिखित कारणों से **सांख्यिकीय रूप से अत्यधिक कठिन अभ्यास** हो सकता है:
  - **जातियों की व्यापक संख्या:** राष्ट्रीय पिछड़ा वर्ग आयोग के अनुसार, देश में **2,514 OBC** जातियां हैं तथा विश्लेषण द्वारा प्रत्येक जाति का वैज्ञानिक उप-वर्गीकरण करना चुनौतीपूर्ण हो सकता है।
  - **एक राज्य से दूसरे राज्य में भिन्नता:** एक राज्य से दूसरे राज्य में जातियों के भीतर महत्वपूर्ण भिन्नताएँ हैं, जिसका तात्पर्य यह है कि व्यापक और अत्यधिक सुदृढ़ तरीके से आंकड़ों का संग्रह करना चाहिए।

लाभों की न्यायसंगतता सुनिश्चित करने के लिए और क्या किया जा सकता है?

- **क्रीमी लेयर की सीमा को संशोधित करना:** राष्ट्रीय पिछड़ा वर्ग आयोग ने मांग की है कि आय की सीमा को आगे और अधिक संशोधित किया जाए क्योंकि वर्तमान सीमा संबंधित क्रय शक्ति के साथ अद्यतन नहीं है।
- **राष्ट्रीय पिछड़ा वर्ग आयोग (NCBC) को शक्तिशाली बनाना:** आयोग को संवैधानिक दर्जा प्रदान करके NCBC की शक्तियों और कार्य क्षेत्र का विस्तार करना।

राष्ट्रीय पिछड़ा वर्ग आयोग (National Commission for Backward Classes: NCBC)

- अब तक, **अनुच्छेद 338** के तहत, राष्ट्रीय अनुसूचित जाति आयोग (National Commission of Scheduled Castes: NCSC) द्वारा OBCs की शिकायतों का समाधान किया जाता था।
- वर्तमान NCBC {संविधान के अनुच्छेद 338b के अंतर्गत राष्ट्रीय पिछड़ा वर्ग आयोग अधिनियम, 1993 के तहत गठित} केवल OBC सूची से **जातियों को शामिल करने और हटाने** तथा आरक्षण के लाभ से इन जातियों को पृथक करने वाली "क्रीमी लेयर" के लिए आय के स्तर को निर्धारित करने की **अनुशंसा** कर सकता है।
- **123वां संवैधानिक संशोधन विधेयक (102वां संवैधानिक संशोधन अधिनियम)** का उद्देश्य NCBC को संवैधानिक दर्जा प्रदान करना है, जो इसे सामाजिक और आर्थिक रूप से पिछड़े वर्गों के आयोग के समान अधिकार प्रदान करेगा। राष्ट्रीय अनुसूचित जाति आयोग द्वारा निष्पादित किए जाने वाले कार्य भी अब इस नए आयोग में स्थानांतरित हो जाएंगे।
- इस संशोधन के माध्यम से अनुच्छेद 342a और अनुच्छेद 366 में भी परिवर्तन किए गए हैं।
  - अनुच्छेद 342a सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्गों की केंद्रीय सूची से संबंधित है।
  - अनुच्छेद 366 में संविधान में प्रयुक्त परिभाषाएँ शामिल हैं, जब तक कि संदर्भ से अन्यथा अपेक्षित न हो।
- इस विधेयक के अनुसार, **NCBC में राष्ट्रपति द्वारा नियुक्त पांच सदस्य शामिल होंगे।** उनके कार्यकाल और सेवा की शर्तें भी राष्ट्रपति द्वारा ही तय की जाएंगी।
- **इस आयोग द्वारा निष्पादित किए जाने वाले प्रमुख कार्य:**
  - आरक्षण लागू न होने, आर्थिक शिकायतें, हिंसा आदि से संबंधित शिकायतों के मामले में नागरिक इस आयोग के समक्ष अपनी समस्याएं प्रस्तुत कर सकेंगे।
  - अधिनियम प्रस्तावित आयोग को **अधिकारों और रक्षोपायों से वंचित होने की शिकायतों की जांच करने की शक्ति प्रदान करता है।**
  - इसे एक **दीवानी न्यायालय के समान मुकदमा चलाने,** किसी को सम्मन जारी करने, दस्तावेज़ों को प्रस्तुत करने और शपथ पत्र पर साक्ष्य प्राप्त करने की अनुमति प्रदान की गई है।

VISION IAS

संबंधित सुर्ख़ियाँ

अनुसूचित जातियों एवं अनुसूचित जनजातियों का उप-वर्गीकरण

- हाल ही में, उच्चतम न्यायालय की पांच-न्यायाधीशों की संविधान पीठ ने इस मुद्दे पर विधिक वाद-विवाद को पुनः आरंभ कर दिया है।
- **पृष्ठभूमि:**
  - वर्ष 2005 में ई. वी. चिनैय्या वाद में, न्यायालय ने निर्णय दिया कि अनुसूचित जातियों का विशेष संरक्षण इस आधार पर है कि **"सभी अनुसूचित जातियाँ परस्पर असमानता से निरपेक्ष आरक्षण के लाभों का सामूहिक रूप से उपभोग कर सकती हैं और उन्हें करना चाहिए"** क्योंकि संरक्षण शैक्षिक, आर्थिक या अन्य इस प्रकार के कारकों पर आधारित नहीं है बल्कि पूर्णतः उन लोगों पर आधारित है जिन्होंने **अस्पृश्यता का सामना किया है।**
  - पीठ ने सभी अनुसूचित जातियों का समान प्रतिनिधित्व सुनिश्चित करने के लिए **कुछ अनुसूचित जातियों को अधिमान्य उपचार देने के पक्ष में निर्णय दिया,** लेकिन पीठ ने निर्णय लेने के लिए इस मुद्दे को एक बड़ी खंडपीठ को संदर्भित कर दिया क्योंकि E.V. चिनैय्या वाद का निर्णय भी पांच सदस्यीय पीठ द्वारा किया गया था।
- **उप-वर्गीकरण की आवश्यकता:** राज्यों ने तर्क दिया कि अनुसूचित जातियों में कुछ ऐसी जातियां हैं जिनका आरक्षण के बावजूद अन्य अनुसूचित जातियों की तुलना में स्थूल रूप से कम प्रतिनिधित्व बना हुआ हैं।
  - उदाहरण के लिए, आंध्र प्रदेश, पंजाब, तमिलनाडु एवं बिहार में, सर्वाधिक सुभेद्य दलितों के लिए विशेष कोटा आरंभ किया गया है। वर्ष **2007** में, बिहार ने महादलित आयोग का गठन किया ताकि अनुसूचित जातियों के भीतर उन जातियों की पहचान की जा सके जो पीछे छूट गई हैं।
- **उप-वर्गीकरण आरंभ करने की संभावित विधियां:**
- **क्रीमी लेयर:** अनुसूचित जातियों के भीतर "क्रीमी लेयर" की अवधारणा को वर्ष **2018** में न्यायालय ने जरनैल सिंह बनाम लछमीनारायण गुप्ता के निर्णय में बरकरार रखा।
- **अधिमान्य उपचार**: पंजाब का कानून बाल्मीकि और मज़हबी सिखों को वरीयता देकर अनुसूचित जातियों (SCs) एवं अनुसूचित जनजातियों (STs) के लिए क्रीमी लेयर लागू करता है।

2.2.4. निजी क्षेत्र में रोजगार के लिए स्थानीय आरक्षण का मुद्दा (Issue of Local Reservation in Private Sector Jobs)

सुर्ख़ियों में क्यों?

हाल ही में, हरियाणा मंत्रिमंडल ने एक अध्यादेश के प्रारूप को स्वीकृति प्रदान की है, जिसके अंतर्गत **प्राथमिकता के आधार पर स्थानीय आबादी के बेरोजगारी संबंधी पहलुओं के समाधान** हेतु स्थानीय निवासियों के लिए निजी उद्यमों में 75 प्रतिशत नौकरियों को आरक्षित किया जाएगा।

पृष्ठभूमि

- वर्ष 2016 में सेंटर फॉर द स्टडी ऑफ डेवलपिंग सोसाइटीज (CSDS) द्वारा किए गए एक सर्वेक्षण में दर्शाया गया है कि **लगभग दो तिहाई उत्तरदाता इस पक्ष में थे** कि रोज़गार के अवसरों में राज्य के लोगों को ही प्राथमिकता दी जानी चाहिए।
- **आंध्र प्रदेश, मध्य प्रदेश, कर्नाटक, गुजरात, महाराष्ट्र** आदि अन्य राज्यों में भी इसी प्रकार की मांग की जा रही है।
  - विगत वर्ष **आंध्र प्रदेश** में स्थानीय लोगों को रोज़गार में 75 प्रतिशत आरक्षण प्रदान किया गया था, हालांकि यह मामला न्यायालय के समक्ष विचाराधीन (sub judice) है तथा आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय द्वारा इस मामले को असंवैधानिक घोषित किया जा सकता है।
- इस प्रकार के प्रयासों को मुख्य रूप से **समावेशी विकास को बढ़ावा देने के रूप में स्वीकार किया** जाता है। उदाहरण के लिए, जर्मनी में, प्रत्येक गाँव में एक कारखाना स्थित है। भारत भी सर्वांगीण विकास के लिए गांवों में उद्योग की स्थापना करके स्थानीय लोगों को रोज़गार प्रदान कर सकता है। हालांकि, इस प्रकार के विकास को बढ़ावा देने के लिए संघ स्तर पर एक व्यापक रूपरेखा निर्मित की जानी चाहिए।

VISION IAS

स्थानीय नौकरियों की मांग हेतु उत्तरदायी कारण

- **बढ़ती बेरोज़गारी:** महामारी के कारण बेरोज़गारी के आंकड़ों में तीव्र वृद्धि और कौशल उपलब्धता का अभाव तथा अल्प नियोजनीयता इत्यादि के कारण भविष्य में स्थानीय नौकरियों की मांग में बढ़ोत्तरी हो सकती है।
- **कृषि संकट:** संपूर्ण देश में कृषि क्षेत्र की स्थिति अत्यधिक तनावपूर्ण है और युवा इस क्षेत्र का परित्याग करने हेतु बाध्य हैं, इसलिए वे स्थानीय स्तर पर नौकरियों की तलाश हेतु प्रयासरत हैं।
- **भूस्वामियों का विस्थापन:** चूंकि भूमि की अधिकांश आवश्यकता, निजी कृषि भूमि को अधिग्रहित करके पूर्ण की जाती रही है, अतः इससे अधिकतर भूस्वामी विस्थापित होते जा रहे हैं, साथ ही वे अपने व्यवसाय से भी वंचित हो गए हैं। इस प्रकार आय से संबंधित क्षति, स्थानीय स्तर की नौकरियों की मांग को प्रोत्साहित कर सकती है।
- **कार्यबल में सभी वर्गों की भागीदारी का अभाव:** कई रिपोर्टों जैसे, स्टेट ऑफ़ वर्किंग इंडिया 2018 (the State of Working India 2018) में उल्लेखित किया गया है कि कारपोरेट क्षेत्र में दलितों और मुसलमानों का निम्न प्रतिनिधित्व होने का एक प्रमुख कारण उनके साथ भेदभाव है। हालाँकि, आरक्षण इस भेदभाव का उन्मूलन करने में इन वर्गों की सहायता कर सकता है।
- **केंद्र द्वारा अपर्याप्त धन हस्तांतरण की अवधारणा:** विशेष रूप से दक्षिण भारतीय राज्यों में, जैसा कि वे मानते रहे हैं कि वित्त आयोग ने विकास के संबंध में सदैव निर्धनता और जनसंख्या को उच्च भारांश प्रदान किया है, जिसके कारण अधिकांश हिस्सा उत्तरी राज्यों को अंतरित हो जाता है। इस संदर्भ में स्थानीय आरक्षण उन्हें अप्रत्यक्ष आर्थिक न्याय का भाव प्रदान करता है।
- **प्रवास का विस्तार:** राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण कार्यालय (NSSO) द्वारा किए गए सर्वेक्षण और आर्थिक सर्वेक्षण तथा वर्ष 2011 की जनगणना से प्राप्त कुछ अनुमान यह दर्शातें हैं कि कुल 65 मिलियन लोग अंतर-राज्य प्रवासी (inter-state migrants) हैं, और इनमें से 33 प्रतिशत प्रवासी श्रमिक हैं। ये प्रवासी श्रमिक श्रम बाजार की प्रतिस्पर्धा को बढ़ाते हैं, जिसके कारण स्थानीय आरक्षण की मांग में वृद्धि होती है।

इस अध्यादेश के कार्यान्वयन से संबंधित मुद्दे

- **विधिक संवीक्षा के दौरान इसके रद्द होने का भय:** यह अध्यादेश अनुच्छेद 14 (समता का अधिकार) और अनुच्छेद 16 (अवसर की समता का अधिकार) का उल्लंघन करता है। इसके अतिरिक्त, अनुच्छेद 16 के अनुसार केवल निवास के आधार पर **नियोजन में आरक्षण प्रदान करने का अधिकार संसद को प्राप्त है न कि राज्य सरकार को** तथा संसद के लिए भी यह अधिकार केवल सार्वजनिक क्षेत्र तक ही सीमित है।
- **देश की एकता के लिए खतरनाक:** इस प्रकार के कदमों से एक पेंडोरा बॉक्स (Pandora's box) (अप्रत्याशित नवीन समस्याएं) जैसी स्थितियों को बढ़ावा मिल सकता है जहां अन्य राज्य भी ऐसी नीतियों को लागू करना प्रारंभ कर सकते हैं, जिसके परिणामस्वरूप भारत की एकता प्रभावित हो सकती है।
- **उद्योग जगत की चिंताएं:** यद्यपि, अधिकांश इकाइयां स्थानीय लोगों को ही रोज़गार प्रदान करती हैं, तथापि, कुछ निश्चित क्षेत्र जैसे रासायनिक प्रौद्योगिकी, वस्त्र और जैव प्रौद्योगिकी इत्यादि ऐसे क्षेत्र है, जहां विशेष रोज़गार के लिए स्थानीय लोगों की उपलब्धता को सुनिश्चित कर सकना कठिन हो जाता है, तब इकाइयों को अन्य क्षेत्रों के लोगों को रोज़गार प्रदान करने हेतु बाध्य होना पड़ता है।
    - इससे संभवतः भ्रष्टाचार को बढ़ावा प्राप्त होगा और साथ ही, **व्यवसाय करने में सुगमता (ease of doing business) की दिशा में एक अन्य अवरोध भी उत्पन्न हो सकता है।**
    - **निवेश आकर्षित करने में कठिनाई:** इस प्रकार के निर्णय उद्योगों के अन्यत्र स्थानांतरण को बढ़ावा दे सकते हैं। साथ ही यह संभावित निवेशकों को भी हतोत्साहित कर सकता है। इस प्रकार निवेश में कमी से रोज़गार सृजन में भी गिरावट आ सकती है।
    - इससे सूक्ष्म या लघु इकाइयां विशेष रूप से प्रभावित नहीं होंगी, क्योंकि वे अभी भी स्थानीय लोगों को ही अत्यधिक संख्या में नियोजित करती हैं। हालांकि, मध्यम और वृहद स्तर की कंपनियां तथा MNCs, जैसे- ऑटो उद्योग, जिनका हरियाणा के राज्य सकल घरेलू उत्पाद (GDP) में 25 प्रतिशत से अधिक का योगदान है, प्रतिकूल रूप से प्रभावित हो सकती हैं।
    - चूंकि ये औद्योगिक इकाइयां (सूक्ष्म या छोटी इकाइयां) अन्य स्थानों से श्रमिकों का आयात नहीं कर सकती हैं; इसलिए आवश्यक कौशल को लागू करने और रोज़गार देने का भार, स्थानीय इकाइयों पर ही पड़ेगा।

निष्कर्ष

नौकरियों में स्थानीय लोगों को आरक्षण प्रदान करना संभवत: दीर्घावधि तक उनके लिए आर्थिक अवसर सुनिश्चित नहीं कर सकता है। इस हेतु **शिक्षा के मानक स्तर में वृद्धि** और आवश्यक संरचनात्मक सुधारों के साथ-साथ **युवाओं को कौशल प्रदान** करना ही एकमात्र उपाय है, जो वास्तविक रूप में आर्थिक हिस्सेदारी (economic pie) को एक व्यापक स्वरूप प्रदान कर सकते हैं।

VISION IAS

2.2.5. नौकरी में आरक्षण और पदोन्नति के लिए कोटा मूल अधिकार नहीं (Job Reservations, Promotion Quotas not a Fundamental Right)

सुर्ख़ियों में क्यों?

हाल ही में, उच्चतम न्यायालय ने यह फैसला सुनाया कि संविधान के अनुच्छेद 16(4) और 16(4A) के अंतर्गत नियुक्तियों और पदोन्नति में आरक्षण कोई मूल अधिकार नहीं है।

अन्य संबंधित तथ्य

- यह मामला वर्ष 2012 में उत्तराखंड सरकार के एक निर्णय से संबंधित है। उल्लेखनीय है कि वर्ष 2012 में उत्तराखंड सरकार ने अनुसूचित जाति (SC) और अनुसूचित जनजाति (ST) समुदाय के सदस्यों को आरक्षण प्रदान किए बिना सार्वजनिक सेवाओं में पदों को भरने का निर्णय लिया था।

उच्चतम न्यायालय के इस निर्णय से संबंधित अन्य तथ्य

उच्चतम न्यायालय का यह मानना है कि:

- संविधान के अनुच्छेद 16(4) और 16(4-A) के तहत उपलब्ध प्रावधान **सक्षमकारी प्रावधान (enabling provisions)** हैं। इन अनुच्छेदों के तहत राज्य सरकारों में विवेकाधिकार की शक्ति निहित है कि वे परिस्थितियों की मांग के अनुरूप आरक्षण के लिए उपबंध कर सकती हैं।
- यह सुस्थापित विधि है कि **राज्य को सार्वजनिक पदों पर नियुक्ति हेतु आरक्षण प्रदान करने के लिए निर्देशित नहीं** किया जा सकता है। इस निर्णय में यह भी कहा गया कि राज्य, पदोन्नति के मामलों में SC और ST के लिए आरक्षण प्रदान करने हेतु बाध्य नहीं है।
- हालांकि, यदि **राज्य अपने विवेक का उपयोग करते हुए इस तरह का कोई प्रावधान** करता है तो उसे सार्वजनिक सेवाओं में उस वर्ग के प्रतिनिधित्व की "अपर्याप्तता" दर्शाने वाले मात्रात्मक (quantifiable) डाटा एकत्र करना होगा।
- यदि पदोन्नति में आरक्षण प्रदान करने के संबंध में राज्य सरकार के निर्णय को चुनौती दी जाती है, तब संबंधित राज्य सरकार के लिए प्रशासन की सामान्य दक्षता को प्रभावित किए बिना SC और ST के प्रतिनिधित्व की अपर्याप्तता के आधार पर आरक्षण की आवश्यकता संबंधी मात्रात्मक डाटा को न्यायालय के समक्ष रखना अनिवार्य होगा, जो कि अनुच्छेद 335 के अनुसार अनिवार्य है।

उच्चतम न्यायालय के इस निर्णय का विश्लेषण

- विधि के अधीन यह तथ्य सुस्थापित है कि एक मूल अधिकार के तौर पर आरक्षण का दावा नहीं किया जा सकता है। न्यायालय के कई पूर्व निर्णयों द्वारा इसे इंगित भी किया गया है।
  - **सी. ए. राजेंद्रन बनाम भारत संघ वाद** (वर्ष 1967) में पांच न्यायाधीशों की एक पीठ ने यह निर्णय दिया था कि "सरकार का यह कोई संवैधानिक कर्तव्य नहीं है कि वह SC और ST के लिए नियुक्ति के प्रारंभिक चरण में या पदोन्नति के चरण में आरक्षण का उपबंध करे।"
  - नौ न्यायाधीशों की पीठ वाली **इंद्रा साहनी बनाम भारत संघ वाद** (वर्ष 1992) और पाँच न्यायाधीशों की पीठ वाली **एम. नागराज बनाम भारत संघ वाद** (वर्ष 2006) में प्रदत्त निर्णय सहित कई अन्य निर्णयों में न्यायालय ने इस तथ्य को दोहराया है।
- यद्यपि, यह विधिक स्थिति सुस्थापित हो चुकी है, तथापि यह समानता के संवैधानिक दृष्टिकोण के केंद्र में कुछ अन्य सिद्धांतों के साथ अवरोध उत्पन्न करती है।
  - **एन. एम. थॉमस वाद** (वर्ष 1976) में उच्चतम न्यायालय ने यह निर्णय दिया था कि संविधान सारभूत समानता (substantive equality) के विचार के प्रति प्रतिबद्ध है, अतः यह निर्धारित करते समय कि "समान उपचार" में क्या शामिल है, न्यायालय के लिए लोगों की वास्तविक परिस्थितियों का संज्ञान लेना चाहिए।
  - इस **स्थिति को अपनाने के पीछे सैद्धांतिक कारण** यह था कि लोगों के ऐसे समूह, जो समाज में दूसरों के साथ "समान शर्तों" पर प्रतिस्पर्धा करने के संदर्भ में संरचनात्मक और संस्थागत बाधाओं का सामना करते हैं - जिसके कारण ऐतिहासिक हैं और जिनके प्रभाव स्थायी प्रकृति के हैं - उनसे इस प्रकार व्यवहार किया जाना चाहिए जो असमानता की वर्तमान स्थितियों को कम करता है।
- ऐसे में अनुच्छेद 16 में लिखे गए शब्दों को अक्षरशः पढ़कर राज्य के दायित्वों की व्याख्या करना एक उचित दृष्टिकोण नहीं है। मूल अधिकार कोई पृथक प्रावधान नहीं हैं तथा इन्हें समग्र रूप में परस्पर संबद्ध कर देखा जाना चाहिए।

VISION IAS

- चूंकि, उच्च पदों पर प्रत्यक्ष नियुक्ति के लिए अत्यल्प साधन उपलब्ध हैं, इसलिए उच्च पदों पर पिछड़े वर्गों के युक्तियुक्त प्रतिनिधित्व के लिए आरक्षण की एक प्रमुख भूमिका है।
    - विगत वर्ष संसद द्वारा उपलब्ध कराए गए आकड़ों के अनुसार, केंद्र में पदस्थापित 89 सचिवों में से SC और ST समुदाय से संबद्ध केवल क्रमशः एक और तीन सचिव पदस्थापित थे। इस संदर्भ में न्यायालय का उक्त निर्देश उच्च पदों पर सारभूत समानता के सिद्धांत के विरुद्ध जा सकता है।

2.2.6. राज्यों में 'आर्थिक रूप से कमजोर वर्गों' के लिए कोटा (EWS Quota in States)

सुर्ख़ियों में क्यों?

हाल ही में, केंद्र सरकार ने उच्चतम न्यायालय को बताया कि राज्य सरकारें यह निर्धारित करने के लिए स्वतंत्र हैं कि नौकरियों और शैक्षणिक संस्थानों में आर्थिक रूप से पिछड़े वर्गों के लिए 10% आरक्षण लागू किया जाए या नहीं।

'आर्थिक रूप से कमजोर वर्गों' के लिए कोटा

- **103वें संविधान संशोधन अधिनियम, 2019 द्वारा संविधान में अनुच्छेद 15(6) और अनुच्छेद 16(6) को अंतःस्थापित कर सामान्य वर्ग में EWS के लिए आरक्षण का प्रावधान किया गया है।**
- अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति (SC/ST) और सामाजिक एवं शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्गों के लिए निर्धारित 50% आरक्षण नीति के तहत कवर न किए गए निर्धन लोगों के कल्याण को बढ़ावा देने हेतु इसे अधिनियमित किया गया है।
- सरकार को EWS की उन्नति के लिए विशेष उपाय करने में सक्षम बनाने हेतु अनुच्छेद 15 में संशोधन किया गया है।
- शैक्षणिक संस्थानों में प्रवेश हेतु ऐसे वर्गों के लिए 10% तक सीटें आरक्षित की जा सकती हैं। अल्पसंख्यक शिक्षण संस्थानों में इस प्रकार का आरक्षण लागू नहीं होगा।
- नवीन अंतःस्थापित अनुच्छेद 16(6) सरकार को नागरिकों के "आर्थिक रूप से कमजोर वर्गों" के लिए सभी पदों के 10% तक सीटों को आरक्षित करने की अनुमति प्रदान करता है।
- EWS के लिए 10% तक का आरक्षण संबंधी प्रावधान SC, ST और OBCs के लिए 50% आरक्षण की मौजूदा आरक्षण सीमा के अतिरिक्त होगा।
- केंद्र सरकार द्वारा पारिवारिक आय और प्रतिकूल आर्थिक स्थिति के अन्य संकेतकों के आधार पर EWS को अधिसूचित किया जाएगा।

आर्थिक स्थिति के आधार पर आरक्षण प्रदान करने के पक्ष में तर्क

- **नए अभाव मूल्यांकन मानदंड की आवश्यकता:** यद्यपि जाति, भारत में अन्याय का प्रमुख कारण रहा है परन्तु इसे किसी वर्ग के पिछड़ेपन के एकमात्र निर्धारक के रूप में नहीं मानना चाहिए। इसका कारण बदली हुई परिस्थितियों में जाति एवं वर्ग के मध्य के कमजोर होती संबद्धता हैं।
- **राम सिंह बनाम भारत संघ (2015) वाद** में उच्चतम न्यायालय के अनुसार सामाजिक अपूर्णताएं जाति (जैसे कि आर्थिक स्थिति/ट्रांसजेंडरों की लैंगिक पहचान) अवधारणा से परे विद्यमान हो सकती हैं। इसलिए, पिछड़ेपन की जाति-केंद्रित परिभाषा से परे जाकर नए मानदंड विकसित करने की आवश्यकता है, ताकि मौजूदा सूची गतिशील बनी रहे और सर्वाधिक पिछड़े व्यक्ति को सकारात्मक कार्रवाई का लाभ प्राप्त हो सके।
- **विभिन्न वर्गों के मध्य असंतोष में वृद्धि:** राजनीतिक रूप से, वर्गीय मुद्दों की तुलना में जातिगत मुद्दे अधिक वर्चस्वशाली होते हैं। इसके कारण समान स्थिति अथवा अपेक्षाकृत कमजोर आर्थिक स्थिति वाले समुदायों के मध्य असंतोष की भावना उत्पन्न होती है, जिन्हें जाति-आधारित आरक्षण से बाहर रखा जाता है।

आर्थिक स्थिति के आधार पर विस्तारित आरक्षण के विपक्ष में तर्क

- **एम. नागराज बनाम भारत संघ वाद (2006)** में उच्चतम न्यायालय की संविधान पीठ ने निर्णय दिया कि समानता, संविधान की मूल संरचना (basic structure) का एक भाग है। 50% की सीमा एक संवैधानिक आवश्यकता है जिसके बिना अवसर की समानता की संरचना समाप्त हो जाएगी।
- **आरक्षण का प्राथमिक उद्देश्य,** अब तक वंचित वर्ग में शामिल लोगों को प्रतिनिधित्व प्रदान करना था न कि आर्थिक रूप से वंचित लोगों के लिए निर्धनता उन्मूलन कार्यक्रम के रूप कार्य करना। यह संशोधन आरक्षण के इस प्राथमिक उद्देश्य के विरुद्ध है।

VISION IAS

- **EWS की परिभाषा और कोटे का आवंटन:** EWS की वर्तमान परिभाषा के साथ चुनौती यह है कि इसकी परिभाषा अत्यधिक व्यापक है और यह आबादी के एक बड़े हिस्से को शामिल करती है। इसके अतिरिक्त, इसमें गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन करने वाले परिवारों और 8 लाख रुपये प्रति वर्ष की आय वाले लोगों को भी एक ही श्रेणी में रखा गया है।
- **अप्रत्याशित नवीन समस्याओं का उद्भव:** सामाजिक न्याय सुनिश्चित करने हेतु एक उपकरण के रूप में आरक्षण संबंधी विभिन्न वर्गों की मांग में समय के साथ और वृद्धि हो सकती है। इससे दीर्घ अवधि में इस नीति के वास्तविक आधार को क्षति पहुंचेगी।
- **लोकलुभावनवाद का उपकरण:** राजनीति में राजनीतिक लाभ हेतु आरक्षण प्रदान करने को एक प्रभावी उपकरण के रूप में प्रयुक्त किया जाता है। यह सामाजिक न्याय के लिए एक उपकरण के रूप में इसकी विश्वसनीयता को प्रभावित करता है।

निष्कर्ष

एक ऐसे मॉडल की ओर अग्रसर होने की आवश्यकता है जो समग्र हो अर्थात सभी मुद्दों को दूर करने का प्रयास करती हो तथा भेदभाव के विभिन्न आधारों के संबंध में समाधान प्रदान करती हो। बेहतर लक्ष्यीकरण और असमानताओं (शुरुआत में ही) को दूर करने पर ध्यान केंद्रित करने के लिए सुदृढ़ डेटा संग्रह को भी बढ़ावा दिए जाने की आवश्यकता है। साथ ही, दीर्घ काल में कई अंतर्निहित असमानताओं को दूर करने के लिए एक बहु-आयामी दृष्टिकोण को अपनाया जाना चाहिए।

2.3. केशवानंद भारती वाद (Kesavananda Bharati Case)

सुर्ख़ियों में क्यों?

हाल ही में, **केशवानंद भारती श्रीपद्गलवरु और अन्य बनाम केरल राज्य वाद** के मुख्य याचिकाकर्ता केशवानंद भारती का निधन हो गया है।

केशवानंद भारती वाद के बारे में

- यह वाद **केरल भूमि सुधार अधिनियम, 1963** के तहत सरकार द्वारा केशवानंद की भूमि के अनिवार्य अधिग्रहण को चुनौती देने वाली केरल सरकार के विरुद्ध दायर एक याचिका से संबंधित थी। इस याचिका में राज्य सरकार पर भारतीय संविधान के **अनुच्छेद 25, 26 और 31** में प्रत्याभूत मूल अधिकारों (Fundamental Rights: FRs) के अतिक्रमण का आरोप लगाया था।
- इस मामले की सुनवाई 13 न्यायाधीशों की पीठ द्वारा की गई थी। यह उच्चतम न्यायालय की उस समय गठित सबसे बड़ी पीठ थी।
- सुनवाई की प्रक्रिया के आरंभ होने पर, **वाद के दायरे का निम्नलिखित को संबोधित करने के लिए विस्तार किया गया था-**
  - **गोलखनाथ मामले** की व्याख्या,
  - **अनुच्छेद 368** की व्याख्या (संविधान में संशोधन के लिए संसद की शक्ति)
  - **24वें संविधान संशोधन अधिनियम, 25वें संविधान संशोधन अधिनियम की धारा 2 और 3 तथा 29वें संविधान संशोधन अधिनियम** की वैधता।

पृष्ठभूमि

- **गोलकनाथ बनाम पंजाब राज्य वाद में,** उच्चतम न्यायालय ने यह निर्णय दिया था कि-
  - अनुच्छेद 368 में केवल संशोधन करने की प्रक्रिया शामिल है, परन्तु यह **संसद को संविधान में संशोधन करने की शक्ति प्रदान नहीं करता है।**
  - **संसद की संविधान संशोधन करने की शक्ति और विधायी शक्तियों** के मध्य कोई अंतर नहीं है और संविधान में किसी भी संशोधन को अनुच्छेद 13(2) (राज्य को मूल अधिकारों को हटाने या निरस्त करने के लिए कोई भी कानून बनाने से प्रतिबंधित करता है) में अंतर्विष्ट प्रावधान के सुसंगत कानून माना जाना चाहिए। इसका अनिवार्य रूप से यह तात्पर्य था कि **मूल अधिकारों को संसद द्वारा संशोधित नहीं किया जा सकता है।**
  - मूल अधिकारों में संशोधन के लिए एक नई संविधान सभा की आवश्यकता होगी।
- **गोलकनाथ मामले के उपरांत संसद द्वारा संविधान में कई संशोधन किए गए-**
  - **24वां संशोधन:** इसमें उपबंध किया गया कि-
    - संविधान संशोधन अनुच्छेद 13 के तहत 'विधि' नहीं हैं, इसलिए संसद में किसी भी मूल अधिकार में संशोधन करने की शक्ति निहित है।
    - संसद को भारत के संविधान के किसी भी प्रावधान को संशोधित करने की शक्ति प्राप्त है।
  - **25वां संशोधन:**
    - **इस अधिनियम की धारा 2** ने संपत्ति के अधिकार में कटौती की थी और सार्वजनिक उपयोग के लिए सरकार द्वारा निजी संपत्ति के अधिग्रहण की अनुमति प्रदान की थी। साथ ही, क्षतिपूर्ति की राशि का निर्धारण संसद द्वारा किया जाना था न कि न्यायालय द्वारा।

- **धारा 3** ने राज्य की नीति के निदेशक तत्वों (DPSPs) को मूल अधिकारों पर वरीयता प्रदान की थी और विभिन्न DPSPs {अनुच्छेद 39(b) और 39(C)} के तहत निर्धारित नीतियों को **न्यायिक पुनर्विलोकन के दायरे से मुक्त कर दिया था।**

○ **29वां संशोधन:**

- इसने भारत के संविधान की **नौवीं अनुसूची** (केंद्रीय और राज्य क़ानूनों की सूची जिसे न्यायालय में चुनौती नहीं दी जा सकती है) में दो भूमि सुधार कानून समाविष्ट किए थे।

केशवानंद भारती वाद के निष्कर्ष

- **24वें संशोधन की वैधता को बरकरार रखा गया:** उच्चतम न्यायालय ने निर्णय दिया कि संसद को संविधान के किसी भी या सभी प्रावधानों (मूल अधिकारों सहित) में संशोधन करने की शक्ति प्राप्त है, बशर्ते संशोधन द्वारा संविधान की अनिवार्य विशेषताओं या मूलभूत सिद्धांतों या मूल ढांचे में परिवर्तन, उनकी क्षति या लोप नहीं होना चाहिए। इसे **"मूल ढांचे के सिद्धांत" (Basic Structure Doctrine)** के रूप में जाना जाता है।
- **गोलकनाथ मामले के निर्णय को सही किया गया:** उच्चतम न्यायालय ने निर्णय दिया कि अनुच्छेद 368 में संविधान में संशोधन करने की शक्ति और प्रक्रिया दोनों शामिल हैं तथा **संसद की संविधान संशोधन करने की शक्तियां एवं विधायी शक्तियां भिन्न-भिन्न हैं।**
- **अन्य निर्णय:** उच्चतम न्यायालय ने न्यायिक पुनर्विलोकन (समीक्षा) की अपनी शक्ति को कम करने वाले हिस्सों को छोड़कर 25वें एवं 29वें संशोधन को वैध स्वीकार किया और यह भी कहा कि **उद्देशिका संविधान का एक भाग है तथा इसलिए इसमें संशोधन किया जा सकता है।**

केशवानंद भारती वाद का महत्व

- **इसने न्यायिक पुनर्विलोकन के दायरे का विस्तार किया,** जहां शीर्ष न्यायालय भारतीय लोकतंत्र की व्यापक भावना को आहत करने वाले किसी भी संविधान संशोधन को अवैध घोषित करने के लिए 'मूल ढांचे के सिद्धांत' को लागू करने हेतु स्वतंत्र है।
- भारतीय संविधान में बड़ी संख्या में किए गए संशोधनों के बावजूद, 'मूल ढांचे के सिद्धांत' ने **संविधान निर्माताओं के अभिन्न दर्शन को संरक्षित करने में सहायता प्रदान की है।**
- इसने न्यायिक पुनर्विलोकन को समाप्त करने और संविधान में संशोधन करने की संसद की अप्रतिबंधित शक्ति के प्रयोग को प्रतिबंधित किया {संविधान (42वां संशोधन) अधिनियम, 1976 के माध्यम से} है।
- इसके अतिरिक्त, इसने संसद की संविधान संशोधन करने की शक्ति और विधायी शक्तियों में अंतर को स्पष्ट किया है तथा उद्देशिका को भारत के संविधान में इसका न्यायोचित व अभिन्न स्थान प्रदान किया है।

"मूल संरचना या ढांचे के सिद्धांत" का विकास (Evolution of Doctrine of Basic Structure)

मूल संरचना के सिद्धांत के लिए संविधान में कोई संदर्भ प्रदान नहीं किया गया है। यह विभिन्न न्यायालयी निर्णयों के माध्यम से विकसित हुआ है-

- **शंकरी प्रसाद वाद (वर्ष 1951)** और **सज्जन सिंह वाद (वर्ष 1965)** जैसे वादों में उच्चतम न्यायालय ने निर्णय दिया था कि संसद अनुच्छेद 368 का उपयोग करते हुए मूल अधिकारों सहित संविधान के किसी भी भाग में संशोधन कर सकती है।
- **गोलकनाथ वाद (वर्ष 1967):** इस वाद में उच्चतम न्यायालय ने माना कि संसद द्वारा मूल अधिकारों को संशोधित नहीं किया जा सकता है, जिसका तात्पर्य है कि **संविधान की कुछ विशेषताएं इसके मूल में निहित हैं** और इन्हें परिवर्तित करने के लिए सामान्य प्रक्रियाओं की तुलना में विशेष प्रक्रिया की आवश्यकता है। इस निर्णय ने **'मूल संरचना के सिद्धांत'** के लिए मार्ग प्रशस्त किया था।
- **केशवानंद भारती वाद (वर्ष 1973):** उच्चतम न्यायालय ने निर्णय दिया था कि संसद मूल अधिकारों सहित संविधान के किसी भी भाग में संशोधन कर सकती है, बशर्ते **"संविधान की मूल संरचना या ढांचे"** में विकृति उत्पन्न नहीं होनी चाहिए।
- **वाद-दर-वाद के आधार पर विकास:** उच्चतम न्यायालय ने तब से **इंदिरा नेहरू गांधी बनाम राज नारायण वाद (वर्ष 1975), मिनर्वा मिल्स वाद (वर्ष 1980), एस. आर. बोम्मई वाद (वर्ष 1994)** आदि के माध्यम से इस सिद्धांत को सुदृढ़ और पुन: पुष्ट करने का प्रयास किया है तथा भारतीय संविधान के 'मूल ढांचे/संरचना' का निर्माण करने वाले सिद्धांतों का सविस्तार वर्णन किया है।
- वर्तमान में कुछ सिद्धांत जो 'मूल संरचना' का हिस्सा हैं, निम्नलिखित हैं-

VISION IAS

- भारत की संप्रभुता;
- नागरिकों के लिए सुरक्षित व्यक्तिगत स्वतंत्रता की आवश्यक विशेषताएँ;
- कल्याणकारी राज्य के निर्माण के लिए अधिदेश;
- संविधान की सर्वोच्चता;
- सरकार का गणतंत्रात्मक और लोकतांत्रिक स्वरूप;
- संविधान की पंथनिरपेक्ष और संघीय प्रकृति;
- विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका के मध्य शक्तियों का पृथक्करण;
- राष्ट्र की एकता और अखंडता;
- न्यायिक पुनर्विलोकन की शक्ति;
- मूल अधिकार और DPSPs के मध्य सामंजस्य एवं संतुलन आदि।

2.4. एक राष्ट्र एक भाषा (One Nation One Language)

सुर्ख़ियों में क्यों?

हाल ही में, हिंदी दिवस के अवसर पर केंद्रीय गृह मंत्रालय ने देश की सर्वनिष्ट भाषा (common language) के रूप में हिंदी को प्रोत्साहित करने का प्रस्ताव किया था। इस पृष्ठभूमि में देश में **एक राष्ट्र एक भाषा** पर वाद-विवाद पुन:प्रारम्भ हो गया है।

पृष्ठभूमि

- **एक राष्ट्र एक भाषा** पर वाद-विवाद संविधान सभा में राजभाषा (official language) पर हुए चर्चाओं के दौरान आरम्भ हुआ था।
- हिंदी को राजभाषा बनाए जाने के पक्ष में मतदान किया गया था। हालांकि, विभिन्न वर्गों के विरोध और हिंदी-विरोधी आन्दोलन के कारण, एक सहयोगी राजभाषा के रूप में **अंग्रेजी** का प्रयोग जारी रखा गया।

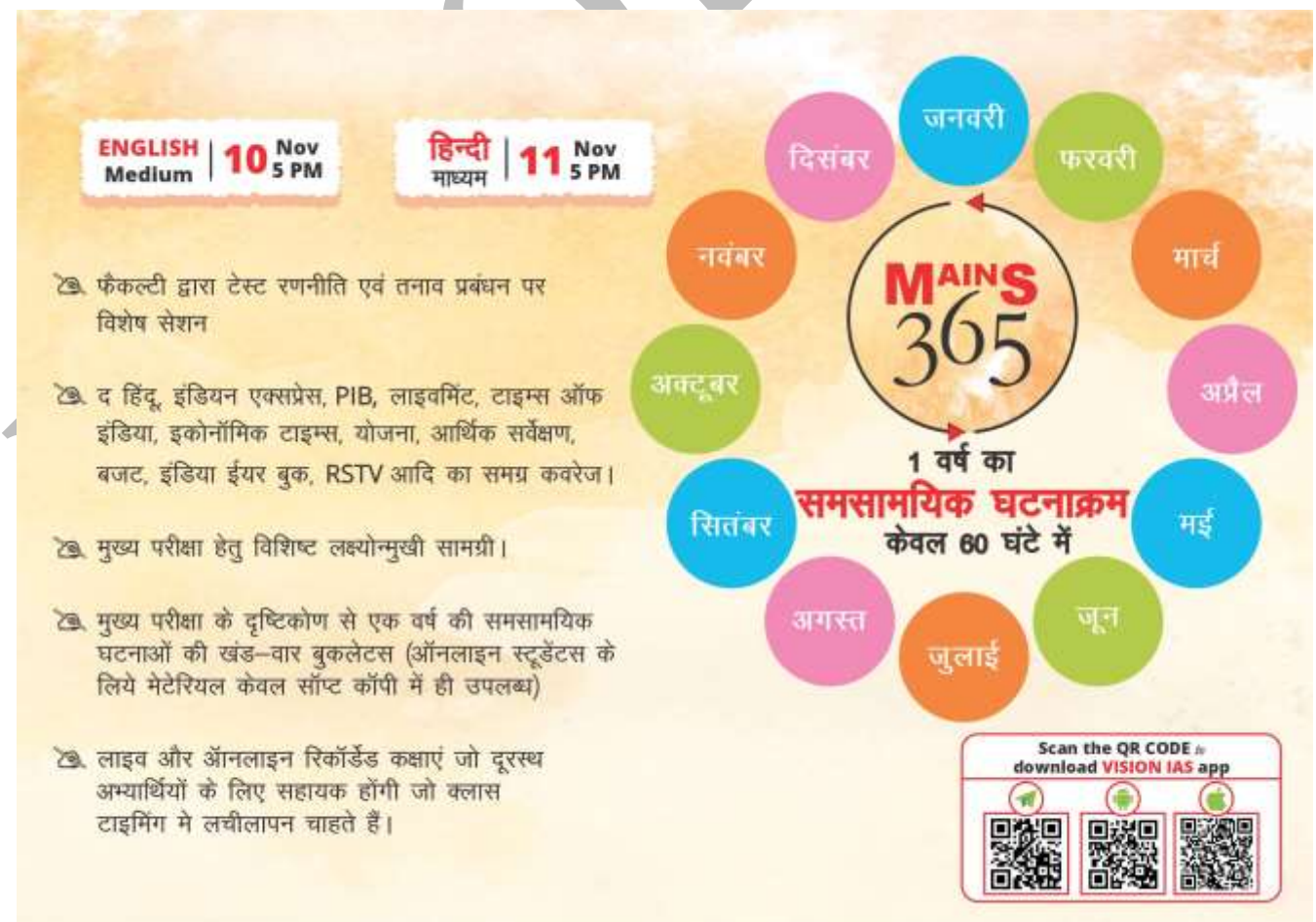

हिंदी भाषा को बढ़ावा देने हेतु आधार

- **अनुच्छेद 351:** संघ का यह कर्त्तव्य होगा कि वह-
  - हिंदी भाषा के प्रसार में वृद्धि करे,
  - उसका विकास करे, जिससे वह भारत की सामाजिक संस्कृति के सभी तत्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम बन सके, और
  - उसकी प्रकृति में हस्तक्षेप किए बिना हिन्दुस्तानी में तथा आठवीं अनुसूची में विनिर्दिष्ट भारत की अन्य भाषाओं में प्रयुक्त रूप, शैली और पदों को आत्मसात करते हुए उसकी समृद्धि सुनिश्चित करे।
- **अनुच्छेद 120 और 210,** क्रमशः संसद और राज्य विधान-मंडलों को उनके कार्य-संचालन हेतु हिंदी या अंग्रेजी भाषा के प्रयोग का विकल्प प्रदान करता है {राज्य विधान-मंडलों के मामलों में राज्य की राजभाषा या राजभाषाओं या हिंदी या अंग्रेजी (अनुच्छेद 210)}।
- **अनुच्छेद 343** संसद को विधि द्वारा आधिकारिक कार्यों (शासकीय प्रयोजनों) हेतु हिंदी या अंग्रेजी भाषा का चयन करने के लिए निर्णय लेने की शक्ति प्रदान करता है।
- **अनुच्छेद 344** उपबंधित करता है कि संघ के शासकीय प्रयोजनों हेतु हिंदी भाषा के अधिकाधिक प्रयोग तथा अंग्रेजी के प्रयोग पर निर्बंधनों के संदर्भ में राष्ट्रपति द्वारा प्रत्येक 10 वर्षों में एक आयोग का गठन किया जाएगा। यह आयोग अपनी अनुशंसाएं राष्ट्रपति को प्रस्तुत करेगा और तीस सदस्यों वाली एक संसदीय समिति आयोग की अनुशंसाओं का परीक्षण करेगी।

इस मुद्दे पर प्रमुख वाद-विवाद

- **भाषा और पहचान के मध्य संबंध को समझना:** भाषा, पहचान से तात्विक रूप से संयोजित है तथा यह प्राय: एक राष्ट्र की पहचान को भी सम्मिलित करती है।
  - इस प्रकार, भाषा, पहचान और नीति के मध्य एक घनिष्ट संबंध विद्यमान है।
- **भाषा बनाम राष्ट्रवाद:** भाषा को राष्ट्रवाद के एक प्रतीक के रूप में ध्वज और साहित्य के समान अथवा उनसे अधिक महत्वपूर्ण माना जाता है। भाषा और एक राष्ट्र के मध्य मौलिक संबंध होता है, क्योंकि भाषा का प्राय: राष्ट्र निर्माण में प्रयोग किया जाता है।
- **एक राष्ट्र की धारणा में निहित विचार: "एक राष्ट्र" (one nation)** में 'एक' शब्द का तात्पर्य परिमाण पर आधारित नहीं हो सकता, यह केवल विशेषता का परिचायक है, क्योंकि बहुसंख्यक (majority) सामान्यतया एकात्मकता (oneness) की अवधारणा का सृजन नहीं करते। इस प्रकार, 'एकात्मकता' मानव एवं विश्व के मध्य विद्यमान एकता का एक प्रकार है तथा एक राष्ट्र के प्रत्येक व्यक्ति के मध्य मौजूद 'एकात्मकता' व्यक्ति द्वारा बोली जाने वाली 'भाषा' अथवा अनुसरण किए जाने वाले 'धर्म' से पृथक एवं स्वतंत्र है।

एक राष्ट्र एक भाषा के पक्ष में तर्क

- **विकास के समक्ष विद्यमान बाधाओं का निराकरण:** कई ऐसे क्षेत्र हैं, जैसे- व्यापार, शिक्षा और अनुसंधान, राष्ट्रीय सुरक्षा (यथा- सेना इत्यादि) जहाँ केवल एक राष्ट्रीय भाषा के अभाव के कारण विकास में एक अन्तराल विद्यमान है।
- **प्रभावशाली प्रशासन हेतु:** केंद्रीय विभागों अथवा सेना आदि में कार्य करने वाले विविध लोग जब देश के अन्य भागों में स्थानांतरित होते हैं तब उन्हें सदैव भाषाजन्य समस्याओं का सामना करना पड़ता है। इसलिए जब भाषा लोगों की महत्वकांक्षाओं एवं आवश्यकताओं को समझने में बाधक बन जाती है, तो प्रशासनिक तंत्र कुशलतापूर्वक कार्य करने में असक्षम सिद्ध होता है।
- **भारत को एक वैश्विक पहचान प्रदान करने हेतु:** ज्ञातव्य है कि विश्व में प्रतिनिधित्व हेतु भारत में एक भाषा का होना अनिवार्य है। एक समरूप राष्ट्रीय भाषा इसके अधिसंख्यक प्रयोक्ताओं के कारण वैश्विक पैमाने पर महत्वपूर्ण लाभ प्रदान करेगी तथा इस प्रकार अन्य राष्ट्रों के लोग व्यापार, व्यवसाय, शिक्षा इत्यादि में भारत के साथ संलग्न होने हेतु उस भाषा को सीखने के लिए प्रोत्साहित होंगे।

क्या हिंदी "एक राष्ट्र एक भाषा" हेतु एक विकल्प हो सकती है?

पक्ष में तर्क

- हिंदी **हमारे प्राचीन दर्शन, संस्कृति और स्वतंत्रता संघर्ष की स्मृति** के अनुरक्षण हेतु एक महत्वपूर्ण सम्पर्क साधन के रूप में कार्य कर सकती है।

VISION IAS

- हिंदी देश के विभिन्न क्षेत्रों में **सर्वाधिक व्यापक रूप से बोली जाने वाली** भाषा है तथा इस प्रकार इसमें एक लोकभाषा बनने का सामर्थ्य है।
- **स्वतंत्रता संघर्ष के नेतृत्वकर्ताओं एवं संविधान निर्माताओं के प्रति सम्मान प्रकट करना:** जैसे कि महात्मा गाँधी और सरदार पटेल, जिन्होंने देश के नागरिकों से मातृभाषा और हिंदी के प्रयोग को बढ़ाने हेतु आग्रह किया था।
- **देश के विविध भाषा आधार की सुरक्षा,** जिसमें 122 भाषाएं और 19,500 से अधिक बोलियां सम्मिलित हैं। यह महत्वपूर्ण है कि संस्कृति को विदेशी प्रभाव से परिरक्षित रखा गया है।
- **विधि और विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी** जैसे क्षेत्रकों में **हिंदी का उपयुक्त रीति से अनुप्रयोग** किया जा सकता है।

विपक्ष में तर्क

- हिंदी भाषा अपने शुद्ध रूप में **हिंदी प्रधान प्रदेशों** (उत्तरी एवं मध्य भारत) में अपनी अनेक बोलियों के साथ बोली जाती है। इसके अतिरिक्त, अधिकांशत: बोली जाने वाली भाषा **हिंग्लिश (हिंदी और अंग्रेजी का मिश्रण)** है। हालांकि, देश के अनेक ऐसे भाग हैं जहां हिंदी कदाचित ही बोली और समझी जाती है, जिसके कारण इन क्षेत्रों में यह केवल एक वैकल्पिक भाषा के रूप में स्वीकृत है।
- इसी प्रकार, हिंदी का इतिहास अधिक प्राचीन नहीं है, जबकि तमिल, कन्नड़, तेलुगु इत्यादि जैसी भारत की अन्य भाषाओं का इतिहास अत्यधिक प्राचीन है।
- भारत की अधिकांश हाशिए पर रही जातियां और देशज समुदाय अंग्रेजी को प्राथमिकता प्रदान करते हैं, क्योंकि यह जातिगत स्मृति से विहीन है तथा यह गतिशीलता प्रदान करती है।
- ज्ञातव्य है कि संविधान का **अनुच्छेद 29** प्रत्येक भारतीय को एक विशिष्ट भाषा, लिपि और संस्कृति को बनाए रखने का अधिकार प्रदान करता है।

एक राष्ट्र एक भाषा के विपक्ष में तर्क

- **एक राष्ट्र एक भाषा का विचार उपनिवेशवाद की देन:** एक राष्ट्र एक भाषा की अवधारणा वस्तुतः उपनिवेशवाद की देन है।
- **विविधतापूर्ण संरचना: एक समरूप भाषा की अवधारणा** देश की विविधतापूर्ण और संघीय संरचना के विचार के विरुद्ध हो सकती है, जहां ऐसी साझी भाषा वांछनीय नहीं हो सकती। यह भारतीय संविधान की मूल भावना और **देश की भाषाई विविधता** के विपरीत भी हो सकती है।
- **त्रि-भाषा सूत्र की भावना के विरुद्ध:** इसे खंडित करने के प्रयासों से बचा जाना चाहिए तथा ऐसे 'भावात्मक' मुद्दों पर अनावश्यक विवादों से बचना चाहिए।
- **अंग्रेजी की अपरिहार्यता:** वर्तमान में अंग्रेजी संपूर्ण विश्व में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी की भाषा है। यदि हम भारत में सभी प्रौद्योगिकीय उपयोगों से अंग्रेजी को हिंदी से प्रतिस्थापित करते हैं, तब भी अंग्रेजी विज्ञान की भाषा बनी रहेगी, क्योंकि सभी वैज्ञानिक ज्ञान के स्रोतों का हिंदी भाषा में अनुवाद करना अत्यधिक कठिन होगा।

त्रि-भाषा सूत्र

- त्रि-भाषा सूत्र (अथवा तीन भाषा प्रणाली) वस्तुतः **हिंदी, अंग्रेजी और संबंधित राज्य की क्षेत्रीय भाषा** को संदर्भित करता है।
- यद्यपि देश में हिंदी की शिक्षा एक दीर्घकालिक व्यवस्था का भाग था, तथापि इसे **राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1968** में एक आधिकारिक दस्तावेज में एक नीति के अंतर्गत निश्चित स्वरूप प्रदान किया गया था।
- इसे राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2019 में पुन: प्रस्तुत किया गया था, परन्तु बाद में इस विचार को प्रारूप नीति से हटा दिया गया।
- ज्ञातव्य है कि राज्य **अनेक दशकों से द्वि-भाषा सूत्र** का अनुसरण कर रहे हैं, जिसके अंतर्गत केवल अंग्रेजी और एक क्षेत्रीय भाषा विद्यालयों में अनिवार्य हैं।

निष्कर्ष

- प्राचीन भारतीय दर्शन, भारतीय संस्कृति और भारतीय स्वाधीनता संघर्ष की स्मृति के संरक्षण हेतु यह महत्वपूर्ण है कि हमें किसी एक भाषा के प्रति पूर्वाग्रहित हुए बिना **भारत की स्थानीय भाषाओं को साथ-साथ सुदृढ़ करना चाहिए।**
- हालांकि, हिंदी का विकास निस्संदेह एक संवैधानिक आदेश है, जिसकी केंद्र सरकार उपेक्षा नहीं कर सकती, तथापि जिस रीति के अंतर्गत यह विकास किया जाएगा उससे **राज्यों को यह अनुभूति नहीं होनी चाहिए कि उन पर धीरे-धीरे हिंदी का अधिरोपण किया जाएगा।** साथ ही **त्रि-भाषा नीति** पर भी विचार किया जा सकता है।

VISION IAS

2.5. भारतीय संविधान की 9वीं अनुसूची (9th Schedule of Indian Constitution)

सुर्ख़ियों में क्यों?

हाल ही में, अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति और अन्य पिछड़े वर्गों के लिए **आरक्षण के प्रावधान** को संविधान की **9वीं अनुसूची में शामिल करने की मांग** की गई थी।

9वीं अनुसूची की पृष्ठभूमि

- स्वतंत्रता के समय, देश की जनसंख्या का एक महत्वपूर्ण हिस्सा गांवों में निवास करता था और कृषि पर निर्भर था, इसलिए **सामाजिक और आर्थिक न्याय के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए** कृषि सुधार सबसे महत्वपूर्ण थे। लेकिन, मूल अधिकारों (विशेषकर संपत्ति के अधिकार) को सामाजिक सुधार की इस प्रक्रिया में एक बाधा के रूप में देखा गया। इसलिए, कृषि सुधारों की प्रक्रिया में तेजी लाने के उद्देश्य से 9वीं अनुसूची को संविधान में अंत:स्थापित किया गया।
- संविधान की 9वीं अनुसूची में **केंद्रीय और राज्य कानूनों की एक सूची समाविष्ट है, जिसे न्यायालयों में चुनौती नहीं दी जा सकती है।**
- इसे **वर्ष 1951 में प्रथम संविधान संशोधन अधिनियम द्वारा अंत:स्थापित किया गया था।** 9वीं अनुसूची में अंतर्विष्ट किए गए किसी भी अधिनियम को न्यायपालिका के किसी भी अतिक्रमण से सुरक्षा प्राप्त है, भले ही वह अधिनियम किसी व्यक्ति के मूल अधिकारों का उल्लंघन करता हो।
- इसके अतिरिक्त, इससे संबंधित कार्यवाही **भूतलक्षी** प्रभावों वाली भी है।

9वीं अनुसूची की आलोचना

- **मूल अधिकारों के विरुद्ध:** ज्ञातव्य है कि 9वीं अनुसूची केंद्र के साथ-साथ राज्य की विधियों को मूल अधिकारों के विरुद्ध पूर्ण संरक्षण प्रदान करती है। इस प्रकार, यह संविधान में निहित मूल अधिकारों के विरुद्ध एक कवच के रूप में कार्य करती है।
- **न्यायिक पुनर्विलोकन के सिद्धांत के विरुद्ध:** यह अधिनियमों की संवैधानिकता की जांच करने की शक्ति से न्यायालयों को वंचित करती है। उच्चतम न्यायालय ने **एल. चंद्र कुमार वाद (वर्ष 1997)** में यह अभिनिर्धारित किया कि विधायी कार्रवाई पर न्यायिक पुनर्विलोकन की शक्ति संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत उच्च न्यायालयों में और अनुच्छेद 32 के तहत उच्चतम न्यायालय में निहित है। उच्चतम न्यायालय ने यह भी कहा है कि यह शक्ति संविधान द्वारा प्रदत्त एक अद्वितीय विशेषता है और इसकी मूल संरचना (basic structure) का भी हिस्सा है।
- **इसकी उपयोगिता समाप्त हो चुकी है:** इस अनुसूची को अंत:स्थापित करने के दौरान मुख्य उद्देश्य भूमि सुधार विधानों को न्यायिक हस्तक्षेप और अनावश्यक विलंब से संरक्षण प्रदान करना था। लेकिन, समय के साथ इसमें ऐसे कानूनों को शामिल किया गया है जिनका न तो भूमि सुधार और न हीं बड़े पैमाने पर मूल अधिकारों या राज्य की नीति के निदेशक तत्वों से कोई सरोकार है।
- **राजनीतिक लाभ प्राप्त करने का एक साधन:** वर्तमान समय में 9वीं अनुसूची के भीतर 257 अधिनियम शामिल हैं। इसने संवैधानिक चुनौती से बचने के लिए इसके तहत अधिनियमों को शामिल करने के लिए विभिन्न मांगों को बढ़ावा दिया है। उदाहरण के लिए, इस अनुसूची में शामिल तमिलनाडु का एक अधिनियम राज्य में 69 प्रतिशत आरक्षण को वैध बनाए हुए है।

9वीं अनुसूची पर उच्चतम न्यायालय का अवलोकन

- **आई. आर. कोइल्हो बनाम तमिलनाडु राज्य वाद** में, उच्चतम न्यायालय ने यह निर्णय दिया था कि 9वीं अनुसूची में शामिल किए गए कानूनों का न्यायिक पुनर्विलोकन किया जा सकता है। इसका अर्थ यह है कि इस अनुसूची के तहत सम्मिलित कानूनों को पूर्णत: संरक्षण प्राप्त नहीं है।
    - उच्चतम न्यायालय ने यह निर्णय दिया कि न्यायिक पुनर्विलोकन संविधान की एक मूल विशेषता है। न्यायिक पुनर्विलोकन की शक्तियों का प्रयोग करते हुए जब न्यायपालिका किसी विधि या उसके किसी भाग को असंवैधानिक घोषित करती है, तो ऐसे में उक्त कानून को 9वीं अनुसूची में सम्मिलित करना, संविधान के मूल ढांचे (basic structure) को नष्ट करना या क्षति पहुँचाने जैसा है।

VISION IAS

- इसलिए, **उच्चतम न्यायालय ने 9वीं अनुसूची में शामिल कानून की वैधता की जांच करने के लिए दोहरे परीक्षण का निर्धारण किया है,** जैसे- क्या यह किसी मूल अधिकार का उल्लंघन करता है और यदि हाँ, तो क्या यह उल्लंघन मूल ढांचे को भी क्षति पहुंचाता है या उसे नष्ट करता है।
    - यदि इन दोनों प्रश्नों का उत्तर हाँ है, तभी 9वीं अनुसूची में शामिल किए गए कानून को असंवैधानिक घोषित किया जा सकता है।

निष्कर्ष

मूलत: भूमि सुधार कानूनों की सुरक्षा के लिए एक संवैधानिक उपकरण के रूप में 9वीं अनुसूची को अंत:स्थापित गया था। उस समय यह प्रावधान करना अत्यंत आवश्यक भी था। लेकिन, ऐतिहासिक रूप से इसके अध्ययन से पता चलता है कि अब इसे बनाए रखने के संबंध में पुनर्विचार किए जाने की आवश्यकता है।

3. संसद/राज्य विधायिका और कार्यपालिका की कार्य-प्रणाली (Functioning of Parliament/State Legislatute and Executive)

3.1. विधायिका (Legislature)

3.1.1. संसदीय समितियां (Parliamentary Committees)

सुर्ख़ियों में क्यों?

हाल ही में, कोविड-19 की पृष्ठभूमि में संसदीय समितियों का कार्यकाल 1 वर्ष से बढ़ाकर दो वर्ष करने का सुझाव दिया गया था।

संसदीय समितियों के संबंध में

- संसदीय समिति का अर्थ वह समिति है:
  - जो सदन द्वारा नियुक्त या निर्वाचित की जाती है या अध्यक्ष/सभापति द्वारा नामनिर्देशित की जाती है,
  - जो अध्यक्ष/सभापति के निर्देशन में कार्य करती है,
  - जो अपनी रिपोर्ट/प्रतिवेदन सदन या अध्यक्ष/सभापति को प्रस्तुत करती है, तथा
  - जिसका लोकसभा/राज्यसभा द्वारा प्रदान किया गया एक सचिवालय है।
- व्यापक रूप से, संसदीय समितियों के दो प्रकार हैं यथा- **स्थायी समितियां और तदर्थ समितियां।** स्थायी समितियों की प्रकृति स्थायी (प्रत्येक वर्ष या समय-समय पर गठन किया जाता है) होती है और वे सतत आधार पर कार्य करती हैं, जबकि तदर्थ समितियां अस्थायी होती हैं और सौंपा गया कार्य पूर्ण होने पर इनका अस्तित्व समाप्त हो जाता है।

संसदीय समितियों की भूमिका

- **विस्तृत संवीक्षा:** अत्यधिक कार्य और संसद में उपलब्ध सीमित समय के कारण, विधेयकों की व्यापक समीक्षा कठिन हो जाती है। साथ ही, संसद सत्र बाधित होने की स्थिति में भी समितियां कार्य करती रहती हैं, जैसे कोविड-19 के दौरान।
- **निष्पक्ष कार्यप्रणाली:** चूंकि इन समितियों पर दल-परिवर्तन कानून लागू नहीं होता है, इसलिए ये विभिन्न मुद्दों पर आम सहमति बनाने हेतु मंच प्रदान करती हैं।
- **कई हितधारकों से संपर्क:** समितियां अपने द्वारा जांच किए जाने वाले विषयों पर नियमित रूप से नागरिकों और विशेषज्ञों से प्रतिक्रिया मांगती हैं। जैसे वित्त समिति ने नोटबंदी के विषय पर RBI के गवर्नर से विचार-विमर्श किया था।
- **सरकार की जवाबदेही बनाए रखती हैं:** इससे संसद की सरकारी नीतियों की जांच करने और विधायिका में सूचित बहस के माध्यम से सरकार को जवाबदेह बनाने की क्षमता में वृद्धि होती है। ये समितियां विभिन्न विभागों के लिए बजटीय आवंटन और सरकार की अन्य नीतियों की जांच करती हैं।
- **वित्तीय विवेक:** यह प्रणाली सार्वजनिक व्यय में किफायत और दक्षता सुनिश्चित करती है, क्योंकि मंत्रालय/विभाग अपनी मांगें प्रकट करने में अधिक सावधान नहीं होंगे।

इनकी कार्यप्रणाली संबंधी चिंताएं/समस्याएं

- **संसदीय समितियों की उपेक्षा करना:** उदाहरण के लिए 14वीं और 15वीं लोकसभा में क्रमशः 60% और 71% की तुलना में 16वीं लोकसभा में सदन में प्रस्तुत कुल विधेयकों में से केवल 25% विधेयक समितियों को संदर्भित किए गए थे।
- **सदस्यों का लघु कार्यकाल:** समितियों का गठन एक वर्ष के लिए किया जाता है, जो विशेषज्ञता के लिए अत्यधिक अल्पावधि है।
- **विशेषज्ञता का अभाव:** समिति के सदस्यों के पास तकनीकी विशेषज्ञता का अभाव होता है, जो कुछ समितियों के विचाराधीन विशेष विषयों की जटिलताओं के समाधान हेतु आवश्यक हैं जैसे लेखांकन और प्रशासनिक सिद्धांत।
- **सदस्यों की निम्न उपस्थिति:** समिति की बैठकों में सदस्यों की उपस्थिति चिंता का विषय रही है, जो वर्ष 2014-15 से लगभग 50% है।
- **कार्यवाहियों का राजनीतिकरण:** कुछ मुद्दों में अधिक जनहित दिखाए जाने के साथ, सदस्यों ने समिति की बैठकों में सख्त दलगत व्यवहार करना आरंभ कर दिया है।

VISION IAS

आगे की राह

राष्ट्रीय संविधान कार्यकरण समीक्षा आयोग, 2002 की अनुशंसाओं को स्वीकार किया जाना चाहिए जैसे समितियों को सभी विधेयक प्रेषित करना, इसके सदस्यों के कार्यकाल का विस्तार करना और पर्याप्त अनुसंधान सहायता के साथ समितियों को सुदृढ़ बनाना आदि:

- **कार्यों के अतिव्यापन से बचना:** उन्हें वित्तीय निरीक्षण का अतिरिक्त उत्तरदायित्व सौंपा जा सकता है और बजट आदि पर कार्य के अतिव्यापन से बचने के लिए वर्तमान वित्त समितियों को समाप्त किया जा सकता है।
- **नियमित निगरानी:** समिति के कार्य निष्पादन के नियमित मूल्यांकन हेतु तंत्र निर्मित करने की आवश्यकता है।
- **सर्वोत्तम प्रथाओं को अपनाना:** कई देशों में, संबंधित मंत्री सरकार की नीतियों का सविस्तार वर्णन करने और पक्षपोषित करने के लिए समिति के समक्ष उपस्थित होता है, जबकि भारत में, मंत्री समितियों के समक्ष उपस्थित नहीं होते हैं।

3.1.2. संसदीय विशेषाधिकार (Parliamentary Privileges)

सुर्ख़ियों में क्यों?

विशेषाधिकार का उल्लंघन विभिन्न कारणों से चर्चा का एक प्रमुख विषय रहा है।

विशेषाधिकारों की अवधारणा और विशेषाधिकारों के प्रकार

- संविधान द्वारा विधायी संस्थानों और उनके सदस्यों हेतु (**अनुच्छेद 105 के तहत,** संसद, इसके सदस्यों और समितियों के लिए / **अनुच्छेद 194 के तहत** राज्य विधान मंडल, इसके सदस्यों और समितियों के लिए) कुछ विशेषाधिकार प्रदान किए गए हैं। इनके उद्देश्य हैं:
  - सदन में वाक् एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता की रक्षा और सदनों में किए गए व्यवहार के संबंध में न्यायिक मुकदमेबाजी से सुरक्षा।
  - भाषण, मुद्रण या प्रकाशन के माध्यम से किसी भी अपमान के विरुद्ध रक्षा।
  - यह सुनिश्चित करना कि उनका कार्य संचालन अनावश्यक प्रभाव, दबाव या जबरदस्ती के बिना हो।
  - संसद की संप्रभुता को सुनिश्चित करना।

विशेषाधिकारों के प्रकार

सामूहिक विशेषाधिकार

- सदन की कार्यवाही से बाहरी व्यक्तियों को अपवर्जित करना। विधायिका की गुप्त बैठक आयोजित करना।
- प्रेस को संसदीय कार्यवाही की सही रिपोर्ट प्रकाशित करने के लिए स्वतंत्रता प्राप्त है। लेकिन यह गुप्त बैठकों के मामले में उपलब्ध नहीं है।
- केवल संसद ही अपनी कार्यवाही को नियंत्रित करने के लिए नियम बना सकती है।
- सदन की कार्यवाही (भाषण, मतदान इत्यादि) की जांच करने से न्यायालय को प्रतिबंधित किया गया है।

व्यक्तिगत

- सत्र के दौरान तथा सत्र के 40 दिन पूर्व और 40 दिन पश्चात् तक गिरफ्तारी से सुरक्षा। यह सुरक्षा केवल सिविल मामलों में उपलब्ध है,आपराधिक मामलों में नहीं।
- संसद में दिए गए किसी भी वक्तव्य के लिए न्यायालय की कार्यवाही से उन्मुक्ति।
- सदन के सत्र में होने के दौरान साक्षी के रूप में उपस्थिति से उन्मुक्ति।

- **वर्तमान में ऐसा कोई कानून प्रचलित नहीं है जो भारत में विधि-निर्माताओं के सभी विशेषाधिकारों को संहिताबद्ध करता हो।**
- वस्तुतः विशेषाधिकार पांच स्रोतों पर आधारित हैं: (i) संवैधानिक प्रावधान (ii) संसद के विभिन्न कानून (iii) दोनों सदनों के नियम (iv) संसदीय परम्पराएं (v) न्यायिक व्याख्याएं
- जब भी इनमें से किसी भी अधिकार और उन्मुक्ति की उपेक्षा की जाती है तो इसे **विशेषाधिकार के उल्लंघन** के रूप में वर्णित किया जाता है जो संसद के कानून के अंतर्गत दंडनीय अपराध है। हालांकि विशेषाधिकार के उल्लंघन और इसके लिए प्रदत्त दंड के संबंध में कोई वस्तुनिष्ठ दिशानिर्देश निर्धारित नहीं किए गए हैं।
- हालांकि, विशेषाधिकार के उल्लंघन हेतु उत्तरदायी कारकों तथा इस हेतु दंड संबंधी प्रावधानों के संबंध में कोई स्पष्ट दिशा-निर्देश जारी नहीं किए गए हैं।

विशेषाधिकारों के संबंध में चुनौतियां

- यह **'संवैधानिकता'** या सीमित शक्तियों के सिद्धांत के विरुद्ध है। **संहिताबद्ध विशेषाधिकारों की अनुपस्थिति** सदन को विशेषाधिकारों के उल्लंघन को परिभाषित करने के सम्बन्ध में असीमित शक्ति प्रदान करती है।

VISION IAS

- **यह शक्ति पृथक्करण के सिद्धांत का उल्लंघन** है ,क्योंकि अध्यक्ष या सभापति शिकायतकर्ता, वकील और न्यायाधीश, तीनों के रूप में कार्य करता है।
- **विशेषाधिकारों के उल्लंघन के मामलों में** जब तक सदन या उसके किसी सदस्य के कार्य को बाधित करने का प्रयास न किया गया हो तब तक कोई **दंडात्मक कार्यवाही किया जाना अनुचित** है।
- **विधायिका द्वारा "इसके कार्य संचालन में वास्तविक बाधा" उत्पन्न होने पर ही ऐसी कार्यवाही की जानी चाहिए**। सदन के सदस्यों की उचित आलोचना करने पर या राजनीतिक प्रतिशोध हेतु विशेषाधिकारों के उल्लंघन का दंड दिया जाना निर्वाचित प्रतिनिधियों की जवाबदेही को कम करता है। साथ ही इससे अभिव्यक्ति और व्यक्तिगत स्वतंत्रता के मूल अधिकारों का उल्लंघन भी होता है।
- **विशेषाधिकार हनन सम्बन्धी प्रस्ताव किसी विशिष्ट सदस्य द्वारा मानहानि के आधार पर** लाया जाता है, जबकि इस सम्बन्ध में मानहानि कानून के अंतर्गत न्यायिक सुरक्षा उपलब्ध है।

विशेषाधिकार उल्लंघन के उदाहरण

- आपातकाल के दौरान की गयी ज़्यादतियों के आधार पर (न्यायमूर्ति शाह समिति की रिपोर्ट) 1978 में इंदिरा गांधी को विशेषाधिकार के उल्लंघन के आरोप में विशेषाधिकार प्रस्ताव का सामना करना पड़ा। परिणामस्वरूप उन्हें सदन से निष्कासित कर दिया गया था।
- 1976 में संसद की गरिमा को ठेस पहुँचाने के आरोप में सुब्रमण्यम स्वामी को राज्यसभा से निष्कासित कर दिया गया था।
- तमिलनाडु विधानसभा द्वारा 2003 में मुख्यमंत्री की आलोचना के आरोप में द हिंदू के पत्रकारों को दंडित किया गया।
- कर्नाटक विधानसभा द्वारा 2017 में पत्रकारों को कारावास देने और उन पर जुर्माना आरोपित करने का प्रस्ताव पारित किया गया।

आगे की राह

- संविधान सभा द्वारा **ब्रिटिश हाउस ऑफ कॉमन्स के आधार पर असंहिताबद्ध विशेषाधिकारों की प्रणाली को अस्थायी तौर पर परिकल्पित किया गया था।** भारतीय और ब्रिटिश संसद में भिन्न-भिन्न राजनीतिक और विधिक स्थितियाँ व्याप्त हैं (लोकप्रिय संप्रभुता बनाम संसदीय संप्रभुता)। इसलिए विशेषाधिकारों के उचित संहिताकरण की आवश्यकता है। उदाहरणार्थ, **ऑस्ट्रेलिया द्वारा 1987 में संसदीय विशेषाधिकार अधिनियम** पारित करके विशेषाधिकारों, उनके उल्लंघन की स्थिति और दंड को स्पष्टतः परिभाषित किया गया था।
- अध्यक्ष/सभापति के निर्णय उसकी राजनीतिक संबद्धताओं से प्रभावित हो सकते हैं। इसलिए **जाँच एक सक्षम, स्वतंत्र और निष्पक्ष न्यायाधिकरण द्वारा** की जानी चाहिए।
- भारत की 'संप्रभु जनता' के स्वतंत्र अभिव्यक्ति के अधिकार पर निर्बंधन आरोपित किए गए हैं जबकि 'उनके प्रतिनिधियों' को सदन में अभिव्यक्ति की पूर्ण स्वतंत्रता प्रदान की गई है। **न्यायालयों द्वारा नागरिकों के मूल अधिकारों और विधायिका के विशेषाधिकारों के मध्य उचित संतुलन स्थापित करने हेतु पूर्व के निर्णयों पर पुनः विचार** किया जाना भी आवश्यक है।

3.1.3. दल-परिवर्तन रोधी कानून (Anti-Defection law)

सुर्ख़ियों में क्यों?

हाल ही में, मध्य प्रदेश में उत्पन्न गहन राजनीतिक संकट ने पुन: भारतीय संसदीय प्रणाली से संबंधित एक चिंतनीय प्रवृत्ति अर्थात् दल-परिवर्तन रोधी कानून को सुर्ख़ियों में ला दिया है।

दल-परिवर्तन रोधी कानून (Anti-Defection Law: ADL) के बारे में

- **दसवीं अनुसूची** को दल-परिवर्तन रोधी कानून के रूप में भी जाना जाता है। इसे वर्ष 1985 में 52वें संविधान संशोधन अधिनियम द्वारा अंत:स्थापित किया गया था।
- इसमें उस प्रक्रिया का उल्लेख किया गया है, जिसके तहत दल परिवर्तन करने वाले विधायकों/सांसदों को **सदन के किसी अन्य सदस्य द्वारा दायर याचिका के आधार पर** पीठासीन अधिकारी के विनिश्चयाधीन निरर्ह घोषित किया जा सकता है।
- इस कानून का उद्देश्य विधायकों/सांसदों के दल परिवर्तन संबंधी प्रयासों पर प्रतिबंध आरोपित कर एक **स्थिर सरकार** प्रदान करना है। यह पद या अन्य समान प्रतिफल के प्रलोभन के एवज में राजनीति से प्रेरित दल परिवर्तन संबंधी प्रयासों पर प्रतिबंध आरोपित करने का प्रयास करता है।
- यह कानून **संसद और राज्य विधान मंडलों दोनों पर लागू** होता है।
- **दल-परिवर्तन रोधी कानून के तहत निरर्हता**
  - **सदस्य:** किसी विधायिका के सदस्य को निरर्ह घोषित करने के निम्नलिखित दो आधार हैं:

VISION IAS

- यदि सदस्य **स्वेच्छा** से दल की सदस्यता का त्याग कर देते हैं, तो उन्हें निरर्ह घोषित कर दिया जाएगा। स्वेच्छा से सदस्यता त्याग किसी दल से त्यागपत्र देने के समान नहीं है।

- त्यागपत्र दिए बिना भी, एक विधायक/सांसद को निरर्ह घोषित किया जा सकता है, यदि सदन का सभापति या अध्यक्ष उसके आचरण से संबंधित यह युक्तियुक्त निष्कर्ष प्राप्त करता है कि उस सदस्य ने स्वेच्छा से अपने दल की सदस्यता का त्याग कर दिया है।
  - यदि कोई विधायक/सांसद अपने दल के निर्देशों के विरुद्ध सदन में मतदान करता है और उसकी कार्रवाई को उसके दल द्वारा क्षमा नहीं किया गया है, तो उसे निरर्ह घोषित किया जा सकता है।
- **निर्दलीय सदस्य:** वह सदन का सदस्य बने रहने के लिए निरर्ह हो जाता है, यदि वह निर्वाचन के उपरांत किसी राजनीतिक दल में शामिल हो जाता है।
- **नाम-निर्देशित सदस्य:** ऐसा कोई सदस्य यदि सदन में अपना स्थान ग्रहण करने की तिथि से छह माह की समाप्ति के पश्चात् किसी राजनीतिक दल का सदस्य बनता है, तो वह निरर्ह घोषित हो जाता है।

- **इस कानून के तहत अपवाद:** कुछ परिस्थितियों में सदस्य **निरर्हता** के जोखिम के बिना अपना राजनीतिक दल परिवर्तित कर सकते हैं:
  - यदि किसी दल के **दो-तिहाई विधायक/सांसद उक्त दल के किसी अन्य में विलय के लिए सहमत** हैं, तो वे निरर्ह नहीं होंगे।
  - यदि कोई व्यक्ति **लोक सभा अध्यक्ष या राज्य सभा सभापति के रूप में या राज्य विधान सभा के अध्यक्ष अथवा राज्य विधान परिषद के सभापति के रूप में चयनित हो जाता** है, तो वह अपने दल से त्यागपत्र दे सकता है और उस पद के निर्वहन के उपरांत पुन: अपने दल में शामिल हो सकता है।

इस कानून में हुए संशोधन

- जब सर्वप्रथम दल-परिवर्तन रोधी कानून अधिनियमित किया गया था, तो इसमें यह प्रावधान शामिल था कि यदि **मूल राजनीतिक दल में विभाजन** होता है और इसके परिणामस्वरूप उस दल के एक तिहाई सदस्य एक पृथक दल का निर्माण करते हैं, तो वे निरर्ह घोषित नहीं होंगे।
- हालाँकि, इस प्रकार के प्रावधान से वृहद पैमाने पर चूक हुई और क़ानूनविदों को विश्वास हो गया कि **दल में विभाजन से संबंधित इस प्रावधान का दुरुपयोग** किया जा रहा है।
- इसलिए, **वर्ष 2003 में 91वें संविधान संशोधन अधिनियम** द्वारा, विभाजन और विलय के आधार पर दल परिवर्तन को निषिद्ध कर दिया गया।
- वर्तमान में, **विलय से संबंधित प्रावधान** एकमात्र विकल्प है, जिसका **निरर्हता** निवारण के प्रयोजनार्थ उपयोग किया जा सकता है।

दल-परिवर्तन रोधी कानून में समग्र सुधार की आवश्यकता क्यों है?

- **कानून होने के बावजूद वृहद पैमाने पर दल परिवर्तन:** विगत कुछ वर्षों में आंध्र प्रदेश, अरुणाचल प्रदेश, गोवा, मणिपुर, नागालैंड, तेलंगाना और उत्तराखंड सहित कई राज्यों में विधायकों पर इस कानून का उल्लंघन करने के आरोप लगाए गए, जिससे **दल परिवर्तन** की संस्कृति और इसकी स्वीकृति को बल मिला है।
- **पीठासीन अधिकारी की संदेहयुक्त स्थिति:** दसवीं अनुसूची ने लोक सभा और राज्य विधान सभा अध्यक्ष को दल-परिवर्तन रोधी कानून के तहत सदस्यों की निरर्हता की मांग करने वाली याचिकाओं पर विनिश्चय करने की निर्विवाद शक्ति प्रदान की है।
  - **किहोतो होलोहन वाद (वर्ष 1992)** में उच्चतम न्यायालय में इसे चुनौती दी गई थी, जिसमें यह निर्णय दिया गया था कि दल-परिवर्तन रोधी कानून के तहत याचिकाओं के अधिनिर्णयन के समय पीठासीन अधिकारी द्वारा एक अधिकरण के समान न्यायिक शक्तियों का प्रयोग किया जाता है, इसलिए उनके निर्णय उच्च न्यायालयों एवं उच्चतम न्यायालय की समीक्षा के अधीन होंगे।
- **संसदीय प्रणाली की स्थिरता और अंततः सशक्त लोकतंत्र हेतु:** अधिकांश राजनीतिक दल हॉर्स ट्रेडिंग (सदस्यों की सौदेबाजी) और भ्रष्ट आचरण में लिप्त होते हैं, जिसके कारण नागरिकों के समक्ष अस्थिर सरकारों की स्थिति उत्पन्न होती है। इसलिए इसमें सुधार की आवश्यकता है ताकि ऐसी अलोकतांत्रिक प्रथाओं को हतोत्साहित किया जा सके।
- **वैध असहमति के लिए कोई स्थान नहीं:** यह कानून प्राय: एक विधायक/सांसद को उसके अंत:करण, विवेक, स्व-निर्णय और अपने मतदाताओं के हितों के अनुरूप मतदान करने से रोकता है, क्योंकि सत्तारूढ़ राजनीतिक दल अधिकांश मुद्दों पर अपने सदस्यों की राय जाने बिना उसे मतदान करने हेतु निर्देश जारी करते हैं।

VISION IAS

- **विविध प्रकार से व्याख्या:** किसी सदस्य को दल परिवर्तन के आधार पर निरर्ह घोषित करने का प्रथम आधार **उसका दल की सदस्यता को "स्वेच्छा से त्यागना" है।** अत: इस शब्द की व्याख्या के संबंध में स्पष्टता का अभाव है।

अन्य संबंधित तथ्य

अनुच्छेद 142 के तहत प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए उच्चतम न्यायालय द्वारा मणिपुर के एक मंत्री को उसके पद से हटाए जाने का मामला

- हाल ही में, पहली बार, **उच्चतम न्यायालय** ने मणिपुर के एक मंत्री को राज्य मंत्रिमंडल से हटा दिया, जिसकी निरर्ह घोषित किए जाने संबंधी याचिका वर्ष 2017 से ही विधान सभा अध्यक्ष के समक्ष लंबित थी।
- चूंकि, संविधान का **अनुच्छेद 212 न्यायालयों को विधान मंडल की कार्यवाही में अनावश्यक हस्तक्षेप करने से प्रतिबंधित करता है,** अत: इस मामले में "असाधारण तथ्यों" को देखते हुए (जैसा कि इस मामले में पीठासीन अधिकारी के आचरण को कई अवसरों पर प्रश्नगत किया गया था), उच्चतम न्यायालय ने संविधान के **अनुच्छेद 142 के तहत न्यायालय को प्रदत्त असाधारण शक्तियों** का प्रयोग किया।
- **अनुच्छेद 142:** *"उच्चतम न्यायालय अपनी अधिकारिता का प्रयोग करते हुए ऐसी डिक्री पारित कर सकेगा या ऐसा आदेश कर सकेगा जो उसके समक्ष लंबित किसी वाद या विषय में पूर्ण न्याय करने के लिए आवश्यक हो और इस प्रकार पारित डिक्री या किया गया आदेश भारत के राज्यक्षेत्र में सर्वत्र ऐसी रीति से, जो संसद द्वारा निर्मित किसी विधि द्वारा या उसके अधीन विहित की जाए और जब तक इस निमित्त इस प्रकार उपबंध नहीं किया जाता है तब तक, ऐसी रीति से जो राष्ट्रपति आदेश द्वारा विहित करे, प्रवर्तनीय होगा।"*

दल-परिवर्तन रोधी कानून को सुदृढ़ करने के उपाय

- **एक स्वतंत्र वैकल्पिक तंत्र की स्थापना:** हाल ही में, उच्चतम न्यायालय ने यह सुझाव दिया है कि "संसद को दल-परिवर्तन रोधी कानून के संबंध में निभाई जाने वाली **अध्यक्ष की भूमिका को एक स्थायी अधिकरण द्वारा प्रतिस्थापित करने हेतु संविधान में संशोधन करना चाहिए** तथा जिसकी अध्यक्षता उच्चतम न्यायालय के किसी सेवानिवृत्त न्यायाधीश या उच्च न्यायालय के सेवानिवृत्त मुख्य न्यायाधीश द्वारा की जानी चाहिए अथवा एक बाह्य स्वतंत्र तंत्र की स्थापना की जा सकती है, ताकि इस प्रकार के विवादों का तीव्र और निष्पक्ष तरीके से निर्णयन सुनिश्चित किया जा सके।
- **पीठासीन अधिकारी द्वारा निरर्हता संबंधी मामलों के विनिश्चय हेतु समय सीमा का निर्धारण:** उच्चतम न्यायालय के अनुसार "अध्यक्ष या सभापति, दसवीं अनुसूची के तहत अधिकरण के रूप में कार्य करते हुए, एक युक्तियुक्त समयावधि के भीतर निरर्हता संबंधी याचिकाओं पर निर्णय करने हेतु बाध्य है।"
- **"शासन में नैतिकता" शीर्षक से द्वितीय प्रशासनिक सुधार आयोग की रिपोर्ट** और विभिन्न अन्य विशेषज्ञ समितियों ने अनुशंसा की है कि दल परिवर्तन के आधार पर सदस्यों की निरर्हता का मुद्दा **निर्वाचन आयोग के परामर्श पर राष्ट्रपति/राज्यपाल द्वारा विनिश्चित किया जाना चाहिए।**
- कई विशेषज्ञों का सुझाव है कि यह कानून **केवल उन मतों के लिए मान्य होना चाहिए,** जो सरकार की स्थिरता (वार्षिक बजट या अविश्वास प्रस्ताव) को प्रभावित करते हैं।

3.1.4. प्रश्नकाल (Question Hour)

सुर्ख़ियों में क्यों?

हाल ही में, कोविड-19 महामारी के कारण, संसद के विगत मानसून सत्र के दौरान लोक सभा एवं राज्य सभा में प्रश्नकाल और गैर-सरकारी सदस्यों के कार्यों को निलंबित कर दिया गया था।

अन्य संबंधित तथ्य

- संशोधित कार्य अनुसूची के अनुसार,
  - **शून्य काल को घटाकर 30 मिनट** कर दिया गया है।
  - **प्रश्नकाल नहीं** होगा, परन्तु सांसद अतारांकित प्रश्न पूछ सकते हैं।
  - अध्यक्ष/सभापति के विवेक पर अत्यावश्यक होने की स्थिति में मौखिक उत्तर के साथ **अल्प सूचना प्रश्नों (Short notice questions)** की अनुमति होगी।

VISION IAS

- **गैर-सरकारी सदस्यों के कार्य संचालित नहीं होंगे** तथा साथ ही, सांसदों द्वारा पुर:स्थापित विधेयकों के लिए **घंटे भी निलंबित** किए गए हैं।

प्रश्नकाल

- यह **संसद की बैठक का प्रथम घंटा** होता है। इस दौरान **संसद सदस्यों द्वारा मंत्रियों से सरकारी कार्यकलापों और प्रशासन के संबंध में प्रश्न पूछे जाते हैं** तथा इस प्रक्रिया द्वारा उन्हें उनके **मंत्रालयों की कार्यप्रणाली हेतु उत्तरदायी ठहराया जाता है।**

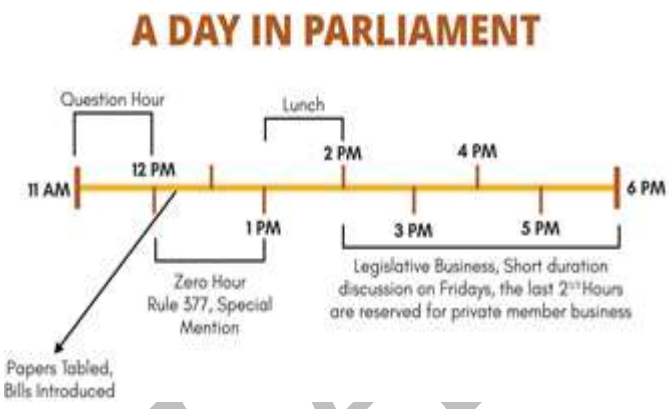

- संसद के **दोनों सदन अपने स्वयं के नियमों का पालन** करते हैं, जो इनके द्वारा स्वयं को नियंत्रित करने के लिए निर्मित किए गए हैं।
- **संसद में पूछे जाने वाले प्रश्नों को संसद द्वारा विभिन्न प्रकारों में वर्गीकृत किया गया है और वे इस प्रकार हैं:**
  - **तारांकित प्रश्न:** प्रश्नकाल के दौरान सदन के पटल पर इन प्रश्नों के उत्तर मौखिक रूप से दिए जाते हैं।
  - **अतारांकित प्रश्न:** सदन के पटल पर प्रस्तुत किए गए इन प्रश्नों के उत्तर **प्रश्नकाल के अंत में मंत्रियों द्वारा लिखित रूप में** प्रदान किए जाते हैं।
  - **अल्प सूचना के प्रश्न:** ये प्रश्न सदन में प्रश्नकाल के उपरांत या कार्यसूची के प्रथम विषय के रूप में पूछे जाते हैं, जहां तारांकित और अतारांकित प्रश्नों के लिए निर्धारित सूचना से कमतर सूचना पर कोई प्रश्नकाल नहीं होता है।
  - **गैर-सरकारी सदस्यों (private members) हेतु प्रश्न:** यह उस स्थिति में पूछे जाते हैं, जब प्रश्न किसी ऐसे विधेयक, संकल्प या अन्य मामले से संबंधित हो, जिसके लिए कोई गैर-सरकारी सदस्य (लोक सभा में प्रक्रिया के नियमों के नियम 40 और कार्य संचालन नियमों के अनुसार) उत्तरदायी है।
- जब किसी सदस्य को यह प्रतीत होता है कि किसी **तारांकित या अतारांकित या अल्प सूचना वाले प्रश्न** का **उत्तर पूर्ण नहीं है या वांछित जानकारी प्रदान नहीं करता है या किसी तथ्य पर स्पष्टता की आवश्यकता** है, तो उसे अध्यक्ष/सभापति द्वारा उस विषय को सदन में आधे घंटे की चर्चा में उठाने की अनुमति दी जा सकती है। इसलिए, प्रक्रिया को **'आधे घंटे की चर्चा'** कहा जाता है।

शून्यकाल

- प्रश्नकाल के तुरंत बाद के समय को **"शून्यकाल"** के रूप में जाना जाता है।
  - यह दोपहर 12 बजे से आरंभ होता है (इसलिए यह नाम दिया गया है)।
- सामान्यतया, महत्वपूर्ण विधेयकों, बजट और राष्ट्रीय महत्व के अन्य मुद्दों पर चर्चा दोपहर 2 बजे से शुरू होती है।
- "शून्यकाल" के दौरान मामलों को उठाने के इच्छुक सदस्यों को **दैनिक सत्र आरंभ होने से पूर्व अध्यक्ष को नोटिस देने की आवश्यकता** होती है।
- शून्यकाल भारत की संसद का एक नवाचार है और **प्रश्नकाल के विपरीत यह प्रक्रिया के नियमों में उल्लिखित नहीं** है। शून्य काल वर्ष 1962 से अस्तित्व में है।
  - सत्र के दौरान प्रत्येक दिन शून्यकाल होना अनिवार्य नहीं है।

प्रश्नकाल का महत्व

- **यह संसदीय लोकतंत्र के उद्देश्यों को पूर्ण करता है:** संसदीय शासन की मूल अवधारणा यह है कि सरकार या मंत्रिपरिषद संसद (भारत में लोक सभा) के प्रति सामूहिक रूप से उत्तरदायी होती है। प्रश्नकाल सरकार को उत्तरदायी और जवाबदेह बनाने के लिए बाध्य करता है।
- **जन जागरूकता का सृजन:** किसी मुद्दे पर एक प्रश्न और चर्चा अधिक से अधिक लोक ध्यान आकर्षित करती है, क्योंकि यह जानकारी राष्ट्र के सुदूर स्थानों तक पहुंचती है।
- **सार्वजनिक नीति निर्माण:** सरकार की नीति में कमियों और त्रुटियों का पता चलता है और कुछ स्पष्टीकरण भी किए जाते हैं। साथ ही, सरकार द्वारा नीति या कानून के पीछे निहित तर्क एवं उद्देश्य भी स्पष्ट किए जाते हैं।
- **न्यायिक हस्तक्षेप को सीमित करना:** कई नीतिगत मुद्दों में न्यायिक हस्तक्षेप से संसदीय निरीक्षण की क्षमता में कमी आती है। उदाहरण के लिए, **लॉकडाउन से संबंधित कार्यों और प्रवासी श्रमिकों को इससे होने वाली कठिनाइयों** के बारे में सरकार से प्रश्न किए जाने चाहिए थे। हालांकि, इन मामलों को उच्चतम न्यायालय में ले जाया गया, जो नीतिगत विकल्पों को संतुलित करने हेतु अधिकारिता विहीन है।

3.2. कार्यपालिका (Executive)

3.2.1. तटस्थता का सिद्धांत (Doctrine of Neutrality)

सुर्ख़ियों में क्यों?

हालिया दिनों में, कुछ संवैधानिक पद **राजनीतिक तटस्थता के आधार पर** उच्चतम न्यायालय की निगरानी के दायरे में आए हैं।

तटस्थता का सिद्धांत क्या है?

- यह संवैधानिक लोकतंत्र का मूल सिद्धांत है। **तटस्थता** वस्तुतः दो पक्षों के मध्य संघर्ष की स्थिति में स्वयं को "तृतीय" पक्ष के रूप में प्रस्तुत करना है।
- इस प्रकार तटस्थता का सिद्धांत, संघर्षरत पक्षों के विवादों के समाधान हेतु तटस्थता का विकल्प प्रदान करने तथा उनके संघर्ष में सम्मिलित न होने की मांग करता है।

संवैधानिक पदों के संदर्भ में तटस्थता के सिद्धांत का महत्व

- **संवैधानिक विश्वास को बनाए रखना:** अध्यक्ष, राज्यपाल, निर्वाचन आयुक्त आदि पदों में संवैधानिक विश्वास निहित है, जिन्हें अपने कृत्यों में तटस्थता सुनिश्चित करने की आवश्यकता होती है।
- **राजनीतिक निष्पक्षता सुनिश्चित करना:** राज्यपाल, अध्यक्ष, नियन्त्रक एवं महालेखापरीक्षक (CAG) और निर्वाचन आयोग जैसे संवैधानिक पदों द्वारा अपनी व्यापक संवैधानिक शक्तियों का उपयोग राजनीतिक तटस्थता एवं निष्पक्षता की "पवित्र" परम्परा के अनुरूप होना चाहिए।
    - हालांकि, उत्तराखंड एवं अरुणाचल प्रदेश के मामले में इस प्रकार की पवित्र परम्परा का क्षरण दृष्टिगोचर हुआ है, जहाँ दोनों राज्यों के विधानसभा के अध्यक्षों ने 10वीं अनुसूची के तहत विधायकों को निरर्ह घोषित करने के लिए अपनी शक्तियों का दुरूपयोग करके सत्तारूढ़ दल को बहुमत में रखने में सहायता प्रदान की थी।
- **संघवाद को बनाए रखना:** भारत में, शक्ति-संतुलन का झुकाव संघ की ओर है। परन्तु, राज्यपाल जैसे संवैधानिक पद का महत्व इस तथ्य को इंगित करता है कि वह केंद्र एवं राज्यों के मध्य प्रभावी संचार स्थापित करने में संघीय ढांचे के अंतर्गत महत्वपूर्ण माध्यम है।
- **अभिशासन में निरंतरता और कार्यपालिका पर नियंत्रण रखने में सहायक:** संवैधानिक पद, जैसे- अध्यक्ष और राज्यपाल एक-दूसरे से स्वतंत्र होकर या समन्वय स्थापित कर राज्य सरकारों के भावी स्थायित्व का निर्धारण कर सकते हैं।
    - राज्यपाल की भूमिका राज्य में शासन की निरंतरता सुनिश्चित करने तथा यहां तक कि संवैधानिक संकट के समय में भी सरकार के विभिन्न स्तरों के मध्य अनौपचारिक विवादों में एक तटस्थ मध्यस्थ की होती है। इसके अतिरिक्त, वह जनता के अंतःचेतना के रक्षक के रूप में भी कार्य करता है।
- **निष्पक्ष निर्वाचन प्रणाली और लोकतंत्र को सुदृढ़ करने में सहायक:** निर्वाचन किसी भी देश की शासन प्रणाली की गुणवत्ता को महत्वपूर्ण आधार प्रदान करता है। इस प्रकार इसमें किसी देश के दीर्घकालिक लोकतांत्रिक विकास को अधिक समृद्ध अथवा अवरुद्ध करने की क्षमता निहित है। इसलिए, इस संदर्भ में निर्वाचन आयोग की तटस्थता अत्यधिक महत्वपूर्ण एवं मूल्यवान हो जाती है।
- **अर्थव्यवस्था के विकास को बनाए रखने में सहयोगी:** CAG जैसे संवैधानिक पद की स्वतंत्रता, शक्तियां और उत्तरदायित्व के निर्वहन के लिए लेखा परीक्षक एवं लेखा परीक्षण व लेखांकन में संलग्न उनके द्वारा नियुक्त कर्मचारियों हेतु उच्च स्तरीय नैतिकता की आवश्यकता होती है।
    - CAG के लिए सामान्य मानकों में विधायिका एवं कार्यपालिका से स्वतंत्रता शामिल है ताकि सरकार द्वारा किए गए किसी भी प्रकार के आर्थिक कदाचार या सरकारी धन के अपव्यय को इंगित किया जा सके।

निष्कर्ष

- राजनीतिक तटस्थता के सिद्धांत के अंतर्गत संवैधानिक पदाधिकारियों को विवादित प्रश्नों पर तटस्थ रहने की आवश्यकता होती है तथा यह सिद्धांत सहिष्णुता एवं विचारों की स्वतंत्रता के परम्परागत उदारवादी सिद्धांतों का विस्तार है।
- इस प्रकार राजनीतिक तटस्थता न केवल संवैधानिक पदों पर अपितु वर्तमान सरकार पर भी कर्त्तव्यों का आरोपण करती है। राजनेताओं द्वारा स्वतंत्र संवैधानिक कार्यालयों को राजनीतिक हस्तक्षेप से संरक्षण प्रदान करना चाहिए तथा साथ ही इन्हें राजनीतिक गतिविधियों या वाद-विवाद में सम्मिलित नहीं करना चाहिए।

VISION IAS

3.2.2. राज्यपाल की शक्तियां (Powers of Governor)

सुर्ख़ियों में क्यों?

हाल ही में, राजस्थान के राज्यपाल द्वारा मंत्रिपरिषद की इच्छानुसार सदन का सत्र आहूत करने से मना करने संबंधी विवाद ने राज्यपाल की शक्तियों के संबंध में कुछ मुद्दों को रेखांकित किया है।

राज्यपाल की संवैधानिक शक्तियां

- **अनुच्छेद 154:** राज्य की कार्यपालिका शक्ति राज्यपाल में निहित होगी और वह इसका प्रयोग इस संविधान के अनुसार स्वयं या अपने अधीनस्थ अधिकारियों के द्वारा करेगा।
- **अनुच्छेद 163(1):** जिन बातों में इस संविधान द्वारा या इसके अधीन राज्यपाल से यह अपेक्षित है कि वह अपने कृत्यों या उनमें से किसी को अपने विवेकानुसार करे, उन बातों को छोड़कर राज्यपाल को अपने कृत्यों का प्रयोग करने में सहायता और सलाह देने के लिए एक मंत्रिपरिषद होगी, जिसका प्रधान, मुख्यमंत्री होगा।
- **अनुच्छेद 163(2):** यदि कोई प्रश्न उठता है कि कोई विषय ऐसा है या नहीं, जिसके संबंध में इस संविधान द्वारा या इसके अधीन राज्यपाल से यह अपेक्षित है कि वह अपने विवेकानुसार कार्य करे तो राज्यपाल का अपने विवेकानुसार किया गया विनिश्चय अंतिम होगा और राज्यपाल द्वारा की गई किसी बात की विधिमान्यता इस आधार पर प्रश्नगत नहीं की जाएगी कि उसे अपने विवेकानुसार कार्य करना चाहिए था या नहीं।
- **निम्नलिखित मामलों में राज्यपाल के पास संवैधानिक विवेकाधिकार है:**
  - किसी विधेयक को राष्ट्रपति के विचारार्थ आरक्षित करने में (अनुच्छेद 200 और 201)।
  - राज्य में राष्ट्रपति शासन लगाने की अनुशंसा करने में (अनुच्छेद 356)।
  - संलग्न संघ राज्यक्षेत्र के प्रशासक के रूप में अपने कार्यों का निर्वहन करते समय (अतिरिक्त प्रभार की स्थिति में)।
  - भारतीय संविधान की पांचवी और छठी अनुसूची के क्षेत्रों से संबंधित विशेष उत्तरदायित्वों का निर्वहन करते समय।
  - राज्य के प्रशासनिक और विधायी मामलों के संबंध में मुख्यमंत्री से जानकारी मांगना।
- साथ ही, राज्यपाल के पास निम्नलिखित मामलों में **परिस्थितिजन्य विवेकाधिकार** (अर्थात, प्रचलित राजनीतिक स्थिति की आकस्मिकताओं से व्युत्पन्न अप्रत्यक्ष विवेकाधिकार) भी हैं:
  - राज्य विधानसभा निर्वाचन में **किसी भी दल को पूर्ण बहुमत न प्राप्त होने पर** या कार्यकाल के दौरान मुख्यमंत्री का अकस्मात निधन हो जाने पर एवं उसका कोई स्पष्ट उत्तराधिकारी नहीं होने की स्थिति में मुख्यमंत्री की नियुक्ति के मामले में।
  - राज्य विधानसभा में विश्वास मत प्राप्त न पर **मंत्रिपरिषद की बर्खास्तगी के मामले में।**
  - यदि मंत्रिपरिषद अल्पमत में है, तो **राज्य विधानसभा को विघटित करने के मामले में।**

हालिया विवाद के कुछ मुद्दों में सम्मिलित हैं:

- **विधानसभा का सत्र आहूत करने की राज्यपाल की शक्ति**- वर्ष 2016 में उच्चतम न्यायालय ने निर्णय दिया था कि यदि मुख्यमंत्री को सदन में बहुमत प्राप्त है तो **अनुच्छेद 174 के अंतर्गत राज्यपाल का सदन को आहूत करने संबंधी कोई विवेकाधिकार नहीं है** और इसलिए **राज्यपाल,** मंत्रिमंडल की सलाह पर कार्रवाई करने के लिए बाध्य है।
- **सत्र के लिए कार्यसूची निर्धारित करने की राज्यपाल की शक्ति**- मंत्रिमंडल राज्यपाल को **सत्र की कार्यसूची का वर्णन देने के लिए बाध्य नहीं है।** सत्र की कार्यसूची को विधानसभा अध्यक्ष की अध्यक्षता वाली कार्यमंत्रणा समिति द्वारा निर्धारित किया जाता है।
- **राजस्थान के राज्यपाल द्वारा सत्र को आहूत करने के लिए 21 दिन के नोटिस की मांग**- सदन के सत्र को आहूत करने के लिए 21 दिन (बाद में बदलकर 15 दिन कर दिया गया था) के नोटिस का नियम पहले लोकसभा द्वारा निर्धारित किया गया था और बाद में इसे राज्य विधानसभाओं द्वारा अंगीकृत कर लिया गया था। इसका उपयोग सदन में पूछे जाने वाले प्रश्नों के लिए नोटिस अवधि के रूप में किया जाता था। हालांकि, ऐसे भी मामले रहे हैं जब अल्प सूचना पर सत्र को आहूत किया गया है।

राज्यपाल की भूमिका से संबंधित सरोकार

- **विवेकाधीन शक्तियों का दुरुपयोग:** राज्यों का आरोप है कि संघ सरकार के आदेशानुसार राज्यपाल द्वारा इस प्रावधान का प्रायः दुरुपयोग किया जाता रहा है, जो भारतीय संविधान के आधारभूत सिद्धांतों के विरुद्ध है।

VISION IAS

- **केंद्र द्वारा नियुक्ति:** इससे राज्यपाल के पद पर दल (संघ सरकार का सत्तारूढ़ दल) की विचारधारा वाले व्यक्तियों की नियुक्ति होती है और वह राज्य कार्यपालिका की सलाह पर कार्य करने के बजाय वर्तमान संघ सरकार के प्रति निष्ठावान बना रहता है।
- **मनमानी पदच्युति:** राज्यपालों के लिए अपने कर्तव्यों के निर्वहन में तटस्थता और निष्पक्षता को प्रोत्साहित करने के लिए निश्चित कार्यकाल का आह्वान करने संबंधी बी.पी.सिंघल बनाम भारतीय संघ में उच्चतम न्यायालय के निर्णय के बाद भी इस निर्णय को वास्तविक रूप से कार्यान्वित नहीं किया जा रहा है।

सुझाव

- **सरकारिया आयोग:**
  - राज्य विधानसभा को तब तक विघटित नहीं किया जाना चाहिए, जब तक कि इसकी उद्घोषणा को संसद द्वारा अनुमोदित नहीं किया जाता है।
  - संविधान के अनुच्छेद 356 का कम-से-कम उपयोग किया जाना चाहिए।
  - राज्य में राष्ट्रपति शासन आरोपित करने से पूर्व वैकल्पिक सरकार के गठन की सभी संभावनाओं का अन्वेषण किया जाना चाहिए।
- **एम. एम. पुंछी आयोग**
  - राज्यपाल को त्रिशंकु विधानसभा (किसी भी दल को पूर्ण बहुमत प्राप्त न होना) की स्थिति में **"संवैधानिक परंपराओं"** का पालन करना चाहिए।
  - इसने **'स्थानीयकृत आपातकाल'** के प्रावधान का सुझाव दिया, जिसके द्वारा केंद्र सरकार **राज्य विधानसभा को विघटित किए बिना** शहर/जिला स्तर पर मुद्दों का समाधान कर सकती है।
- **उच्चतम न्यायालय के निर्णय:**
  - **वर्ष 1994 का बोम्मई वाद:**
    - न्यायालय ने बहुमत की जांच के रूप में विश्वास मत परीक्षण को वरीयता प्रदान की।
    - न्यायालय ने यह भी कहा कि अनुच्छेद 356 के अंतर्गत प्रदत्त शक्ति एक असाधारण शक्ति है और इसका विचारपूर्वक, न कि राजनीतिक लाभ प्राप्त करने के लिए, उपयोग किया जाना चाहिए।
  - **रामेश्वर प्रसाद वाद (वर्ष 2006)**
    - विधानसभा विघटित करने की बिहार के राज्यपाल की अनुशंसा को अवैध और दुर्भावनापूर्ण ठहराया गया।
    - राज्यपाल, निर्वाचन के पश्चात् निर्मित गठबंधनों द्वारा सरकार गठित करने के प्रस्ताव की उपेक्षा नहीं कर सकता है, क्योंकि यह उन तरीकों में से एक है जिससे लोकप्रिय सरकार का गठन किया जा सकता है।
    - न्यायालय ने यह भी कहा कि सरकार गठन के प्रयासों में विधायकों के सौदे या भ्रष्टाचार के अप्रमाणित दावों को विधानसभा विघटित करने के कारणों के रूप में प्रस्तुत नहीं किया जा सकता है।

3.2.3. अमेरिकी राष्ट्रपति पर महाभियोग (Impeachment of US President)

सुर्ख़ियों में क्यों?

हाल ही में, अमेरिकी हाउस ऑफ रिप्रेज़ेंटेटिव्स के स्पीकर द्वारा सदन में अमेरिकी राष्ट्रपति ट्रंप के विरुद्ध औपचारिक महाभियोग की प्रक्रिया आरंभ करने की उद्घोषणा की गई थी।

भारत के राष्ट्रपति के विरुद्ध महाभियोग की प्रक्रिया (अनुच्छेद 61)	अमेरिका के राष्ट्रपति के विरुद्ध महाभियोग की प्रक्रिया
• भारत के राष्ट्रपति को "संविधान के अतिक्रमण" के लिए पद से हटाया जा सकता है, जिसका अर्थ संविधान में परिभाषित नहीं है।	• अमेरिकी राष्ट्रपति को अमेरिकी संविधान के तहत, "राजद्रोह, भ्रष्टाचार या अन्य गंभीर अपराध और दुराचार" के कारण पद से हटाया जा सकता है।

VISION IAS

• महाभियोग चलाने की प्रक्रिया संसद के किसी भी सदन में प्रारंभ की जा सकती है।	• केवल हाउस ऑफ रिप्रेजेंटेटिव्स (निम्न सदन) द्वारा राष्ट्रपति के विरुद्ध महाभियोग के प्रस्ताव की कार्यवाही को प्रारंभ किया जाता है।
• महाभियोग से संबंधित संकल्प पर सदन (जिसमें संकल्प प्रस्तुत किया है) के एक-चौथाई सदस्यों द्वारा हस्ताक्षर किए जाने चाहिए, और राष्ट्रपति को 14 दिनों की अग्रिम सूचना देना आवश्यक है।	• एक बार जब यह एक साधारण बहुमत से पारित हो जाता है, तो सुनवाई (ट्रायल) की प्रक्रिया आरंभ हो जाती है।
• उस सदन की कुल सदस्य संख्या के दो-तिहाई बहुमत से महाभियोग प्रस्ताव पारित हो जाने के पश्चात्, इसे दूसरे सदन में भेजा जाता है, जिसके द्वारा आरोपों का अन्वेषण किया जाता है।	• तत्पश्चात, सीनेट (उच्च सदन) न्यायालय के रूप में कार्य करती है जहाँ दोनों पार्टी अपना पक्ष (साक्ष्य प्रस्तुत करने) प्रस्तुत करते हैं।
• यदि महाभियोग के आरोप का अन्वेषण करने वाले सदन की कुल सदस्य संख्या के कम से कम दो-तिहाई बहुमत द्वारा महाभियोग सबंधी संकल्प को पारित कर दिया जाता है, तो संकल्प के पारित किए जाने की तारीख से राष्ट्रपति को उसके पद से हटाना होगा।	• इस सुनवाई के पश्चात्, यदि सीनेट महाभियोग प्रस्ताव को दो-तिहाई बहुमत से पारित कर देती है तो राष्ट्रपति को पद से हटाया जा सकता है।

3.2.4. संयुक्त राज्य अमेरिका में राष्ट्रपति का चुनाव (US Presidential Election)

सुर्ख़ियों में क्यों?

हाल ही में, संयुक्त राज्य अमेरिका में राष्ट्रपति के चुनाव सम्पन्न हुए थे।

भारत और संयुक्त राज्य अमेरिका में राष्ट्रपति के निर्वाचन की प्रक्रिया के मध्य प्रमुख अंतर

भारतीय राष्ट्रपति की निर्वाचन प्रक्रिया	अमेरिकी राष्ट्रपति की निर्वाचन प्रक्रिया
• राष्ट्रपति के रूप में चुनाव के लिए पात्र होने के लिए एक व्यक्ति को भारत का नागरिक होना चाहिए और अन्य बातों के अतिरिक्त वह 35 वर्ष की आयु पूर्ण कर चूका हो।	• राष्ट्रपति के रूप में चुनाव के लिए पात्र होने के लिए एक व्यक्ति की न्यूनतम आयु 35 वर्ष होनी चाहिए। इसके साथ ही, उसका जन्म से अमेरिकी नागरिक होना अनिवार्य है तथा वह पिछले 14 वर्षों से लगातार अमेरिका में ही निवास कर रहा हो।
• राष्ट्रपति का निर्वाचन एकल संक्रमणीय मत के माध्यम से आनुपातिक प्रतिनिधित्व पद्धति के अनुसार होता है।	• यहाँ रिपब्लिकन और डेमोक्रेटिक दो मुख्य राजनीतिक दल हैं, जो आम चुनाव में उनका प्रतिनिधित्व करने हेतु सर्वश्रेष्ठ उम्मीदवार चुनने के लिए प्राइमरीज (primaries) और कॉकजेज (caucuses) का आयोजन करते हैं।
• निर्वाचक मंडल के प्रत्येक सदस्य को केवल एक मतपत्र प्रदान किया जाता है। मतदाता को अपना वोट डालते समय, उम्मीदवारों के नाम के साथ 1, 2, 3, 4, आदि को चिन्हित करके अपनी वरीयताओं को इंगित करना अनिवार्य है।	• इनमें से प्रत्येक पार्टी या दल राष्ट्रपति पद के लिए अपने अंतिम उम्मीदवार का चयन करने के लिए एक राष्ट्रीय कन्वेंशन आयोजित करती है। प्राइमरीज और कॉकजेज से राज्यों के प्रतिनिधि अपने पसंदीदा उम्मीदवारों का "समर्थन" करते हैं।

VISION IAS

• राष्ट्रपति का निर्वाचन निर्वाचित सदस्यों के निर्वाचक मंडल द्वारा किया जाता है। इसमें निम्नलिखित सदस्य शामिल होते हैं: ○ संसद के दोनों सदनों के निर्वाचित सदस्य; ○ राज्यों की विधान सभाओं के निर्वाचित सदस्य; तथा ○ दिल्ली और पुडुचेरी की विधान सभाओं के निर्वाचित सदस्य।	• अमेरिकी नागरिक **इलेक्टर्स** (कुल 538) नामक ऑफिसियल्स (अधिकारियों) के एक समूह का चुनाव करने के लिए मतदान करते हैं, जो राष्ट्रपति और उपराष्ट्रपति का चुनाव करते हैं। किसी राज्य में **इलेक्टर्स (electors) की संख्या** उसकी जनसंख्या के आकार के अनुपात में होती है।
• राष्ट्रपति पद के लिए निर्वाचित घोषित होने के लिए, एक उम्मीदवार को वोटों का एक निश्चित कोटा प्राप्त करना होता है।	• जिस उम्मीदवार को किसी राज्य के लोगों से सर्वाधिक वोट प्राप्त होंगे, उसे उस राज्य के सभी इलेक्टोरल वोट प्राप्त हो जाएंगे। सर्वाधिक इलेक्टोरल वोट प्राप्त करने वाला राष्ट्रपति पद का उम्मीदवार राष्ट्रपति बन जाता है।

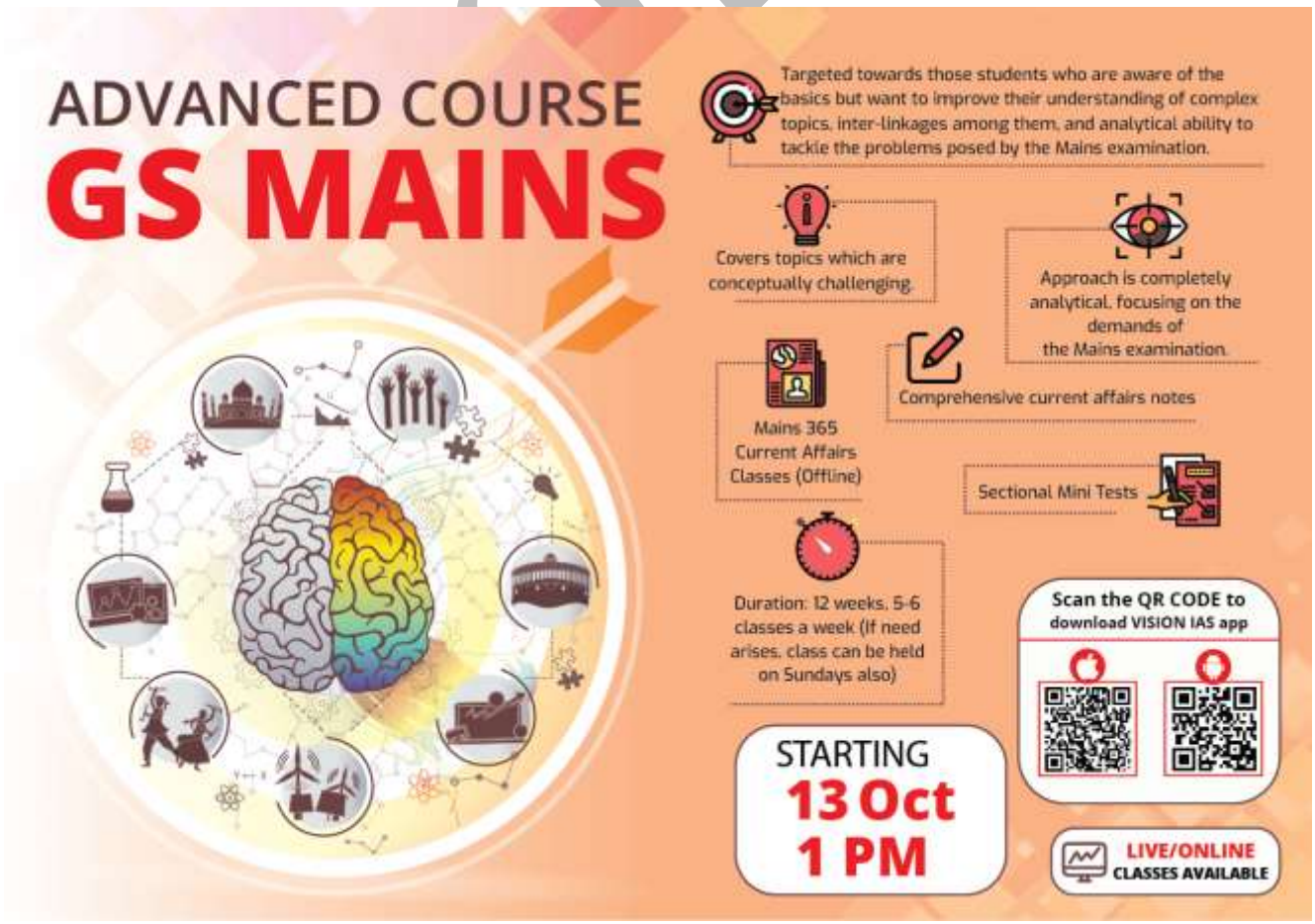

4. महत्वपूर्ण अधिनियम और विधान (Important Acts and Legislations)

4.1. नागरिकता संशोधन अधिनियम (Citizenship Amendment Act)

सुर्ख़ियों में क्यों?

हाल ही में, संसद द्वारा **नागरिकता संशोधन अधिनियम, 2019** अधिनियमित किया गया, जिसके माध्यम से **नागरिकता अधिनियम, 1955** में संशोधन किया गया है।

पृष्ठभूमि

- भारतीय संविधान का **अनुच्छेद 11** संसद को नागरिकता के अर्जन और समाप्ति तथा नागरिकता से संबंधित अन्य सभी विषयों के संबंध में कोई भी उपबंध करने हेतु सशक्त करता है।
- नागरिकता (संशोधन) अधिनियम, 2003 में प्रावधान किया गया था कि **"अवैध प्रवासी"** पंजीकरण या देशीयकरण, दोनों के माध्यम से नागरिकता हेतु आवेदन करने के लिए पात्र **नहीं** होंगे।
- नागरिकता अधिनियम, 1955 की धारा 2(1)(b) अवैध प्रवासी को ऐसे विदेशी के रूप में परिभाषित करती है, जो:
  - पासपोर्ट एवं वीजा जैसे वैध यात्रा दस्तावेजों के बिना भारत में प्रवेश करता है; अथवा
  - वैध दस्तावेजों के साथ देश में प्रवेश करता है, लेकिन भारत में उस समयावधि से अतिरिक्त समय तक रहता है, जितनी अवधि के लिए उसे अनुमति प्रदान की गई थी।
- हालांकि, पड़ोसी राष्ट्रों में अल्पसंख्यकों की दयनीय स्थिति को देखते हुए, वर्ष 2016 में एक नागरिकता संशोधन विधेयक संसद में पुर:स्थापित किया गया था लेकिन यह व्यपगत हो गया।

नागरिकता अधिनियम, 1955

- यह जन्म, वंश (उद्भव), रजिस्ट्रीकरण (पंजीकरण), देशीयकरण और भारत में किसी राज्यक्षेत्र को शामिल किए जाने पर नागरिकता प्राप्त करने का प्रावधान करता है।
- यह अधिनियम अवैध प्रवासियों को भारतीय नागरिकता प्राप्त करने से प्रतिबंधित करता है। यह एक अवैध प्रवासी को एक ऐसे विदेशी के रूप में परिभाषित करता है: (i) जो वैध पासपोर्ट या यात्रा दस्तावेजों के बिना भारत में प्रवेश करता है, या (ii) अनुमत समयावधि से अधिक समय तक भारत में रहता है।
- यह प्रवासी भारतीय नागरिक (Overseas Citizen of India: OCI) कार्डधारकों के पंजीकरण और उनके अधिकारों को विनियमित करता है।

नागरिकता संशोधन अधिनियम (Citizenship Amendment Act: CAA), 2019 के प्रमुख प्रावधान

- इस संशोधन अधिनियम के अंतर्गत यह प्रावधान है कि निम्नलिखित शर्तों को पूरा करने वाले अवैध प्रवासियों को इस अधिनियम के अंतर्गत अवैध प्रवासी नहीं समझा जाएगा:
  - यदि वे हिंदू, सिख, बौद्ध, जैन, पारसी या ईसाई समुदाय से हैं;
  - यदि वे अफगानिस्तान, बांग्लादेश या पाकिस्तान से संबंधित हैं;
  - यदि उन्होंने 31 दिसंबर 2014 को या उससे पूर्व भारत में प्रवेश किया है तथा वे संविधान की **छठी अनुसूची** में सम्मिलित कुछ जनजातीय क्षेत्रों (असम, मेघालय, मिजोरम या त्रिपुरा) या **'इनर लाइन परमिट'** के तहत आने वाले क्षेत्रों (अर्थात् अरुणाचल प्रदेश, मिजोरम और नागालैंड) में नहीं रह रहे हों।
    - इन जनजातीय क्षेत्रों में कार्बी आंगलांग (असम), गारो हिल्स (मेघालय), चकमा जिला (मिजोरम) और त्रिपुरा जनजाति क्षेत्र जिला शामिल हैं।
- अवैध प्रवासन या नागरिकता के संबंध में प्रवासियों की इन श्रेणियों के विरुद्ध सभी कानूनी कार्यवाही बंद हो जाएगी।
- प्रवासियों की उपर्युक्त श्रेणियों के लिए देशीयकरण की अवधि **11 वर्ष से घटाकर 5 वर्ष** कर दी गई है।
- **प्रवासी भारतीय नागरिक (Overseas Citizen of India: OCI) के पंजीकरण को रद्द करने के लिए आधार:** इस संशोधन अधिनियम में यह प्रावधान किया गया है कि सरकार OCI के पंजीकरण को रद्द कर सकती है, यदि OCI कार्डधारक नागरिकता अधिनियम या केंद्र द्वारा अधिसूचित किसी अन्य कानून का उल्लंघन करता है। हालांकि, कार्डधारक को सुनवाई का अवसर दिया जाएगा।
  - यह अधिनियम प्रावधान करता है कि केंद्र सरकार OCI के पंजीकरण को अग्रलिखित पांच आधारों पर रद्द कर सकती है: (1) धोखाधड़ी के माध्यम से पंजीकरण कराना, (2) भारत के संविधान के प्रति अनादर या असंतुष्टि प्रकट करना, (3) युद्ध के दौरान

VISION IAS

शत्रु के साथ संबंध, (4) भारत की संप्रभुता, राज्य की सुरक्षा या सार्वजनिक हित में आवश्यक होने पर, या (5) यदि पंजीकरण के पांच वर्ष के भीतर OCI कार्डधारक को दो वर्ष या उससे अधिक अवधि के लिए कारावास की सजा मिलती है।

CAA के पक्ष में तर्क

- **धार्मिक उत्पीड़न:** दिल्ली पैक्ट के नाम से प्रसिद्ध वर्ष 1950 में हस्ताक्षरित नेहरू-लियाकत समझौते में धार्मिक अल्पसंख्यकों को कुछ सुरक्षोपाय और अधिकार प्रदान किए गए थे, जैसे- जबरन धर्मांतरण को गैर-मान्यता और अपहृत महिलाओं तथा लूटी गई संपत्ति की वापसी आदि।
  - हालांकि, अफगानिस्तान, पाकिस्तान एवं बांग्लादेश में राजकीय धर्म का प्रावधान है, जहां भेदभावपूर्ण ईश निन्दा कानून, धार्मिक हिंसा और जबरन धर्मांतरण के परिणामस्वरूप अल्पसंख्यक समूहों का धार्मिक उत्पीड़न हुआ है।
  - उदाहरण के लिए, बांग्लादेश में वर्ष 1951 में गैर-मुस्लिम अल्पसंख्यकों की आबादी 23.20 प्रतिशत थी, जो वर्ष 2011 में घटकर लगभग 9.6 प्रतिशत रह गई थी।
- **अवैध आप्रवास (Illegal immigration):** पड़ोसी राष्ट्रों से अवैध आप्रवास दशकों से एक विवादास्पद मुद्दा रहा है। उदाहरण के लिए, असम में वर्ष 1979 में शुरू हुए और लगभग 6 वर्षों तक चले आंदोलन के दौरान, प्रदर्शनकारियों ने सभी अवैध आप्रवासियों (मुख्य रूप से बांग्लादेश से आए आप्रवासी) की पहचान और उनके निर्वासन की मांग की थी। यह अधिनियम अवैध आप्रवासियों और शरण मांगने वाले उत्पीड़ित समुदायों के मध्य अंतर करेगा।

CAA के विपक्ष में तर्क

- **देशों का वर्गीकरण:** यह स्पष्ट नहीं किया गया है कि इन देशों से आए प्रवासियों को अन्य पड़ोसी राष्ट्रों {जैसे- श्रीलंका (राजकीय धर्म-बौद्ध) और म्यांमार (बौद्ध धर्म की प्रधानता)} से आए प्रवासियों से पृथक क्यों किया गया है।
  - जबकि, श्रीलंका में वर्षों से एक भाषाई अल्पसंख्यक समुदाय (तमिल ईलम) का उत्पीड़न होता रहा है।
  - म्यांमार में भी रोहिंग्या मुसलमानों जैसे धार्मिक अल्पसंख्यकों के उत्पीड़न का इतिहास रहा है।
- **अल्पसंख्यक समुदायों का वर्गीकरण:** CAA में केवल **'6 अल्पसंख्यक समुदायों'** का ही उल्लेख है और इसमें **'उत्पीड़ित अल्पसंख्यकों' या 'धार्मिक उत्पीड़न'** का उल्लेख नहीं है। इसलिए, आदर्श रूप में इसे धार्मिक उत्पीड़न एवं राजनीतिक उत्पीड़न के मध्य अंतर नहीं करना चाहिए। इसके अतिरिक्त, CAA से मुसलमानों, यहूदियों और नास्तिकों को बाहर रखने को संविधान के **अनुच्छेद 14** का उल्लंघन बताया जा रहा है। उदाहरण के लिए:
  - पाकिस्तान में वर्षों से शिया, हजारा अथवा अहमदिया मुसलमानों (जिन्हें वहां पर गैर-मुस्लिम माना जाता है) जैसे सह-धर्मावलंबियों का उत्पीड़न होते आया है।
  - बांग्लादेश में भी कुछ असामाजिक तत्वों द्वारा नास्तिकों की हत्या की जाती रही है।
- **प्रवेश की तिथि के आधार पर वर्गीकरण:** CAA, भारत में प्रवेश की तिथि के आधार पर भी प्रवासियों के मध्य अंतर करता है, अर्थात्, इसमें केवल उन आप्रवासियों को नागरिकता प्रदान करने का उल्लेख है जिन्होंने भारत में 31 दिसंबर 2014 को या उससे पूर्व प्रवेश किया है।
- **असम समझौते के प्रावधान और भावना के विरुद्ध:** असम समझौते के तहत विदेशियों की पहचान और निर्वासन हेतु 25 मार्च 1971 की तिथि नियत की गयी है, जबकि, अन्य राज्यों के लिए कट-ऑफ-इयर 1951 है। जबकि, CAA में NRC (नेशनल रजिस्टर ऑफ़ सिटीजन) के लिए कट-ऑफ-डेट को 25 मार्च 1971 से बढ़ाकर 31 दिसंबर 2014 किया गया है।
- **OCI के पंजीकरण को रद्द करने के संबंध में प्रावधान:** इस संशोधन अधिनियम के माध्यम से केंद्र सरकार को उन कानूनों की सूची को निर्धारित करने की शक्ति दी गई है, जिनके उल्लंघन के परिणामस्वरूप OCI का पंजीकरण रद्द किया जा सकता है। इसे विधायिका द्वारा कार्यपालिका को अत्यधिक शक्तियों के प्रत्यायोजन के तौर पर देखा जा रहा है।
- **विदेशी संबंधों पर प्रभाव:**
  - CAA में यह निहित है कि बांग्लादेश में हिंदू अल्पसंख्यक का धार्मिक उत्पीड़न संशोधन के कारणों में से एक है। इसका आशय है कि बांग्लादेश से आए मुस्लिम प्रवासियों को "निर्वासित" किया जाएगा। ऐसे में यह द्विपक्षीय मुद्दों को प्रभावित करने के साथ-साथ बांग्लादेश से संबंधों को विकृत करेगा।
  - नागरिक राष्ट्रवाद और धार्मिक बहुलवाद के प्रति भारत की सुदृढ़ प्रतिबद्धता, ऐसे महत्वपूर्ण स्तंभ हैं, जिन पर अमेरिका और पश्चिम राष्ट्रों के साथ भारत की रणनीतिक साझेदारी विकसित हुई है। यह संभावना व्यक्त की गयी है कि इससे रणनीतिक साझेदारी पर भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा।

VISION IAS

निष्कर्ष

- भारतीय लोकतंत्र कल्याण एवं पंथनिरपेक्ष राज्य की अवधारणा तथा एक प्रगतिशील संविधान पर आधारित है, जहां अनुच्छेद 21 गरिमा के साथ जीवन का अधिकार प्रदान करता है। ऐसे में, यह राज्य का एक नैतिक दायित्व है कि वह अल्पसंख्यक समुदायों की यदि कोई आशंकाएं हैं तो उसे दूर करे। इसलिए, मूल देश (कंट्री ऑफ़ ऑरिजिन) एवं धार्मिक अल्पसंख्यकों के आधार पर CAA में किए गए वर्गीकरण को और अधिक समावेशी बनाया जा सकता है।
- इसके अतिरिक्त, भारत को एक शरणार्थी अधिनियम अधिनियमित करना चाहिए, जिसमें बिना भय या कारावास के जीवन जीने का अधिकार सुरक्षित हो सके। यदि ऐसी आशंका है कि ऐसे में लोग स्थायी शरण की तलाश कर सकते हैं, तो UNHCR आधिकारिक तौर पर लंबे समय तक शरणार्थियों को नागरिकता के लिए आवेदन करने हेतु अपात्र किए बिना, उनके साथ स्वैच्छिक प्रत्यावर्तन के लिए काम कर सकता है।

4.1.1. राष्ट्रीय जनसंख्या रजिस्टर (National Population Register)

सुर्ख़ियों में क्यों?

हाल ही में, सरकार द्वारा देश भर में नागरिकों के पंजीकरण हेतु एक रजिस्टर के प्रवर्तन का आधार तैयार करने के लिए एक **राष्ट्रीय जनसंख्या रजिस्टर (NPR)** निर्मित करने का निर्णय लिया गया है।

राष्ट्रीय जनसंख्या रजिस्टर (NPR) के बारे में

- कारगिल युद्ध के पश्चात् एक मंत्रियों का समूह (Group of Ministers: GoMs) गठित किया गया था, जिसने नागरिकों के एक राष्ट्रीय रजिस्टर के सृजन को सुविधाजनक बनाने तथा अवैध प्रवास को नियंत्रित करने हेतु **भारत के सभी निवासियों के अनिवार्य पंजीकरण की अनुशंसा की थी।**
- NPR **"देश के सामान्य निवासियों" की एक सूची** है।
  - गृह मंत्रालय के अनुसार "देश का सामान्य निवासी" वह व्यक्ति है, जो **कम से कम विगत छह माह से एक स्थानीय क्षेत्र में निवास कर रहा है तथा आगामी छह माह हेतु एक विशेष स्थान पर रहने का इच्छुक है।**
- NPR को **नागरिकता अधिनियम, 1955** तथा **नागरिकता (नागरिकों का पंजीकरण और राष्ट्रीय पहचान-पत्र जारी करना) नियमावली, 2003** के प्रावधानों के तहत तैयार किया जा रहा है।
  - **नागरिकता अधिनियम, 1955** को वर्ष 2004 में संशोधित करते हुए इसमें धारा 14A को समाविष्ट किया गया था, जो निम्नलिखित हेतु प्रावधान करती है:
    - केंद्र सरकार **अनिवार्यत: भारत के प्रत्येक नागरिक को पंजीकृत कर सकती है तथा राष्ट्रीय पहचान-पत्र जारी कर सकती है।**
    - केंद्र सरकार **भारतीय नागरिकों का एक राष्ट्रीय रजिस्टर (National Register of Indian Citizens: NRIC)** बना सकती है तथा इस प्रयोजनार्थ राष्ट्रीय पंजीकरण प्राधिकरण (National Registration Authority) स्थापित कर सकती है।
    - **निवासियों** के सार्वभौमिक आंकड़ों को संग्रहित करने के पश्चात् नागरिकता का उचित सत्यापन किया जाएगा, तत्पश्चात उसमें से **नागरिकों** के उप-समुच्चय को निर्धारित किया जाएगा। इसलिए, **सभी सामान्य निवासियों** हेतु NPR में पंजीकरण करवाना **अनिवार्य** है।
- NPR का स्थानीय, उप-जिला, जिला, राज्य और राष्ट्रीय स्तरों पर संचालन किया जाएगा।
- इसे **गृह मंत्रालय के अंतर्गत RGI के कार्यालय द्वारा जनगणना 2021** के प्रथम चरण के साथ संयोजन में संचालित किया जाएगा।
  - हाल ही में पूर्ण हुए NRC (राष्ट्रीय नागरिक रजिस्टर) को ध्यान में रखते हुए केवल **असम को NPR में सम्मिलित नहीं किया जाएगा।**
- NPR में पंजीकृत **18 वर्ष के आयु वर्ग** के सभी सामान्य निवासियों हेतु **निवास पहचान-पत्र जारी किए जाने का प्रावधान** भी किया गया है।

NPR, जनगणना और NRC से किस प्रकार भिन्न है?

- यह कार्य प्रत्येक दस वर्षों में आयोजित होने वाली **जनगणना से भिन्न है तथा यह NRC से संबद्ध नहीं है।**
- हालांकि, जनगणना एक वृहद् कार्य है, किंतु इसमें व्यक्तिगत पहचान संबंधी विवरणों को शामिल नहीं किया जाता है। दूसरी ओर, NPR, प्रत्येक व्यक्ति के पहचान संबंधी विवरण को संग्रहित करने हेतु अभिकल्पित है।

VISION IAS

- जनगणना संबंधी आंकड़े गोपनीयता खंड द्वारा संरक्षित होते हैं। सरकार ने यह प्रतिबद्धता व्यक्त की है कि वह व्यक्तियों की कुल गणना (headcount) हेतु एक व्यक्ति से प्राप्त सूचना को प्रकट नहीं करेगी।

- **NRC** के विपरीत NPR, नागरिकता प्रमाणन का अभियान नहीं है, क्योंकि यह छह माह से अधिक अवधि से एक स्थान पर निवासित एक विदेशी व्यक्ति का भी रिकॉर्ड रखेगा।
  - NPR के एक बार पूर्ण व प्रकाशित हो जाने के उपरांत, यह भारतीय नागरिकों के राष्ट्रीय रजिस्टर (National Register of Indian Citizens: NRIC) को निर्मित करने का आधार तैयार करेगा। इस प्रकार NRIC, असम के NRC का ही एक अखिल भारतीय संस्करण होगा।

NPR में संग्रहित आंकड़े

- NPR में **जनसांख्यिकीय तथा बायोमेट्रिक दोनों प्रकार के आंकड़ों** का संग्रहण किया जाएगा।
- **जनसांख्यिकीय आकड़ों** की 15 विभिन्न श्रेणियां होंगी, जो नाम, जन्मस्थान, शिक्षा व व्यवसाय आदि अनेक आधारों पर भिन्न होंगी।
- **बायोमेट्रिक आंकड़ों** हेतु यह 'आधार' पर निर्भर होगा, जिसके लिए निवासियों के 'आधार विवरण' का उपयोग किया जाएगा।
- यह **जन्म एवं मृत्यु प्रमाण-पत्रों के सिविल रजिस्ट्रेशन सिस्टम को अद्यतित** करने का कार्य कर रहा है।
- यद्यपि, NPR में पंजीकरण कराना **अनिवार्य** है, तथापि **PAN, आधार, ड्राइविंग लाइसेंस और मतदाता पहचान-पत्र** जैसे अतिरिक्त आंकड़ों का समावेशन **स्वैच्छिक** है।

NPR के लाभ

- **निवासियों का डेटाबेस:** यह प्रासंगिक जनांकिकीय विवरणों के साथ देश के निवासियों का एक व्यापक पहचान डेटाबेस निर्मित करने में सहायता प्रदान करेगा तथा विभिन्न मंचों पर निवासियों के आंकड़ों को सुव्यवस्थित करेगा।
- **बेहतर क्रियान्वयन:** यह सरकार को अपनी नीतियों को बेहतर तरीके से सूत्रबद्ध करने में सहायता प्रदान करेगा तथा राष्ट्रीय सुरक्षा में भी योगदान देगा।
  - गृह मंत्रालय ने यह तर्क दिया है कि **आधार** की तुलना में NPR सब्सिडियों के वितरण हेतु अधिक उपयुक्त होगा, क्योंकि NPR में प्रत्येक व्यक्ति को एक परिवार से संबद्ध करने हेतु आंकड़े उपलब्ध हैं।
- **किसी भी प्रकार के दोषों का निवारण:** उदाहरणार्थ- एक व्यक्ति की विभिन्न सरकारी दस्तावेजों में भिन्न-भिन्न जन्म-तिथियाँ दर्ज होना सामान्य है। NPR इस प्रकार की असंगति के उन्मूलन में सहायता प्रदान करेगा।
- **दोहराव (duplication) की समाप्ति:** NPR आंकड़ों के चलते, निवासियों को आधिकारिक कार्यों हेतु आयु, पता और अन्य विवरण के विभिन्न साक्ष्यों को प्रस्तुत करने की आवश्यकता नहीं होगी। सरकार ने दृढ़ता से कहा है कि यह मतदाता सूची में दोहराव का उन्मूलन करेगा।

NPR से संबंधित मुद्दे

- **निजता का मुद्दा:** ज्ञातव्य है कि देश में आधार (Aadhaar) से संबंधित निजता के मुद्दे पर वाद-विवाद अभी भी जारी है, तथापि NPR में भारत के निवासियों के व्यापक आंकड़ों को संग्रहित करने का प्रयास किया जा रहा है। साथ ही, इतने व्यापक मात्रा में आंकड़ों के संरक्षण हेतु किसी प्रकार के तंत्र पर स्पष्टता अभी तक परिलक्षित नही हुई है।
- **आंकड़ों के सहभाजन की वैधता:** UIDAI और NPR, दोनों द्वारा एकत्रित किए जाने वाले सामान्य एवं बायोमेट्रिक आंकड़ों के संग्रहण की वैधता पर प्रश्नचिन्ह आरोपित किए गए हैं। उदाहरणार्थ- यह तर्क दिया गया है कि NPR के माध्यम से बायोमेट्रिक सूचना का संग्रहण अधीनस्थ विधान (subordinate legislation) के विषय-क्षेत्र के अंतर्गत शामिल नहीं है।
- **राष्ट्रीय सुरक्षा:** सृजित किए जाने वाले डेटाबेस के आकार, डेटाबेस की केंद्रीकृत प्रकृति, डेटाबेस में संग्रहित सूचना की संवेदनशील प्रकृति तथा अंतर्राष्ट्रीय अभिकरणों की संलिप्तता को देखते हुए इससे राष्ट्रीय सुरक्षा के समक्ष खतरा उत्पन्न हो सकता है।
- **NRC के समान मुद्दे:** NPR वस्तुतः राष्ट्रव्यापी NRC समान होगा तथा असम के नागरिकों की सूची के समान भी होगा। NRC के निर्माण के दौरान ऐसे अनेक दृष्टांत दृष्टिगोचर हुए थे जहां एक परिवार के कुछ सदस्यों को प्रारूप सूची में सूचीबद्ध किया गया था जबकि अन्यों को सूचीबद्ध नहीं किया गया।
- **परियोजनाओं का दोहराव:** यह अस्पष्ट है कि सरकार के लिए भारतीय नागरिकता के संबंध में एक अन्य पहचान अभियान संचालित करने की क्या आवश्यकता है, जबकि लगभग 90% नागरिक आधार योजना के अंतर्गत सम्मिलित किए जा चुके हैं।
  - आधार, NRC, NPR, जनगणना इत्यादि जैसी बहुविध परियोजनाओं के चलते **देश में नागरिकता के विचार के संदर्भ में भ्रांति** उत्पन्न हुई है।

VISION IAS

- **गैर-सूचीबद्ध जनसंख्या (Uncounted people):** जनगणना के तहत संपूर्ण जनसंख्या को शामिल नहीं किया जाता है, जिसके कारण उन नागरिकों की स्थिति से संबंधित प्रश्न का समाधान नहीं हो सका है, जिन्हें जनगणना अधिकारी द्वारा सूचीबद्ध नहीं किया गया है।
    - यह प्रवासी श्रमिकों की स्थिति को भी स्पष्ट नहीं करता है, जो नागरिक तो हो सकते हैं, परन्तु "सामान्य निवासी" के रूप में पात्र नहीं होंगे।

NPR बनाम आधार

NPR में संग्रहित आंकड़ों को दोहराव से संरक्षित करने तथा आधार संख्या जारी करने हेतु UIDAI को प्रेषित किया जाएगा।

- **स्वैच्छिक बनाम अनिवार्य:** सभी भारतीय निवासियों को NPR में पंजीकरण करवाना अनिवार्य है, जबकि UIDAI में पंजीकरण करवाना स्वैच्छिक है।
- **संख्या बनाम रजिस्टर:** UIDAI एक संख्या जारी करता है जबकि NPR नागरिकों के राष्ट्रीय रजिस्टर का सूचक है। इस प्रकार यह केवल एक रजिस्टर है।
- **प्रमाणीकरण बनाम पहचान निर्धारण:** आधार संख्या, इस कार्य-कलाप के दौरान एक प्रमाणकर्त्ता (authenticator) के रूप में कार्य करेगा। इसे किसी भी मंच द्वारा स्वीकृत किया जा सकता है तथा अनिवार्य बनाया जा सकता है। राष्ट्रीय निवासी कार्ड (National Resident Card) वस्तुत: निवासी की स्थिति और नागरिकता का द्योतक होगा। यह अस्पष्ट है कि किन परिस्थितियों में इस कार्ड का प्रयोग किए जाने की आवश्यकता होगी।
- **UIDAI बनाम RGI:** UIDAI विशिष्ट पहचान योजना में व्यक्तियों को नामांकित करने हेतु उत्तरदायी है तथा RGI व्यक्तियों को NPR में सूचीबद्ध करने हेतु अधिदेशित है।
- **घर-घर जाकर नामांकन करना बनाम किसी केंद्र पर नामांकन करवाना (Door to door canvassing vs. center enrollment):** UID में पंजीकरण हेतु व्यक्तियों को एक नामांकन केंद्र में जाना होता है जबकि NPR के तहत घर-घर जाकर निवासियों का पंजीकरण किया जाएगा।
- **अग्रिम दस्तावेजीकरण बनाम जनगणना सामग्री:** UID दस्तावेजीकरण और पहचान-निर्धारण के अग्रिम रूपों पर आधारित है जबकि NPR जनगणना द्वारा प्रदत्त सूचना पर आधारित होगा।

निष्कर्ष

NPR में संग्रहित किए जाने वाले आंकड़ों से संबद्ध निजता संबंधी सरोकारों को स्पष्ट किया जाना अत्यावश्यक है तथा असम में सम्पादित ऐसे समान कार्यों (उदाहरणार्थ- NRC) से उत्पन्न समस्याओं को भी ध्यान में रखना आवश्यक है। यह नागरिकता के सत्यापन हेतु एक मूलभूत डेटाबेस के रूप में कार्य करने में तभी सक्षम होगा जब एक राष्ट्रव्यापी NRC को पश्चातवर्ती चरणों में संपन्न किया जाएगा।

4.1.2. राष्ट्रव्यापी राष्ट्रीय नागरिक रजिस्टर (Nationwide NRC)

सुर्ख़ियों में क्यों?

हाल ही में, भारत सरकार ने एक राष्ट्रव्यापी राष्ट्रीय नागरिक रजिस्टर (National Register of Citizens: NRC) को लागू करने के स्पष्ट संकेत दिए हैं।

अन्य संबंधित तथ्य

- NRC वस्तुतः देश के सभी वैध नागरिकों (आवश्यक दस्तावेज धारक) की एक सूची होती है।
- इससे पूर्व, उच्चतम न्यायालय के आदेशों का अनुपालन करते हुए, सरकार द्वारा असम में NRC को अपडेट करने का कार्य किया गया था। इसके परिणामस्वरूप, 19 लाख से अधिक आवेदक NRC की सूची में स्थान प्राप्त करने में असफल रहे थे।

नागरिकता अधिनियम, 1955

- यह अधिनियम जन्म, वंशानुगत, पंजीकरण, देशीकरण एवं क्षेत्र समाविष्ट करने के आधार पर नागरिकता प्राप्त करने का प्रावधान करता है।
- यह अधिनियम **अवैध प्रवासियों को भारतीय नागरिकता प्राप्त करने से वंचित** करता है। यह अवैध प्रवासियों को ऐसे विदेशी के रूप में परिभाषित करता है, जिसने (i) भारत में बिना किसी वैध पासपोर्ट या यात्रा दस्तावेजों के प्रवेश किया हो (ii) वह स्वीकृत अवधि से अधिक भारत में निवास कर रहा हो।
- यह **भारत के ओवरसीज नागरिक (OCIs) कार्डधारकों तथा उनके अधिकारों को विनियमित करता** है। एक OCI भारत आगमन

VISION IAS

हेतु मल्टी-एंट्री, मल्टी-पर्पज लाइफ-लॉन्ग वीजा प्राप्त कर सकता है।

नागरिकता के निर्धारण के लिए मानदंड

- नागरिकता अधिनियम, 1955 में स्पष्ट रूप से यह वर्णित है कि 26 जनवरी 1950 को या उसके पश्चात् परंतु 1 जुलाई 1987 के पूर्व जन्मा व्यक्ति जन्म से भारत का नागरिक होगा।
- भारत में 1 जुलाई 1987 को या उसके पश्चात् परंतु 3 दिसम्बर 2004 {नागरिकता (संशोधन) अधिनियम, 2003 के लागू होने की तिथि} से पूर्व जन्मा व्यक्ति केवल तभी भारत का नागरिक माना जाएगा, यदि उसके जन्म के समय उसके माता-पिता में से कोई एक भारत का नागरिक हो।
- यदि किसी व्यक्ति का जन्म 3 दिसंबर 2004 को या उसके पश्चात् भारत में हुआ है, तो वह उसी दशा में जन्म से भारत का नागरिक माना जाएगा, यदि उसके माता-पिता दोनों उसके जन्म के समय भारत के नागरिक हों अथवा माता या पिता में से कोई एक उस समय भारत का नागरिक हो तथा दूसरा अवैध प्रवासी न हो।
- इस संदर्भ में, केवल असम में 24 मार्च 1971 तक प्रवेश कर चुके विदेशियों की नागरिकता को नियमित करने की अनुमति प्रदान की गई थी।
- देश के शेष भागों के संदर्भ में मौजूदा प्रावधान यह है कि 26 जनवरी 1950 के पश्चात् देश के बाहर जन्म लेने वाले और उचित दस्तावेज़ों के बिना भारत में रहने वाले व्यक्तियों को विदेशी व अवैध प्रवासी माना जाएगा।

राष्ट्रव्यापी NRC के पक्ष में तर्क

- **नागरिकों की पहचान सुनिश्चित करना:** NRC वस्तुतः देश में अवैध प्रवासन की समस्या के संदर्भ में अति-आवश्यक समाधान प्रदान करेगा। इसकी सहायता से अवैध अप्रवासियों द्वारा देश की जनसांख्यिकी को परिवर्तित करने और विभिन्न राज्यों की राजनीति को प्रभावित करने जैसी आशंकाओं को भी समाप्त करने में सहायता मिलेगी।
- **कुछ हितधारकों द्वारा की गई मांग:** असम पब्लिक वर्क्स (APW) जैसे NGOs द्वारा पिछली NRC को अपग्रेड करने हेतु उच्चतम न्यायालय में याचिका दायर की गई थी।
- **राज्य का वैधानिक दायित्व:** नागरिकता अधिनियम, 1955 की **धारा 14A** की उप-धारा (1) में यह प्रावधान है कि **"केंद्र सरकार अनिवार्यतः भारतवर्ष के प्रत्येक नागरिक को पंजीकृत करेगी एवं उसे राष्ट्रीय पहचान पत्र जारी करेगी"।**
  - **भारतीय नागरिकों का राष्ट्रीय रजिस्टर (National Register of Indian Citizens: NRIC)** को तैयार करने और उसे बनाए रखने की प्रक्रिया **"नागरिकता (नागरिकों का पंजीकरण और राष्ट्रीय पहचान पत्र जारी करना) नियम, 2003"** में निर्दिष्ट है।
- **आव्रजन संबंधी मुद्दों का समाधान:** NRC, भविष्य में देश में प्रवेश करने वाले अवैध प्रवासियों को हतोत्साहित करेगा।
  - यह प्रभावी सीमा प्रबंधन (विशेष रूप से नेपाल और बांग्लादेश सीमाओं के संदर्भ में) में एजेंसियों की सहायता कर सकता है।

राष्ट्रव्यापी NRC से संबंधित समस्याएँ

- **निर्वासन संबंधी प्रावधानों की विद्यमानता:** चूंकि आप्रवासियों से संबंधित विषय **'विदेशी विषयक अधिनियम, 1946'** और **'पासपोर्ट (भारत में प्रवेश) अधिनियम, 1920'** जैसे कानूनों के अधीन हैं तथा अधिकरणों को उनका पता लगाने, उन्हें बंदी बनाने और निर्वासित करने संबंधी अधिकार पहले से ही प्राप्त हैं।
- **कानूनी बाधाएं:** पिछली बार जब केंद्र सरकार ने आधार परियोजना के अंतर्गत एकल पहचान हेतु नामांकन को अनिवार्य बनाने का प्रयास किया था, तब इसका अत्यधिक (सीमित और न्यायोचित मामलों को छोड़कर) विरोध किया गया था और अंततः इसे निरस्त करना पड़ा था। प्रस्तावित NRIC योजना से निजता के अधिकार के संबंध में के. एस. पुट्टास्वामी वाद में दिए गए निर्णय का प्रत्यक्ष उल्लंघन भी होगा।
- **असम के अनुभव की उपेक्षा:** पिछली NRC से संबंधित जटिलताओं को देखते हुए जैसे कि-
  - **पिछले परिणामों पर कोई स्पष्टता नहीं:** पिछली NRC से बाहर हुए 19 लाख से अधिक लोगों पर अंतिम परिणाम क्या होंगें, इस संबंध में कोई स्पष्टता नहीं है। उल्लेखनीय है कि इन लोगों की राज्यविहीन स्थिति बनी हुई है और इनके बांग्लादेश (जो इन्हें अपना नागरिक मानने से अस्वीकार करता है) "निर्वासित" किए जाने का जोखिम बना हुआ है।
  - **सार्वजनिक संसाधनों की बर्बादी:** कई आलोचकों द्वारा करदाताओं के धन के व्यय (जिसका व्यय पिछली NRC पर किया गया था) के संबंध में आलोचना की जा रही है।
  - **क्षमता का अभाव:** असम के प्रथम डिटेंशन कैंप का निर्माण जारी है, लेकिन यह कैंप केवल 3,000 लोगों के लिए ही रहने योग्य है, जबकि अंतिम NRC से बाहर हुए लोगों की संख्या लगभग 19 लाख है। इसके अतिरिक्त, मीडिया रिपोर्टों में कहा गया है कि डिटेंशन कैंपों में अमानवीय जीवन स्थितियां विद्यमान होती हैं।

VISION IAS

- **विरोध:** असम के कई वर्गों, जैसे- बोडोलैंड के छात्रों ने असम में NRC की पुनरावृत्ति का विरोध किया है।

- **CAA के साथ जुड़ा होना:** ऐसी आशंकाएं हैं कि इस तरह की कवायद देश में अल्पसंख्यकों को लक्षित कर सकती है। इसके अतिरिक्त, CAA को लागू करने के लिए, नागरिकों और अवैध प्रवासियों की पहचान की जाएगी। ऐसे में एक NRC को CAA के लिए आवश्यक प्रथम कदम के रूप में देखा जाता है।
- **अल्पसंख्यकों का मुद्दा:** ऐसी आशंकाएं व्यक्त की जा रही हैं कि इस तरह की योजनाओं द्वारा देश में अल्पसंख्यकों को निशाना बनाया जा सकता है।
  - **नागरिकता (संशोधन) अधिनियम, 2019** वस्तुतः अफगानिस्तान, बांग्लादेश और पाकिस्तान से आए हिंदू अवैध प्रवासियों और कुछ अन्य अल्पसंख्यक समुदायों के लोगों को भारतीय नागरिकता के लिए पात्र बनाता है। हालाँकि, यह इस प्रक्रिया में अल्पसंख्यकों के पृथक होने संबंधी आशंका उत्पन्न करता है।
- **कार्यान्वयन संबंधी विसंगतियाँ:** NRC, देश के सामान्य लोगों, विशेष रूप से **निर्धन और अशिक्षित** वर्गों के **समय, धन एवं उत्पादकता** को प्रतिकूल रूप से प्रभावित करेगी।
  - विदेशी विषयक अधिनियम, 1946 के अंतर्गत, कोई व्यक्ति नागरिक है या नहीं, यह प्रमाणित करने का उत्तरदायित्व व्यक्तिगत आवेदक पर निर्भर करता है न कि राज्य पर। इसके अतिरिक्त, यह भी ज्ञात नहीं हैं कि इस प्रकार के कार्य को किस प्रकार संपादित किया जाएगा।
  - इसके अतिरिक्त, भारत में **निम्नस्तरीय दस्तावेजी संस्कृति** विद्यमान है और लगभग 125 करोड़ भारतीयों को अधिवासित पूर्वजों से अपने संबंधों को प्रदर्शित करने हेतु अपने पूर्वजों के दस्तावेजी प्रमाण को एक निश्चित तिथि तक उपलब्ध कराना होगा।
- **लोगों के भविष्य निर्धारण संबंधी कोई विशिष्ट नीति नहीं:** सरकार द्वारा अभी तक NRC के पश्चात् की स्थितियों के संबंध में कोई कार्यान्वयन योजना भी तैयार नहीं की गई है, क्योंकि अवैध प्रवासियों को बांग्लादेश निर्वासित (वापस भेजे जाने) किए जाने की संभावना कम ही है, क्योंकि सूची से बाहर हुए लोगों को बांग्लादेश के प्रमाणित नागरिक होना चाहिए और ऐसे में बांग्लादेश से सहयोग की आवश्यकता होगी।
- **मानवाधिकारों के उल्लंघन के आरोप:** जैसा कि दक्षिण एशिया में मानवाधिकारों के मामले पर अमेरिकी कांग्रेस में हुई सुनवाई के दौरान न केवल कश्मीर मुद्दे को, बल्कि असम के NRC के मुद्दे को भी उठाया गया था।
- **राज्यविहीन होने का मुद्दा:** ऐसी आशंकाएं व्यक्त की जा रही हैं कि इसके परिणामस्वरूप भारत में भी राज्यविहीन लोगों के एक नवीन समूह का निर्माण हो जाएगा, जैसा कि म्यांमार से बांग्लादेश में पलायन हुए रोहिंग्याओं के साथ हुआ है।

आगे की राह

- **अधिकतम दो पीढ़ियों के लिए एक सामान्य कट-ऑफ तिथि का निर्धारण:** जो नागरिकों के लिए दस्तावेजी प्रमाण प्रस्तुत करने की प्रक्रिया को सरल बनाएगी।
  - असम में समस्या का प्रमुख कारण वर्ष 1971 को कट-ऑफ वर्ष के रूप में निर्धारित करना था, जिसने इतने पुराने दस्तावेजों को प्राप्त करना असंभव बना दिया था।
  - NRC की सहायता से भविष्य में होने वाले अवैध प्रवासियों के प्रवेश को रोकने का प्रयास किया जाना चाहिए। ज्ञातव्य है कि बिना किसी मानवीय संकट के अतीत में हुए अवैध प्रवास की समस्या का समाधान सरलता से नहीं किया जा सकता है तथा इससे उन राज्यों की व्यष्टि-अर्थव्यवस्था भी बाधित हो सकती है जहां ये अवैध प्रवासी प्रवासित एवं कार्यरत हैं।
- **एक निष्पक्ष प्रक्रिया को स्थापित करना:** ऐसे आरोप भी लगाए गए थे कि असम में NRC के कार्यान्वयन के दौरान कुछ वर्गों ने फर्जी दस्तावेज प्रस्तुत किए थे। एक राष्ट्रव्यापी NRC के दौरान इस प्रकार की समस्या को दृष्टिगत रखना चाहिए।
- **अवैध प्रवासन के मुद्दे का समग्र रूप से समाधान करना:** व्यापक सीमा प्रबंधन पर ध्यान केंद्रित करते हुए, अंतर्राष्ट्रीय संगठनों जैसे कि शरणार्थियों के लिए संयुक्त राष्ट्र के उच्चायुक्त (UNHCR) से सहयोग प्राप्त करना चाहिए।
  - भारत सरकार को अपने स्वयं के मतदाता और नागरिकता रिकॉर्ड की प्रमाणित प्रतियाँ प्राप्त करने के लिए अन्य सरकारों के साथ मिलकर कार्य करना चाहिए। इस कार्य को व्यापक **दक्षेस अभिसमय (SAARC Convention)** के अंतर्गत भी संचालित किया जा सकता है।
- **प्रौद्योगिकी का अधिकतम उपयोग:** जैसे **डिजिटल लॉकर** का उपयोग करना। नागरिकों से कहा जाना चाहिए कि वे अपने सभी दस्तावेजों को डिजिटल लॉकरों में प्रमाणित करवाएं, ताकि NRC सत्यापन के दौरान उन्हें केवल डिजिटल लॉकर तक पहुंच उपलब्ध कराने की ही आवश्यकता होगी।
  - **कृत्रिम बुद्धिमत्ता और डेटा एनालिटिक्स** का उचित रूप से उपयोग कर, सरकार कई डेटाबेस के उपयोग की सहायता से सुगमतापूर्वक निवासियों और अप्रवासियों के संदिग्ध होने की पहचान कर सकती है।

VISION IAS

असम में असम समझौता और NRC

- असम समझौता वस्तुतः 15 अगस्त 1985 को नई दिल्ली में **भारत सरकार के प्रतिनिधियों** और **असम आंदोलन के नेताओं** के मध्य हस्ताक्षरित एक समझौता है।
- नागरिकता अधिनियम,1955 को **असम समझौते के बाद संशोधित** किया गया था, जिसके अनुसार 1 जनवरी 1966 से पूर्व बांग्लादेश से आए सभी भारतीय मूल के लोगों को नागरिक मान लिया गया था।
- जो लोग 1 जनवरी 1966 और 25 मार्च 1971 के मध्य आए, वे 10 वर्षों तक राज्य में रहने और पंजीकरण के बाद नागरिकता के पात्र थे।
- 25 मार्च 1971 के बाद आने वालों को चिन्हित करने के बाद **अवैध प्रवासी (अधिकरणों द्वारा अवधारण) अधिनियम {Illegal Migration Determination (by Tribunals) (IMDT) Act}, 1983** के तहत निर्वासित किया जाना है। इसमें निर्वाचन सूचियों से विदेशियों के नाम हटाने की भी बात की गई है।
- असम में **असम समझौते के अनुसार NRC को अद्यतन** किया गया था।

NRC सूची से चूक गए लोगों के लिए प्रावधान

- असम सरकार ने लोगों को आश्वासन दिया है कि जिन लोगों का नाम अंतिम NRC में नहीं है, उन्हें तत्काल **"विदेशी" या अवैध प्रवासी** नहीं कहा जाएगा।
- ऐसे लोगों को **विदेशी विषयक अधिकरण (Foreigners Tribunal)** के समक्ष आपत्ति दर्ज कराने की अनुमति दी जाएगी। वे इस मामले में आगे अपील के लिए उच्च न्यायालय या यहां तक कि उच्चतम न्यायालय तक भी जा सकते हैं।
- राज्य सरकार उन निर्धनों को भी कानूनी सहायता प्रदान करेगी, जिनका सूची से नाम गायब है।
- **विदेशी विषयक अधिनियम, 1946 (Foreigners Act 1946)** के तहत, यह सिद्ध करने का भार कि कोई व्यक्ति नागरिक है या नहीं, व्यक्तिगत आवेदक में निहित है, न कि राज्य पर।
- **संदिग्ध या डी-मतदाता (Doubtful or D-voters)** वे हैं, जो सरकार द्वारा उचित **नागरिकता प्रमाणन की कमी** के कारण वंचित किए जाते हैं तथा उनका समावेश विदेशी विषयक अधिकरण के निर्णय पर निर्भर करेगा।

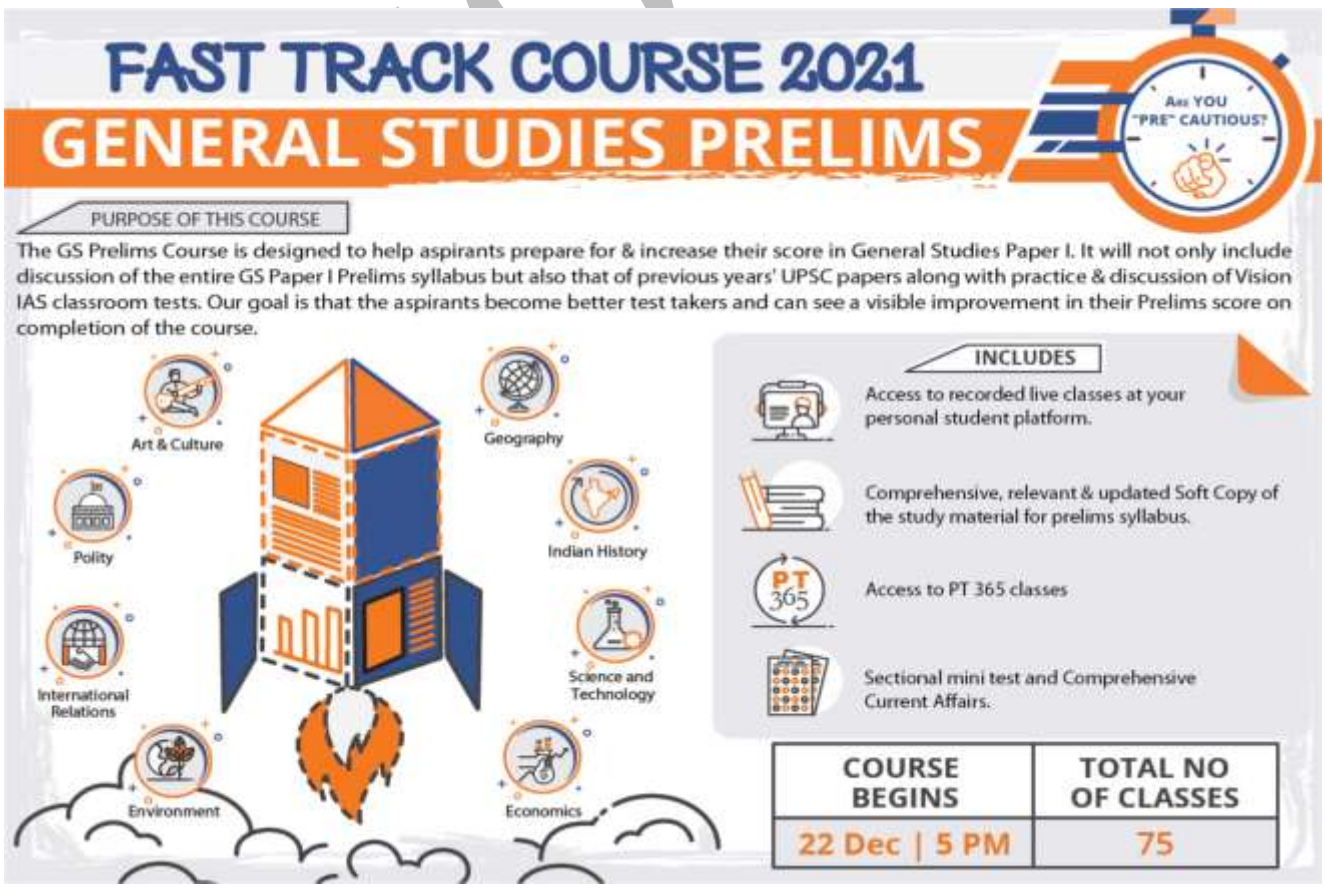

5. भारत में निर्वाचन (Elections In India)

5.1. चुनाव सुधार (Electoral Reforms)

5.1.1. राजनीति का अपराधीकरण (Criminalization of Politics)

सुर्ख़ियों में क्यों?

हाल ही में, उच्चतम न्यायालय ने राजनीतिक दलों के लिए उनके उम्मीदवारों के खिलाफ दर्ज आपराधिक मामलों का विवरण और अन्य उम्मीदवारों की तुलना में उन्हें वरीयता देने के कारणों को प्रकाशित करना (जिसमें इसे आधिकारिक सोशल मीडिया पृष्ठों पर प्रकाशित करना भी शामिल है) अनिवार्य कर दिया है।

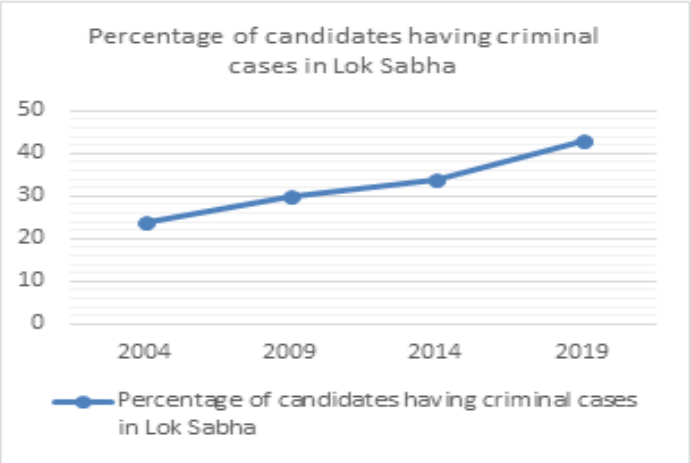

पृष्ठभूमि

- **राजनीति के अपराधीकरण** का अर्थ है- चुनावी प्रक्रिया में अपराधियों की बढ़ती भागीदारी और ऐसे अपराधियों का जनता के प्रतिनिधियों के तौर पर निर्वाचन।
- उच्चतम न्यायालय ने राजनीति के अपराधीकरण को **"अत्यंत दुःखद और निराशाजनक स्थिति"** की संज्ञा देते हुए देश में "इस अस्थिर प्रवृत्ति में वृद्धि" के बारे में चिंता व्यक्त की है।
  - वर्ष 2009 से वर्ष 2019 तक गंभीर प्रकृति वाले आपराधिक मामलों से संबद्ध सांसदों की संख्या में **109% की वृद्धि** हुई है।
  - वर्ष 2019 में लोकसभा के लिए चुने गए **29% सांसदों ने स्वयं के ऊपर गंभीर आपराधिक मामलों** के लंबित होने की घोषणा की है।
- एसोसिएशन फॉर डेमोक्रेटिक रिफॉर्म्स (ADR) के आंकड़ों के विश्लेषण से पता चलता है कि आपराधिक आरोपों का सामना करने वाले उम्मीदवारों की स्वच्छ रिकॉर्ड वाले उम्मीदवारों की तुलना में जीतने की संभावना दोगुनी थी।

विधिक प्रावधान

- **अनुच्छेद 102(1)** और **191(1)** कुछ निश्चित आधारों पर क्रमशः एक सांसद एवं एक विधायक को निरर्ह घोषित करता है।
- **लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम (Representation of People Act: RPA), 1951** की **धारा 8,** दोषसिद्ध राजनेताओं को प्रतिबंधित करती है। लेकिन, विचाराधीन मामलों की स्थिति में, भले ही वह मामला अत्यधिक गंभीर क्यों न हो, राजनेता चुनाव लड़ने के लिए स्वतंत्र हैं।

राजनीति के अपराधीकरण के कारण

- **वोट बैंक की राजनीति:** क्योंकि अधिकांश मतदाता परिवर्तनशील होते हैं और धन के एवज में किसी के भी पक्ष में मतदान करते हैं। इसलिए अपराधियों के माध्यम से वोट खरीदने और अन्य अवैध उद्देश्यों के लिए खर्च करने से नेताओं तथा अपराधियों के मध्य सांठगांठ होती है।
- **भ्रष्टाचार:** राजनेताओं और अपराधियों के मध्य सांठगांठ मजबूत हो गई है क्योंकि राजनेताओं को अपनी चुनावी फंडिंग के साथ-साथ ऐसे अपराधियों से बाहुबल तथा जनशक्ति प्राप्त होती है।
- **निर्वाचन आयोग की कार्यप्रणाली में अक्षमता:** पिछले कई आम चुनावों में निर्वाचन आयोग और मतदाता के मध्य एक अंतराल देखा गया है। आम जनता शायद ही निर्वाचन आयोग द्वारा बनाए गए नियमों से अवगत है। कठोर दंड के भय के बिना उम्मीदवारों द्वारा खुलेआम आदर्श आचार संहिता का उल्लंघन किया जाता है।
- **न्याय की उपेक्षा और विधि का शासन:** चुनावों में खड़े होने वाले दोषी अपराधियों के विरुद्ध अप्रभावी कानून इस प्रक्रिया को और प्रोत्साहित करते हैं। केंद्र सरकार द्वारा उच्चतम न्यायालय में प्रस्तुत किए गए आंकड़ों के अनुसार, **भारतीय सांसदों और विधायकों के विरुद्ध आपराधिक मामलों में दोषसिद्धि की दर 6 प्रतिशत से अधिक नहीं है।** यह भारतीय दंड संहिता (Indian Penal Code: IPC) के तहत राष्ट्रीय स्तर पर 46% की समग्र दोषसिद्धि दर के विपरीत है।
- **राजनीतिक दलों के भीतर लोकतंत्र का अभाव:** यद्यपि, लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम में कुछ निश्चित आधारों पर एक मौजूदा विधायक/सांसद या उम्मीदवार को निरर्ह घोषित करने के संबध में उपबंध हैं, तथापि दल के भीतर उनके कार्यालयों में नियुक्तियों

को विनियमित करने के लिए ऐसा कोई उपबंध नहीं है। ऐसे में एक राजनेता को विधायक/सांसद बनने से तो निरर्ह ठहराया जा सकता है, लेकिन वह अपने दल के भीतर उच्च पदों पर आसीन हो सकता है।

राजनीति के अपराधीकरण का प्रभाव

- **कानून का उल्लंघन करने वालों को विधि निर्माता के रूप में चयनित किया जाता है:** जिन लोगों पर विभिन्न अपराधों के लिए मुकदमा चलाया जा रहा है, उन्हें संपूर्ण देश के लिए विधि निर्माण का अवसर दिया जाता है, जो संसद की गरिमा को कमजोर बनाता है।
- **न्यायिक मशीनरी में जनता के विश्वास में कमी:** यह स्पष्ट है कि राजनीतिक प्रभाव वाले लोग सुनवाई में विलंब कराके, न्यायिक कार्यवाही को निरंतर स्थगित कराके और असंख्य याचिकाएं दायर करके किसी भी सार्थक प्रगति को रोकने के लिए अपनी शक्ति का प्रयोग करते हैं। यह न्यायपालिका की विश्वसनीयता पर सवाल उठाता है।
- **लोकतंत्र पर धब्बा:** जहां विधि का शासन दुर्बल तरीके से लागू होता है और बड़े पैमाने पर सामाजिक विभाजन मौजूद होता है, वहां उम्मीदवार की आपराधिक पृष्ठभूमि को उसकी प्रतिष्ठा से जोड़कर देखने की प्रवृत्ति विद्यमान होती है। इससे राजनीति में बाहुबल और धनबल की संस्कृति का आगमन होता है।
- **स्व-स्थायी:** चूंकि पार्टियां उम्मीदवार की जीत पर ध्यान केंद्रित करती हैं (जो राजनीतिक दलों के भीतर लोकतंत्र को कमजोर करता है), अतः उनमें अधिक से अधिक प्रभावशाली तत्वों को शामिल करने की प्रवृत्ति मौजूद होती है। इस प्रकार, राजनीति का अपराधीकरण स्थायी हो जाता है और समग्र चुनावी संस्कृति विकृत हो जाती है।

राजनीति के अपराधीकरण पर विभिन्न समितियों का अवलोकन

संथानम समिति की रिपोर्ट (वर्ष 1963)

- इसने राजनीतिक भ्रष्टाचार को अधिकारियों के भ्रष्टाचार से अधिक खतरनाक बताया और केंद्र एवं राज्यों दोनों स्तरों पर सतर्कता आयोग के गठन की सिफारिश की।

वोहरा समिति की रिपोर्ट (वर्ष 1993)

- इसने राजनीति के अपराधीकरण तथा भारत में अपराधियों, राजनेताओं और नौकरशाहों के मध्य सांठगांठ की समस्या का अध्ययन किया। हालांकि, इसके द्वारा रिपोर्ट प्रस्तुत करने के 25 वर्ष के बाद भी, सरकार द्वारा इस रिपोर्ट को सार्वजनिक नहीं किया गया है।

पुलिस सुधार पर पद्मनाभैया समिति

- इस समिति ने यह पाया कि भ्रष्टाचार, पुलिस के राजनीतिकरण और अपराधीकरण दोनों का मूल कारण है।
- पुलिस के अपराधीकरण को राजनीति के अपराधीकरण से पृथक नहीं किया जा सकता है। यह राजनीति का अपराधीकरण ही है, जिसने दण्ड मुक्ति की संस्कृति का सृजन और प्रचार-प्रसार किया है, जो अनुपयुक्त पुलिसकर्मी को उसके नीतिविरुद्ध कार्यों और चूक से बच जाने की अनुमति प्रदान करता है।

उच्चतम न्यायालय द्वारा पूर्व में दिए गए उल्लेखनीय निर्णय/उठाए गए कदम

- **वर्ष 1997** में उच्चतम न्यायालय ने सभी उच्च न्यायालयों को यह निर्देश दिया था कि यदि किसी व्यक्ति को एक ट्रायल कोर्ट द्वारा भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 के तहत दोषसिद्ध ठहराया जाता है और कारावास की सजा दी जाती है तो **अपील करने पर उसकी सजा निलंबित नहीं की जाएगी।**
- **भारत संघ बनाम ADR वाद (वर्ष 2002)** में, उच्चतम न्यायालय ने यह निर्देश दिया था कि सभी प्रतियोगी उम्मीदवार नामांकन पत्र भरने के समय अपनी संपत्ति और देनदारियों, आपराधिक दोषसिद्धि (यदि कोई हो) तथा न्यायालय में लंबित मामलों का प्रकटीकरण करेंगे।
- **लिली थॉमस वाद (वर्ष 2013)** में, उच्चतम न्यायालय ने यह निर्णय दिया था कि यदि किसी मौजूदा सांसद या विधायक को दो वर्ष अथवा उससे अधिक के कारावास की सजा दी जाती है, तो विधायिका में उसकी सीट तुरंत रिक्त हो जाएगी।
- **पीपुल्स यूनियन फ़ॉर सिविल लिबर्टीज़ (PUCL) बनाम भारत संघ वाद (वर्ष 2014)** में दिए गए निर्णय के उपरांत **उपर्युक्त में से कोई नहीं (None of The Above: NOTA)** विल्कप के समावेशन से, स्वच्छ पृष्ठभूमि वाले उम्मीदवारों को खड़ा करने के लिए राजनीतिक दलों पर नैतिक दबाव डाला गया।
- **पब्लिक इंटरेस्ट फाउंडेशन बनाम भारत संघ वाद (वर्ष 2014)** में, उच्चतम न्यायालय ने ट्रायल अदालतों को निर्देश दिया था कि वे विधायकों/सांसदों से जुड़े मामलों की सुनवाई एक वर्ष के भीतर पूरी करें।
- **लोक प्रहरी बनाम भारत संघ वाद (वर्ष 2018)** में, उच्चतम न्यायालय ने राजनीतिक उम्मीदवारों के साथ-साथ उनके आश्रितों और सहयोगियों की आय के स्रोत का प्रकटीकरण करना अनिवार्य कर दिया।

VISION IAS

- **पब्लिक इंटरेस्ट फाउंडेशन वाद (वर्ष 2018)** में, उच्चतम न्यायालय ने निर्वाचन आयोग और संबंधित राजनीतिक दल के माध्यम से उम्मीदवार के खिलाफ लंबित आपराधिक मामलों के प्रकटीकरण का निर्देश दिया था। इसके अतिरिक्त, संबंधित राजनीतिक दलों की वेबसाइट्स सहित विभिन्न मीडिया के माध्यम से उम्मीदवारों के आपराधिक पृष्ठभूमि (antecedent) के बारे में व्यापक रूप से प्रचारित करने का भी निर्देश दिया गया था।
- **हाल के निर्देश में, उच्चतम न्यायालय ने कहा कि:**
  - राजनीतिक दलों (केंद्र और राज्य के चुनाव स्तर पर) के लिए यह अनिवार्य है कि वे **लंबित आपराधिक मामलों वाले उम्मीदवारों के बारे में विस्तृत जानकारी** प्रकाशित करें तथा उन्हें यह भी बताना होगा कि दूसरे प्रतिस्पर्द्धी उम्मीदवारों की तुलना में आपराधिक मामलों वाले उम्मीदवारों क्यों चुना गया।
  - संबंधित उम्मीदवारों की **योग्यता, उपलब्धियां और गुण** उनके चयन के लिए प्रमुख कारण होंगे, न कि केवल चुनावों में "जीतने की उनकी क्षमता"।

निर्वाचन आयोग द्वारा भारतीय राजनीति के गैर-अपराधीकरण के लिए उठाए गए अन्य कदम

निर्वाचन आयोग ने लगातार अपने स्वंय के स्तर के साथ-साथ उच्चतम न्यायालय के निर्देश पर भी कुछ चुनावी सुधार किए हैं।

- वर्ष 1997 में, **निर्वाचन आयोग (EC)** ने सभी **निर्वाचन अधिकारियों (Returning Officers)** को निर्देश दिया था कि ऐसे उम्मीदवार के **नामांकन पत्र को अस्वीकार** कर दिया जाए, जो **नामांकन पत्र दाखिल करने के दिन दोषी ठहराया गया हो,** भले ही उसकी सजा निलंबित कर दी गयी हो।
- चुनावों के दौरान **काले धन को जब्त करने** के लिए **उड़न दस्तों (flying squads) की एक प्रणाली** आरंभ की गई है।
- EC द्वारा अधिक **गहन मतदाता जागरूकता अभियान (intense voter awareness campaign)** का संचालन किया गया है। साथ ही, मतदाताओं को **अपना मत न बेचने के लिए प्रेरित करने हेतु** प्रसिद्ध हस्तियों के नेतृत्व में एक अभियान की भी शुरुआत की गई है।
- वर्तमान में, किसी भी राष्ट्रीय या राज्य विधान सभा चुनावों के लिए **एक उम्मीदवार को एक हलफनामा प्रस्तुत करने की आवश्यकता** होती है जिसमें उनके आपराधिक पूर्ववृतों, यदि कोई हो, उनकी संपत्ति, देनदारियों और शैक्षिक योग्यता के बारे में जानकारी होती है।
- हाल ही में, निर्वाचन आयोग ने संबंधित उम्मीदवारों द्वारा और चुनावों के लिए नामांकन करने वाले राजनीतिक दलों द्वारा उनके (उम्मीदवारों) **आपराधिक पूर्ववृतों के प्रकाशन के समय** को संशोधित करने का निर्णय लिया है।

अपराध से निपटने में निर्वाचन आयोग की सीमाएं

- **अनुपालन की निगरानी करने और उसे सुनिश्चित करने हेतु वृहद पैमाने पर अवसंरचना की आवश्यकता है:** उदाहरण के लिए- उच्चतम न्यायालय के एक आदेश ने राजनीतिक दलों के लिए लंबित आपराधिक मामलों वाले व्यक्ति को उम्मीदवार नामित करने के बारे में विस्तृत जानकारी अपनी वेबसाइट पर अपलोड करना अनिवार्य कर दिया है, जिसमें उसके चयन के कारणों के साथ ही बिना आपराधिक ब्यौरे वाले उम्मीदवारों को नामित न करने के विषय में भी विवरण प्रदान करना होगा। इस प्रकार के निर्देशों का पालन सुनिश्चित करने के लिए, व्यापक मानव संसाधन और सुदृढ़ डिजिटल प्रणाली की आवश्यकता है।
- **दोषसिद्धि से पूर्व उम्मीदवारों को अनर्ह घोषित करने की कोई शक्ति नहीं है,** भले ही कोई व्यक्ति कई गंभीर आरोपों का सामना कर रहा हो। **लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम (Representation of the People Act: RPA), 1951 की धारा 8**, किसी व्यक्ति द्वारा किसी अपराध के लिए दोषी ठहराए जाने के बाद ही अनर्हता से संबंधित है।
- **मिथ्या शपथ-पत्र (False affidavits):** चुनाव में मिथ्या शपथ-पत्र के मामले बेहद गंभीर परिणाम उत्पन्न कर सकते हैं, क्योंकि ये चुनावों की शुचिता को प्रभावित करते हैं। शिथिल दंड प्रक्रिया इस गतिविधि को रोकने में असमर्थ है। साथ ही, मिथ्या शपथ-पत्र या जानकारी छुपाने को निर्वाचन को चुनौती देने या RPA, 1951 के तहत नामांकन पत्र की अस्वीकृति के आधार के रूप में स्वीकृत नहीं किया गया है।
- **चुनावी लाभ के लिए धर्म का दुरुपयोग:** यद्यपि इस प्रकार की प्रथाओं को भ्रष्ट प्रथाओं के रूप में माना जाता है, परन्तु उन्हें केवल एक चुनाव याचिका के माध्यम से ही प्रश्नगत किया जा सकता है और चुनाव के दौरान यह निर्वाचन आयोग के समक्ष जांच का विषय नहीं हो सकता है।
  - विडंबना यह है कि इनका चुनाव की अवधि के दौरान ही ज्यादा उपयोग किया जाता है तथा चुनाव में पराजित होने वाले उम्मीदवार के भ्रष्ट व्यवहार को चुनौती देने का कोई प्रावधान नहीं है।

आगे की राह

निर्वाचन आयोग और विधि आयोग ने केंद्र सरकार को राजनीति के गैर-अपराधीकरण के लिए निर्वाचन सुधारों के रूप में कानून निर्माण हेतु निम्नलिखित अनुशंसाएं की हैं:

VISION IAS

- **RPA, 1951 में प्रस्तावित संशोधन:**
  - **धारा 125(A) के अंतर्गत दोषसिद्धि** को धारा 8(A)(1) के तहत **अनर्ह घोषित किए जाने के आधार** के रूप में शामिल किया जाए।
  - मिथ्या शपथ-पत्र दाखिल करने पर **न्यूनतम दो वर्ष की सजा को धारा 125 (A) के तहत अंतर्विष्ट किया जाए।**
  - मिथ्या शपथ-पत्र दाखिल करने को **धारा 123 के तहत एक भ्रष्ट आचरण के अपराध के रूप में समाविष्ट किया जाना चाहिए।**
- मिथ्या सूचनाओं की घटनाओं की त्वरित जांच करने के लिए **विजेताओं के शपथ-पत्रों के सत्यापन हेतु एक स्वतंत्र पद्धति** स्थापित की जानी चाहिए।
- **संज्ञेय अपराध के आरोपी व्यक्तियों को चुनाव लड़ने से निषिद्ध किया जाना चाहिए**, उस स्थिति में **जब आरोप सक्षम न्यायालय द्वारा** सिद्ध किए गए हों और **चुनाव से कम से कम 6 माह पूर्व लगाए गए हों** तथा जिनमें अपराध कम से कम 5 वर्ष के कारावास के साथ दंडनीय हो।
- **संबंधित न्यायालयों में मुकदमों का तेजी से निपटान:** जब मामला विधायिका के मौजूदा सदस्य के विरुद्ध हो तो **एक वर्ष में मुकदमे को पूर्ण करने की समय-सीमा** के साथ सुनवाई का संचालन दिन-प्रतिदिन के आधार पर किया जाना चाहिए।
  - **एक बार उक्त अवधि के समाप्त होने के उपरांत** व्यक्ति को स्वत: ही अनर्ह घोषित किया जा सकता है।
- **पूर्वव्यापी तरीके से लागू करना (Retroactive application):** जिस तिथि से ये प्रस्तावित संशोधन लागू होंगे, उस तिथि से लंबित आपराधिक आरोप (5 वर्ष से अधिक की सजा से दंडनीय) वाले सभी व्यक्ति कुछ रक्षोपायों के अधीन अनर्ह हो जाएंगे।
- उपयुक्त प्राधिकारी को अनुशंसा करने के लिए **निर्वाचन आयोग को अतिरिक्त शक्तियां प्रदान करना:**
  - किसी भी मामले को आयोग द्वारा निर्दिष्ट किसी भी एजेंसी को जांच के लिए प्रेषित करना।
  - किसी भी व्यक्ति को RPA, 1951 के तहत चुनावी अपराध का दोषी होने पर अभियोजित करना।
  - RPA, 1951 के अधीन किसी अपराध या अपराधों की सुनवाई के लिए कोई विशेष न्यायालय निर्दिष्ट करना।

5.1.2. चुनावी बॉण्ड्स (Electoral Bonds)

सुर्ख़ियों में क्यों?

हाल ही में, सूचना के अधिकार के तहत प्राप्त जानकारी में चुनावी बॉण्ड्स के संबंध में कुछ चौंकाने वाले तथ्य सामने आए।

अन्य संबंधित तथ्य

- **"देश में राजनीतिक वित्त-पोषण की प्रणाली को पारदर्शी बनाने"** के उद्देश्य से वर्ष 2017-18 के केंद्रीय बजट में चुनावी बॉण्ड्स योजना की घोषणा की गई थी।
- 1 करोड़ और 10 लाख रुपये के संयुक्त बॉण्ड्स का मूल्य, सभी बॉण्ड्स के कुल मूल्य का लगभग 99.7 प्रतिशत है। चुनावी बॉण्ड्स के माध्यम से अब तक एकत्रित किए गए 5,896 करोड़ रुपये में से 91 प्रतिशत से अधिक एक करोड़ रुपये के मूल्य वर्ग वाले बॉण्ड्स थे।

चुनावी बॉण्ड्स की शुरूआत के पीछे तर्क

- **राजनीतिक वित्त-पोषण में नकदी के प्रयोग को सीमित करना:** पूर्व में, व्यक्तियों/कॉर्पोरेट्स द्वारा वित्त-पोषण के अवैध साधनों का प्रयोग करते हुए राजनीतिक चंदे के रूप में बड़े पैमाने पर नगद राशि दी जाती थी। इस प्रकार विगत प्रणाली पूर्णतया अपारदर्शी थी तथा पूर्ण अनामिकता (anonymity) सुनिश्चित करती थी।
- **काले धन पर अंकुश लगाने के लिए- चुनावी बॉण्ड्स में सम्मिलित निम्नलिखित विशेषताओं के कारण:**
  - चुनावी बॉण्ड्स के निर्गमन हेतु भुगतान केवल डिमांड ड्राफ्ट या चेक के द्वारा अथवा इलेक्ट्रॉनिक क्लीयरिंग सिस्टम या खरीदारों के 'खाते' से प्रत्यक्ष निकासी (डेबिट) के माध्यम से स्वीकार किए जाते हैं। इस प्रकार इन बॉण्ड्स की खरीद हेतु काला धन प्रयुक्त नहीं हो सकता है।
  - बॉण्ड्स की वैधता हेतु समय-सीमा निर्धारित की गई है ताकि बॉण्ड एक समानांतर मुद्रा न बन सके।
- **कपटपूर्ण राजनीतिक दलों का अपवर्जन:** यह ऐसे दलों को बाहर कर देती है जो कर वंचना के आधार पर निर्मित किये गये हैं क्योंकि इस योजना के अंतर्गत राजनीतिक दलों के लिए अर्हता हेतु एक कठोर उपबंध को समाविष्ट किया गया है।
- **राजनीतिक उत्पीड़न से दानकर्ताओं की सुरक्षा:** क्योंकि दानकर्ताओं की पहचान का गैर-प्रकटीकरण योजना का मूल उद्देश्य है। इसके अतिरिक्त, क्रेता का रिकॉर्ड बैंकिंग चैनल में सदैव उपलब्ध रहेगा तथा प्रवर्तन अभिकरणों द्वारा आवश्यकतानुसार इसे कभी भी पुनर्प्राप्त किया जा सकता है।

चुनावी वित्त-पोषण से संबंधित मुद्दे

- **दान में अपारदर्शिता:** राजनीतिक दल अपने चंदे का अधिकांश हिस्सा अज्ञात स्रोतों से दान (लगभग 70%) के माध्यम से नकद रूप में प्राप्त करते हैं। इसके अतिरिक्त, दलों को आयकर से छूट प्रदान की गई है, जो काले धन के जमाखोरों के लिए एक चैनल (विकल्प)

उपलब्ध कराता है।

- **घूसखोरी (रिश्वत) के विरुद्ध कार्रवाई का अभाव:** निर्वाचन आयोग ने लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम (RPA), 1951 के अंतर्गत एक नए खंड, **58B,** की प्रविष्टि की मांग की है, ताकि दलों द्वारा किसी निर्वाचन क्षेत्र के मतदाताओं को रिश्वत दी जाती है तो वह (निर्वाचन आयोग) कार्रवाई करने में सक्षम हो।
- **विदेशी चंदे (वित्त-पोषण) को अनुमति:** विदेशी अभिदाय (विनियमन) अधिनियम {Foreign Contribution (Regulation) Act (FCRA)} में हुए हालिया संशोधन ने राजनीतिक दलों के लिए बड़ी मात्रा में विदेशी चंदे की प्राप्ति के द्वार खोल दिए हैं, जिससे शासन में व्यवधान उत्पन्न होने की संभावना है।
- **पारदर्शिता का अभाव:** RPA, 1951 की धारा 29 के अंतर्गत शामिल प्रावधानों के बावजूद, अनेक राजनीतिक दल अपनी वार्षिक लेखांकन रिपोर्ट, निर्वाचन आयोग को नहीं सौंपते हैं। राजनीतिक दलों ने स्वयं को सूचना के अधिकार अधिनियम के दायरे में लाए जाने का विरोध किया है।

राजनीतिक वित्त-पोषण के संदर्भ में चुनावी बॉण्ड्स के उपयोग का विश्लेषण

- **निम्नलिखित कारणों से अभी भी राजनीतिक वित्त-पोषण के संदर्भ में अस्पष्टता बनी हुई है:**
  - चुनावी बॉण्ड्स योजना से पूर्व, राजनीतिक दलों को **20,000 रुपये से अधिक** के चंदे के रिकॉर्ड को बनाए रखना पड़ता था। जबकि, चुनावी बॉण्ड्स को इस शर्त के दायरे से बाहर रखा गया है। इसलिए, अब राजनीतिक दलों को उन्हें प्राप्त चुनावी बॉण्ड्स के रिकॉर्ड्स को निर्वाचन आयोग के सम्मुख जाँच के लिए जमा करने की आवश्यकता नहीं है।
  - इसके अतिरिक्त, राजनीतिक दल **आयकर अधिनियम, 1961** की **धारा 13A** के तहत अपना वार्षिक आयकर रिटर्न जमा करने के लिए कानूनी रूप से बाध्य हैं। हालांकि, चुनावी बॉण्ड्स को आयकर अधिनियम से भी छूट दी गई है।
  - ये चुनावी बॉण्ड्स विदेशी वित्त-पोषण के लिए भी उपलब्ध हैं, जिसे भारतीय रिज़र्व बैंक के हालिया विसम्मति (dissent) नोट के अंतर्गत रेखांकित किया गया है। इसने इस तथ्य को उजागर किया है कि इस योजना का उपयोग वास्तव में काले धन के प्रचलन, मनी लॉन्ड्रिंग, सीमा-पार जालसाजी और धोखाधड़ी को बढ़ाने के लिए किया जा सकता है।

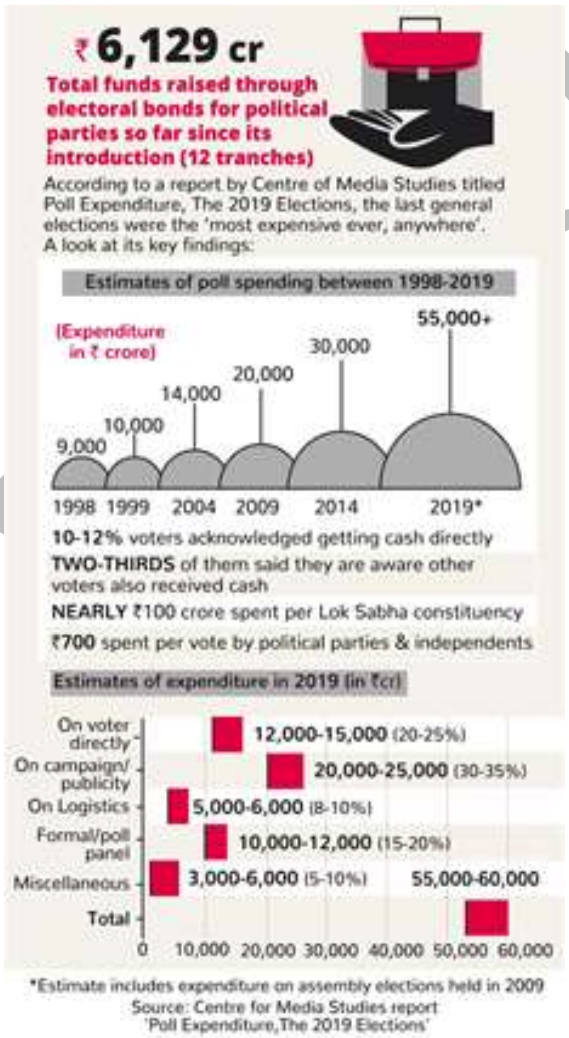

- **कॉर्पोरेट द्वारा दुरुपयोग की संभावनाओं को बढ़ाता है:** जैसा कि ऊपर चर्चा की गई लेन-देन की प्रकृति से पता चलता है।
  - इससे पूर्व, कोई भी कंपनी अपने लाभ का 7.5 प्रतिशत से अधिक किसी राजनीतिक पार्टी को दान नहीं कर सकती थी, लेकिन इस योजना के तहत यह सीमा पूरी तरह से हटा दी गई है।
- **राजनीतिक वित्त-पोषण के मामले में एक समान अवसर का अभाव:** जैसे कि-
  - चुनावी बॉण्ड्स के लाभों को केवल कुछ राजनीतिक दलों तक सीमित रखने के लिए सरकार ने **जन प्रतिनिधित्व अधिनियम** की **धारा 29B** में संशोधन किया है।
  - सत्तारुढ़ दल की ऑडिट रिपोर्ट के माध्यम से सामने आए आंकड़ों से यह ज्ञात हुआ है कि उसे (सत्तारुढ़ दल) वर्ष 2017-18 में बेचे गए सभी चुनावी बॉण्ड्स का 94.6 प्रतिशत प्राप्त हुआ है।

शहरी क्षेत्रों की परिघटना: विभिन्न आंकड़ों से यह तथ्य सामने आया है कि चुनावी बॉण्ड्स का प्रयोग अधिकांशतः शहरों में अमीर अभिकर्ताओं द्वारा किया गया है, जबकि देश की बहुसंख्यक आबादी ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करती है।

निष्कर्ष

चुनावी बॉण्ड्स के शुरुआती रुझान इस तथ्य की ओर इंगित करते हैं (जैसा कि राजनीतिक विश्लेषकों ने यह भय जाहिर किया था) कि यह नया माध्यम अनियंत्रित कॉर्पोरेट प्रभाव को बढ़ावा देगा जिससे भारत के चुनावी लोकतंत्र पर नकारात्मक प्रभाव पड़ेगा। जिस प्रकार इस योजना को कार्यान्वित किया जा रहा है, उसकी गहन जाँच करने की आवश्यकता है, अन्यथा यह राजनीतिक वित्त सुधारों और पारदर्शिता मानदंडों में प्राप्त महत्वपूर्ण लाभ को पूर्ववत कर सकता है।

इसके अतिरिक्त, विभिन्न उपायों पर ध्यान केंद्रित किया जा सकता है, जो राजनीतिक वित्त-पोषण में अधिक पारदर्शिता सुनिश्चित कर सकते हैं, जैसे-

- **पूर्ण रूप से डिजिटल लेन-देन** को अंगीकृत करना।
- **कॉर्पोरेट व राजनेताओं के गठजोड़** को तोड़ने के लिए एक निश्चित सीमा से अधिक के अनुदान को सार्वजनिक किया जाना चाहिए।
- राजनीतिक दलों को **RTI के दायरे** में लाया जाना चाहिए, जैसे कि भूटान और जर्मनी जैसे देशों में है।
- एक **राष्ट्रीय चुनावी कोष (national electoral fund)** की स्थापना की जाए, जिसमें दानकर्ता योगदान करते हैं और पिछले चुनावों में उनके प्रदर्शन के अनुसार विभिन्न दलों के मध्य धन वितरित किया जाता है। इससे काला धन भी खत्म होगा और साथ ही **दानदाताओं की अनामिकता (anonymity)** भी सुनिश्चित होगी।
- चुनावों की उच्च लागत की अनुक्रिया में **चुनावों के राज्य द्वारा वित्त पोषण** का सुझाव भी दिया गया है। भारत के विधि आयोग, द्वितीय प्रशासनिक सुधार आयोग, संविधान के कामकाज की समीक्षा करने के लिए राष्ट्रीय आयोग, आदि इसके पक्षधर हैं।
- **राजनैतिक दलों के खर्च पर अधिकतम सीमा आरोपित किया जाना चाहिए।**

5.1.3. राजनीतिक दलों में आंतरिक लोकतंत्र (Intra Party Democracy)

सुर्ख़ियों में क्यों?

हाल ही में, भारतीय राजनीतिक दलों में आंतरिक लोकतंत्र का अभाव सुर्ख़ियों में रहा।

दलों में आंतरिक लोकतंत्र क्या है?

- दलों में आंतरिक लोकतंत्र को "राजनीतिक दलों के भीतर (संगठन/संरचनात्मक स्तर पर) मानदंडों के एक न्यूनतम समुच्चय के कार्यान्वयन" के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। मानदंडों का यह समुच्चय, राजनीतिक दलों (संगठन/संरचनात्मक स्तर पर) के भीतर निर्णयन तथा विभिन्न स्तरों, निकायों और व्यक्तिगत स्तरों पर भी शक्तियों की आंतरिक वितरण प्रक्रियाओं में ऊर्ध्वगामी दृष्टिकोण (निचले स्तर से ऊपरी स्तर की ओर) पर बल देती है।
- स्वतंत्रता के उपरांत से, संगठनात्मक मामलों में प्राधिकार की यह प्रवृत्ति अधिकतर ऊपरी स्तर से निचले स्तर की ओर रही है। इस प्रकार, भारत के अधिकांश राजनीतिक दलों में नेतृत्व दिखने में तो लोकतांत्रिक परिलक्षित होता है, परंतु वास्तविकता में यह अत्यधिक केंद्रीकृत है।
- जर्मनी और पुर्तगाल जैसे कुछ देशों के विपरीत, लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम की धारा 29A तथा निर्वाचन आयोग के दिशा-निर्देशों के तहत किए गए कुछ प्रावधानों के अतिरिक्त भारत में राजनीतिक दल में आंतरिक लोकतंत्र को लागू करने के लिए कोई विधिक उपबंध नहीं है।

राजनीतिक दलों में आंतरिक लोकतंत्र की आवश्यकता क्यों है?

- यह दलों के **नेताओं को जवाबदेह** बनाने तथा नीतिगत निर्णय प्रक्रियाओं में सार्थक रूप से सम्मिलित होने में दल के सदस्यों की सहायता करता है और इससे दल के भीतर प्रतिस्पर्धा, भागीदारी एवं प्रतिनिधित्व को बढ़ावा मिलता है। प्रशासनिक सुधार आयोग (ARC) की वर्ष 2008 की शासन में नैतिकता रिपोर्ट में अत्यधिक केंद्रीकरण के कारण उत्पन्न होने वाले भ्रष्टाचार की स्थिति पर चर्चा की गई थी।

- यह **भाई-भतीजावाद और वंशवाद की राजनीति** (पारिवारिक पृष्ठभूमि, जाति, धर्म आदि से संबंधित आधार पर) **को समाप्त कर** सकती है।
- यह दल के भीतर असहमति (प्रासंगिकता के संदर्भ में) को उचित स्थान प्रदान करेगा, जिससे **राजनीतिक दलों के भीतर विभिन्न गुटों के निर्माण की संभावना कम हो जाएगी।**
- यह **पार्टी फंड के प्रबंधन में पारदर्शिता** को बढ़ावा दे सकता है, जिससे धन और बाहुबल के प्रभाव में कमी आएगी।
- चूंकि नीतिगत निर्णयों में दल के भीतर विचार-विमर्श और बहस की प्रक्रिया को बढ़ावा मिलेगा अतः यह राष्ट्र के समक्ष बड़े मुद्दों में **स्थानीय राजनेताओं के भीतर स्वामित्व की भावना** उत्पन्न कर सकता है।

राजनीतिक दलों के विनियमन में सुधार के लिए कुछ अनुशंसाएं

- वर्ष 2009 में निर्वाचन आयोग के साथ पंजीकृत 1100 से अधिक दलों में से वास्तव में केवल 360 ने ही उस वर्ष के साधारण निर्वाचन में भाग लिया था। **किसी दल को विपंजीकृत करने के लिए कोई विशेष प्रावधान उपलब्ध नहीं है।**
  - निर्वाचन आयोग ने इस तथ्य पर बल दिया है कि राजनीतिक दलों के विपंजीकरण हेतु लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 में संशोधन किया जाना चाहिए।
- **संविधान की कार्यप्रणाली की समीक्षा करने के लिए गठित राष्ट्रीय आयोग ने** यह अनुशंसा की है कि पंजीकरण के इच्छुक दलों के नियमों और उपनियमों में निम्नलिखित प्रावधानों को सम्मिलित किया जाना चाहिए यथा:
  - राजनीतिक दलों के आंतरिक संगठनों में लोकतांत्रिक मूल्यों और संविधान के मानदंडों का पालन करने की घोषणा।
  - राजनीतिक लाभों के लिए हिंसा का आश्रय न करने की घोषणा।
  - राजनीतिक लामबंदी के लिए जातिवाद और सांप्रदायिकता आदि की सहायता न लेने की घोषणा।
  - राजनीतिक पदों के लिए निचले स्तर और राज्य स्तर पर उम्मीदवारों के चयन एवं मनोनयन के लिए राजनीतिक दल की परम्पराओं हेतु प्रावधान करना।
  - आदर्श आचार संहिता आदि।

सुझाव

- ऐसी **व्यापक विधि की** आवश्यकता है, जो मुख्यतः दलों में आंतरिक लोकतंत्र के ढांचे और प्रासंगिक प्रावधानों पर ध्यान केंद्रित करता हो। हालांकि एम.एन. वेंकटचलैया की अध्यक्षता वाली समिति द्वारा **राजनीतिक दलों की कार्यप्रणाली को विनियमित करने के लिए विधेयक का प्रारूप तैयार किया गया था।**
- **निर्वाचन आयोग को** दलों द्वारा किए जा रहे गैर-अनुपालन के विरुद्ध कुछ दंडात्मक प्रावधानों के माध्यम से दलों में आंतरिक लोकतंत्र हेतु मौजूदा उपायों के बेहतर कार्यान्वयन को सुनिश्चित करने के लिए **सक्षम बनाया जाना चाहिए।**
- बाह्य संगठन द्वारा दलों के विभिन्न पदों हेतु आंतरिक निर्वाचन को मान्यता प्रदान करने से उन्हें अधिक वैधता प्राप्त होगी और दल के सदस्य भी प्रतिकूल परिणामों से बचना चाहेंगे।
- दल-परिवर्तन विधि में संशोधन किया जाना चाहिए, क्योंकि वर्तमान में यह किसी विधायिका के निर्वाचित सदस्यों को उनके दल के विरुद्ध मतदान करने से रोकता है। यह भारतीय लोकतंत्र, प्रतिनिधित्व और असहमति की आधारभूत विशेषताओं के विरुद्ध है।

5.1.4. चुनाव सुधार के अन्य क्षेत्र (Other areas of Electoral Reforms)

निर्वाचनों का बेहतर संचालन और प्रबंधन

- **मुद्दे:**
  - मतदान प्रक्रिया में अनियमितता को ऐसे महत्वपूर्ण मुद्दे के रूप में चिन्हित किया गया है, जिसका मौजूदा निर्वाचन प्रणाली प्रक्रिया के तहत समाधान किया जाना आवश्यक है।
  - बाहुबल का उपयोग करके और भयभीत करके व धमकी देकर लोगों को अपने पक्ष में मतदान करने के लिए विवश करना।
  - **प्रत्याशियों की बढ़ती संख्या:** निर्वाचन के दौरान अनेक उम्मीदवारों की उपस्थिति निर्वाचन संबंधी प्रबंधन पर अनावश्यक और अपरिहार्य दबाव उत्पन्न करती है, जिससे निर्वाचन प्रक्रिया के व्यय में भी वृद्धि होती है।
- **अनुशंसाएँ:**
  - **गोस्वामी समिति** द्वारा यह अनुशंसा की गई है कि निर्वाचन आयोग को बूथ कैप्चरिंग या मतदाताओं के मध्य भय उत्पन्न करने के संबंध में निर्वाचन अधिकारी, निर्वाचक पर्यवेक्षक या नागरिक समाज की रिपोर्ट पर कठोर कार्रवाई करने के लिए सशक्त किया जाना चाहिए।
  - उम्मीदवारों की बढ़ती संख्या को नियंत्रित करने के लिए उम्मीदवारों द्वारा जमा की जाने वाली जमानत राशि (security deposit) को बढ़ा दिया जाना चाहिए।

VISION IAS

- **मतदाता पंजीकरण:** ऑनलाइन पंजीकरण तथा मतदाताओं के लिए **ई-एपिक (e-EPIC) (इलेक्ट्रॉनिक फोटो पहचान-पत्र)** के प्रावधान के साथ-साथ मतदाता पंजीकरण के लिए पात्रता तिथि के रूप में एक वार्षिक तिथि की बजाय **त्रैमासिक/छमाही पात्रता तिथि** को लागू किया जाना चाहिए।
- **मतदाता सुविधा:** मतदाताओं को पंजीकरण, पते में परिवर्तन, नामों को हटाने आदि जैसी सभी सुविधाओं के लिए **एकल सरलीकृत प्रारूप प्रदान करने तथा** नागरिकों के लिए **निर्वाचन संबंधी सेवाओं को सुव्यवस्थित करने हेतु** नेटवर्क और निर्वाचक सेवा केंद्रों (ESCs)/मतदाता सुविधा केंद्रों (VFCs) का विस्तार करना चाहिए।
- **व्यापक पहुंच, शिक्षा और जागरूकता:** मतदान केंद्रों पर मतदाता जागरूकता मंच और चुनाव पाठशाला तथा स्कूलों में निर्वाचन से संबंधित साक्षरता क्लबों के गठन आदि हेतु सार्वजनिक उपक्रमों और निजी संगठनों के साथ भागीदारी को बढ़ावा देना चाहिए।
- **त्रुटि मुक्त मतदाता सूची** तैयार करने, प्रविष्टियों के **दोहराव को रोकने** आदि के लिए निर्वाचन आयोग ने आधार कार्ड को मतदाता पहचान-पत्र से संबद्ध करने की अनुशंसा की है।

संबंधित सुर्ख़ियां: डाक मतपत्र (Postal ballot)

- दिव्यांगजनों (PwDs) और 80 वर्ष से अधिक आयु के लोगों को दिल्ली विधानसभा निर्वाचन में **डाक मतपत्र** के माध्यम से अपना मतदान करने की अनुमति प्रदान की गई थी।
- **निर्वाचनों में डाक द्वारा मतदान** के अंतर्गत **मतदाताओं को** इलेक्ट्रॉनिक रूप से प्रेषित **डाक मतपत्रों** (ETPB) **का वितरण किया जाता है और डाक द्वारा पुनः संग्रहित किया जाता है।**
- **सेवारत मतदाताओं को डाक मतपत्र या उनके द्वारा नियुक्त मतदाता के माध्यम से** मतदान करने का विकल्प प्रदान किया गया है। इसमें सम्मिलित हैं:
  - संघ के सशस्त्र बलों के सदस्य।
  - सशस्त्र बलों के ऐसे सदस्य जो सेना अधिनियम, 1950 के प्रावधानों के तहत अधिनियमित होते हैं।
  - किसी राज्य के सशस्त्र पुलिस बल के सदस्य जो उस राज्य के बाहर सेवारत हों।
  - ऐसे व्यक्ति जो भारत सरकार द्वारा भारत के बाहर किसी कार्य हेतु नियोजित हों।

निर्वाचन संबंधी विवादों का अधिनिर्णयन

- **मुद्दा: लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951**, के तहत यह प्रावधान किया गया है कि उच्च न्यायालय के समक्ष दायर किसी निर्वाचन संबंधी याचिका के संबंध में न्यायालय द्वारा समाधान (याचिका प्रस्तुत किए जाने के 6 माह के भीतर) प्रदान करना अनिवार्य होगा। हालांकि, द्वितीय प्रशासनिक सुधार आयोग (ARC) के अनुसार इस प्रकार की याचिकाएं वर्षों तक लंबित बनी रहती हैं और इस दौरान, यहां तक कि सदन की संपूर्ण अवधि समाप्त हो जाती है, निर्वाचन संबंधी याचिका अपने उद्देश्यों को प्राप्त कर पाने में निष्फल हो जाती है।
- **अनुशंसा:** राष्ट्रीय संविधान कार्यकरण समीक्षा आयोग द्वारा यह अनुशंसा की गई है कि निर्वाचन संबंधी याचिकाओं के लिए विशेष निर्वाचन पीठ का गठन केवल उच्च न्यायालय में ही किया जाना चाहिए।

5.2. परिसीमन आयोग (Delimitation Commission)

सुर्ख़ियों में क्यों?

हाल ही में, केंद्र सरकार द्वारा संघ राज्य क्षेत्र जम्मू एवं कश्मीर और साथ ही असम, अरुणाचल प्रदेश, मणिपुर तथा नागालैंड राज्यों की विधान सभाओं व संसदीय निर्वाचन क्षेत्रों के परिसीमन के प्रयोजनार्थ परिसीमन आयोग का गठन किया गया है।

परिसीमन के बारे में

- परिसीमन का शाब्दिक आशय **'विधायी निकाय वाले किसी देश या किसी प्रांत के क्षेत्रीय निर्वाचन क्षेत्रों की परिसीमाओं अथवा सीमाओं का निर्धारण करने के कार्य या प्रक्रिया'** से है।
- **संविधान के अनुच्छेद 82 के तहत**, संसद प्रत्येक जनगणना के उपरांत एक परिसीमन अधिनियम अधिनियमित करती है, जिसके तहत परिसीमन आयोग का गठन किया जाता है।
- **अनुच्छेद 170 के अंतर्गत,** राज्यों को भी प्रत्येक जनगणना के पश्चात् परिसीमन अधिनियम के अनुसार प्रादेशिक निर्वाचन-क्षेत्रों में विभाजित किया जाता है।

VISION IAS

- भारत में, ऐसे परिसीमन आयोगों को 4 बार गठित किया गया है, यथा- वर्ष 1952, 1963, 1973 और वर्ष 2002 में।
- केंद्र सरकार द्वारा कार्यान्वित विभिन्न परिवार नियोजन कार्यक्रमों के कारण **वर्ष 1981** और **1991 की जनगणना के पश्चात् कोई परिसीमन नहीं** हो सका था।
- वर्ष 2002 में, **84वें संविधान संशोधन** के माध्यम से वर्ष 2026 तक के लिए लोक सभा और राज्य विधान सभाओं की परिसीमन प्रक्रिया को रोक दिया गया था।
- इसके परिणामस्वरूप, परिसीमन आयोग लोक सभा या विधान सभाओं में कुल सीटों में वृद्धि नहीं कर सकता। इसे **वर्ष 2026 के पश्चात्** ही किया जा सकता है।
- इसने **निर्वाचन क्षेत्रों के आकार में व्यापक विसंगतियों** को उत्पन्न किया है, जिनमें सबसे बड़े निर्वाचन क्षेत्र में तीन मिलियन से अधिक मतदाता, और सबसे छोटे में 50,000 से कम मतदाता हैं।

परिसीमन आयोग

- परिसीमन आयोग को **भारत के राष्ट्रपति द्वारा नियुक्त** किया जाता है और यह **भारत निर्वाचन आयोग के सहयोग** में कार्य करता है।
- **परिसीमन आयोग में तीन पदेन सदस्य होते हैं, यथा-**
  - अध्यक्ष के रूप में उच्चतम न्यायालय का एक सेवारत या सेवानिवृत्त न्यायाधीश;
  - मुख्य निर्वाचन आयुक्त (CEC) अथवा CEC द्वारा नामित निर्वाचन आयुक्त; और
  - संबंधित राज्य का राज्य निर्वाचन आयुक्त।
- **इसके कार्यों में शामिल हैं:**
  - सभी निर्वाचन क्षेत्रों की जनसंख्या को लगभग समरूप बनाने और जनसंख्या के समान खंड को समान प्रतिनिधित्व प्रदान करने हेतु **निर्वाचन क्षेत्रों की संख्या और सीमाओं का निर्धारण** करना।
  - **अनुसूचित जातियों** और **अनुसूचित जनजातियों** के लिए (जहाँ भी उनकी जनसंख्या अपेक्षाकृत अत्यधिक हो) **आरक्षित सीटों की पहचान करना।**
- ज्ञातव्य है कि परिसीमन आयोग के **आदेशों में विधि का प्रभाव** निहित होता है और इसे किसी भी न्यायालय के समक्ष प्रश्नगत नहीं किया जा सकता।

न्यूज़ टुडे

- 2 पृष्ठों में कवर किया जाने वाला दैनिक समसामयिकी समाचार बुलेटिन।
- सुर्खियों के प्राथमिक स्रोत: द हिंदू, इंडियन एक्सप्रेस और पीआईबी (PIB)। अन्य स्रोतों में शामिल हैं. न्यूज ऑन एयर, द मिंट, इकोनॉमिक टाइम्स आदि।
- इसका उद्देश्य प्रचलित विभिन्न घटनाओं के बारे में जानने के लिए प्राथमिक स्तर की जानकारी प्रदान करना है।
- इसमें दो प्रकार के दृष्टिकोणों को शामिल किया गया है यथा:
  - दिवसीय प्राथमिक सुर्खियों – 180 से कम शब्दों में दिन की मुख्य सुर्खियों को शामिल किया गया है।
  - अन्य सुर्खियाँ– ये मूल रूप से समाचारों में आने वाली एक पंक्ति की जानकारियाँ हैं। यहां शब्द सीमा 80 शब्द है।
- यह अंग्रेजी और हिंदी दोनों माध्यमों में उपलब्ध है। हिंदी ऑडियो, विजन आईएएस हिंदी यूट्यूब चैनल पर उपलब्ध है।

असमान प्रतिनिधित्व से उत्पन्न मुद्दे

- **लोकतंत्र में सीटों का असमान आबंटन:** 2001 की जनगणना के आधार पर वर्तमान परिसीमन, 30 वर्षों के पश्चात् किया गया था। तब से अब तक जनसंख्या में लगभग 87% की वृद्धि हुई है और देश में निर्वाचन क्षेत्रों की प्रकृति में विसंगति बनी हुई है।
- **"एक नागरिक एक वोट" के सिद्धांत का कमजोर पड़ना:** उदाहरण के लिए, सामान्यतया राजस्थान का एक सांसद 30 लाख से अधिक लोगों का प्रतिनिधित्व करता है, जबकि तमिलनाडु या केरल का एक सांसद 18 लाख से भी कम लोगों का प्रतिनिधित्व करता है।
- **जनप्रतिनिधियों पर बढ़ता बोझ:** वर्तमान में एक सांसद वर्ष 1951-52 (जब पहला आम चुनाव आयोजित हुआ था) के एक सांसद की तुलना में चार गुना से अधिक मतदाताओं का प्रतिनिधित्व करता है।
- **बदलते परिवेश या गतिशीलता के साथ सामंजस्य नहीं:** वर्ष 1988 में, 61वें संशोधन अधिनियम के माध्यम से मतदान के लिए आयु को 21 वर्ष से घटाकर 18 वर्ष कर दिया गया था। इससे प्रत्येक निर्वाचन क्षेत्र के आकार में पर्याप्त वृद्धि हुई। इसके अतिरिक्त, शहरी या औद्योगिक क्षेत्रों में प्रवासन ने इस स्थिति को और जटिल बना दिया है।
- **इससे लोगों के मध्य विभाजन को बढ़ावा मिलता है:** एक क्षेत्र द्वारा दूसरों को नियंत्रित करने या सांस्कृतिक और सामाजिक आकांक्षाओं की अनदेखी करने से नवीन जन आंदोलन उभर सकते हैं। इसके अतिरिक्त, यह राजनीतिक दलों के लिए राजनीतिक रूप से महत्वपूर्ण बनाम महत्वहीन राज्यों का विभाजन करता है। इससे छोटे राज्यों की मांग को बढ़ावा मिलता है।

यदि परिसीमन से संबंधित आरोपित प्रतिबंधों को समाप्त कर दिया जाता है तो उसके निहितार्थ

- **परिवार नियोजन से संबंधित चिंताएं बनी रह सकती हैं,** क्योंकि इससे जनसंख्या नियंत्रण के क्षेत्र में कार्य करने वाले राज्यों का संसद में प्रतिनिधित्व कम हो सकता है।
- **सदन के पीठासीन अधिकारियों को सदन में व्यवस्था बनाए रखने में समस्याओं का सामना करना पड़ सकता है:** वर्तमान समय में भी सदन की कार्यवाही के सुचारू संचालन में बाधा आती रहती है। पीठासीन अधिकारियों के निर्देशों और निर्णयों को उचित सम्मान नहीं दिया जाता है, और कार्यवाही में उत्पन्न व्यवधान से समस्या बढ़ती है। ऐसे में संख्या में अचानक वृद्धि ऐसे मामलों को और बढ़ा देगी।
- **सदन का कामकाज:** इससे गंभीर तनाव की स्थिति उत्पन्न हो सकती है क्योंकि शून्यकाल, प्रश्नकाल आदि के लिए एकल घंटे की समयावधि बहुत छोटी होगी।

आगे की राह

- परिसीमन आयोग 2002 के अध्यक्ष ने सिफारिश की थी कि परिसीमन कार्य को प्रत्येक जनगणना के बाद किया जाना चाहिए ताकि **परिवर्तन बहुत व्यापक न हों** और **हर मतदाता के वोट का मूल्य करीब-करीब स्थिर रहे।**
- उन समस्याओं से निपटने के लिए एक बहस और आम सहमति की आवश्यकता है, जिनके उत्पन्न होने की संभावना है।

5.3. राजनीति में महिलाओं की भागीदारी (Women Participation in Politics)

सुर्ख़ियों में क्यों?

हाल ही में, **"लोकनीति-CSDS और कोनराड एडेनॉयर स्टिफ्टंग"** ने एक सर्वेक्षण रिपोर्ट जारी की, जिसमें भारत में राजनीतिक भागीदारी और प्रतिनिधित्व के विभिन्न आयामों पर महिलाओं के अनुभव का आकलन किया गया है।

इस सर्वेक्षण द्वारा रेखांकित प्रवृत्तियां

- **राजनीतिक भागीदारी का निर्धारण करने वाला सामाजिक-आर्थिक वर्ग:** उच्च सामाजिक (जाति) और उच्च आर्थिक वर्गों से संबंधित महिलाएं, सामाजिक एवं आर्थिक पदानुक्रम के निचले स्तर पर स्थित महिलाओं की तुलना में चुनावी राजनीति में अधिक सक्रिय हैं।
- **मतदाताओं के रूप में भागीदारी में वृद्धि:** विगत कुछ वर्षों में मतदाताओं के रूप में महिलाओं की भागीदारी में वृद्धि हुई है। भारत के कई राज्यों में, महिला मतदान का प्रतिशत पुरुषों की तुलना में अधिक है।
- **राजनीति संबंधी निर्णयन की सीमित स्वायत्तता:** दो-तिहाई महिलाओं ने बताया कि उन्हें अपनी राजनीतिक भागीदारी के संबंध में स्वतंत्रता प्राप्त नहीं है। सीमित स्वायत्तता महिलाओं द्वारा उनके परिवारों में सामना की जाने वाली प्रतिबंधात्मक प्रथाओं से प्रत्यक्षतः संबद्ध है।

VISION IAS

- **पुरुष उम्मीदवारों को अपेक्षाकृत अधिक वरीयता:** लगभग 50% महिलाओं ने इस बात पर सहमति व्यक्त की कि चुनाव लड़ने हेतु टिकट वितरण में दलों द्वारा सदैव पुरुष उम्मीदवार को वरीयता प्रदान की जाती है और 40 प्रतिशत से अधिक महिलाओं ने यह अनुभव किया कि भारतीय मतदाताओं द्वारा पुरुषों के पक्ष में मतदान करने की अधिक संभावना होती है।
- **सर्वप्रमुख बाधा के रूप में पितृसत्तात्मकता:** प्रत्येक पांच में से एक महिला का मत है कि समाज के पितृसत्तात्मक मानदंड/संरचना राजनीति में महिला भागीदारी को प्रतिबंधित करने वाली सर्वप्रमुख बाधा है। इसके अतिरिक्त, पारिवारिक उत्तरदायित्व, व्यक्तिगत बाधाएं और सांस्कृतिक मानदंड आदि अन्य प्रमुख बाधाएं हैं।
- **राजनीति में रुचि में वृद्धि, किंतु करियर के रूप में राजनीति को अपनाने के प्रति अनिच्छा:** युवा पीढ़ी, विशेषतः जिनकी शिक्षा तक पहुंच है, राजनीति में अधिक संलग्न है। ग्रामीण क्षेत्रों की महिलाओं की रूचि में, विशेषकर स्थानीय राजनीति में, भी अत्यधिक वृद्धि हुई है।
    - हालांकि, तीन चौथाई महिलाओं ने अवसर दिए जाने पर भी राजनीति को अपना करियर बनाने के प्रति अनिच्छा व्यक्त की है।
- **मीडिया समाचारों तक पहुँच:** यह राजनीतिक सूचनाओं का एक प्रमुख स्रोत है, जिसके परिणामस्वरूप महिलाओं में राजनीति के प्रति रूचि में अत्यधिक वृद्धि हुई है। मीडिया समाचारों तक अत्यधिक पहुँच रखने वाली महिलाओं ने कम पहुँच या पहुँच न रखने वाली महिलाओं की तुलना में राजनीति में अधिक रुचि व्यक्त की है।

राजनीति में अधिक महिला भागीदारी की आवश्यकता

- **संतुलित दृष्टिकोण:** राजनीतिक निर्णय लेने में महिलाओं और पुरुषों दोनों की पूर्ण एवं समान भागीदारी एक संतुलन प्रदान करती है जो समाज की संरचना को अधिक सटीक रूप से प्रदर्शित करती है। इसके अतिरिक्त, अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर और ग्राम पंचायत (गाँव) स्तर पर प्रलेखित साक्ष्य दर्शाते हैं कि निर्वाचित पदों पर महिलाओं का अधिकाधिक प्रतिनिधित्व निर्वाचित निकाय की प्रक्रिया और प्राथमिकताओं को संतुलित करता है।
- **महिलाओं से संबंधित और अन्य सामाजिक मुद्दों का समाधान:** कुपोषण, रक्ताल्पता (एनीमिया), प्रजनन स्वास्थ्य, बाल कल्याण, निर्धनता आदि जैसे मुद्दों पर अपेक्षाकृत अधिक ध्यान केंद्रित किया जा सकेगा।
- **संसदीय समितियों में महत्वपूर्ण भूमिका:** विभाग से संबंधित संसदीय समितियाँ भारत में सरकार के निर्णयों, कानून और कार्यों की जांच करने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करती हैं। इसलिए, इन समितियों में महिला सांसदों की भागीदारी यह सुनिश्चित करने हेतु महत्वपूर्ण है कि संसद द्वारा निर्मित विधियाँ और नीतियाँ लैंगिक-समावेशी हों।
- **आर्थिक प्रदर्शन में वृद्धि:** संयुक्त राष्ट्र विश्वविद्यालय के एक हालिया अध्ययन में ज्ञात हुआ कि भारत में महिला विधायक, पुरुष विधायकों की तुलना में प्रति वर्ष लगभग 1.8 प्रतिशत अंकों से अपने निर्वाचन क्षेत्रों के आर्थिक प्रदर्शन में वृद्धि करती हैं।
- **सशक्तीकरण:** राजनीतिक सशक्तीकरण महिलाओं के लिए अपेक्षाकृत अधिक अवसरों की उपलब्धता को प्रेरित कर सकता है और परिणामतः, उनके लिए समान अवसरों का सृजन हो सकता है। लैंगिक असमानता जैसी बहुआयामी समस्या को समाप्त करने के लिए, एक बहु-आयामी दृष्टिकोण को अपनाने की आवश्यकता है तथा विभिन्न पहलों के साथ महिलाओं का राजनीतिक सशक्तीकरण एक उत्प्रेरक के रूप में कार्य कर सकता है।

महिलाओं की भागीदारी में वृद्धि हेतु आवश्यक उपाय

- **संसद में महिलाओं के लिए कोटा:** भारतीय संविधान में 73वें और 74वें संशोधन द्वारा महिलाओं के लिए स्थानीय निकाय की एक तिहाई सीटों के आरक्षण का प्रावधान किया गया है। महिलाओं को लोकसभा और सभी राज्यों की विधानसभाओं में 33 प्रतिशत आरक्षण प्रदान करने संबंधी महिला आरक्षण विधेयक को तत्काल पुरःस्थापित एवं पारित किये जाने की आवश्यकता है।
- **राजनीतिक दलों में महिलाओं के लिए आरक्षण:** यद्यपि यह कदम महिला सांसदों की संख्या में वृद्धि के संबंध में कोई ठोस आश्वासन प्रदान नहीं करता है, तथापि यह योग्यता आधारित वर्धित भागीदारी और अपेक्षाकृत कम जटिल विधि उपलब्ध कराता है। स्वीडन, नॉर्वे, कनाडा, ग्रेट ब्रिटेन और फ्रांस इसके मुख्य उदाहरण हैं।

VISION IAS

- **उन सभी संरचनात्मक और कानूनी बाधाओं को समाप्त** करना जो लड़कियों एवं महिलाओं की राजनीति और निर्णयन प्रक्रिया में भागीदारी तथा उनके उत्तरदायित्व को सीमित करती हैं।
- लड़कियों एवं महिलाओं के लिए नेतृत्व कौशल में वृद्धि करने वाले तथा लैंगिक समानता को बढ़ावा देने वाले **सामुदायिक कार्यक्रमों और खेल प्रतियोगिताओं को बढ़ावा देना।** कार्यकारी पदों पर और कॉर्पोरेट बोर्डों में महिलाओं के अधिकाधिक समावेशन के माध्यम से कार्यस्थल पर महिलाओं के नेतृत्व का समर्थन करना।
- सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और सार्वजनिक जीवन में **व्यक्तिगत एवं सामूहिक रूप से भाग** लेने के लिए लड़कियों और महिलाओं में क्षमता-निर्माण करने वाली **जमीनी स्तर पर कार्यरत संस्थाओं का वित्तपोषण करना।**

राजनीति में महिला भागीदारी से संबंधित अन्य प्रवृत्तियां

- **स्वतंत्रता के पश्चात् दोनों सदनों में महिलाओं की भागीदारी में वृद्धि हुई है:** प्रथम लोकसभा (वर्ष 1952) और 17वीं लोकसभा (वर्ष 2019) के मध्य महिलाओं का प्रतिनिधित्व 4.4 प्रतिशत से बढ़कर 14.4 प्रतिशत हो गया। राज्य सभा में भी महिलाओं का प्रतिनिधित्व वर्ष 1952 के 6.9 प्रतिशत से बढ़कर वर्ष 2014 में 11.4 प्रतिशत हो गया है।
- **वैश्विक औसत से कम:** महिला-भागीदारी का वैश्विक औसत 22.9 प्रतिशत है। भारत की कुल जनसंख्या में महिलाओं की हिस्सेदारी (49.5%) के परिपेक्ष्य में, संसद में उनका प्रतिनिधित्व अत्यधिक निम्न है। विश्व के विधान-मंडलों के निचले सदन में महिलाओं के प्रतिशत के संदर्भ में भारत 190 देशों में से 153वें स्थान पर है।
- **स्थानीय निकायों में महिलाओं का अधिक प्रतिनिधित्व:** पंचायती राज संस्थाओं में निर्वाचित महिला प्रतिनिधियों की संख्या लगभग 13.45 लाख है जो कुल निर्वाचित प्रतिनिधियों की भागीदारी का 46.14% है। देश भर की कुल ग्राम पंचायतों में से 43 प्रतिशत में महिला सरपंच हैं।

हालांकि, ग्राम पंचायतों में महिलाओं के लिए आरक्षण के कारण राजनीति में उनकी भागीदारी में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है, किंतु वर्तमान में भी कई चुनौतियां बनी हुई हैं, जैसे-

- **पंचायती राज अधिनियम और नियमों के संबंध में स्वयं निर्वाचित महिलाओं के मध्य पर्याप्त ज्ञान का अभाव है** तथा अशिक्षा के कारण यह समस्या और अधिक जटिल बनी हुई है।
- राजनीतिक प्रशासन में **अनुभव की कमी,** संस्थाओं में कार्यरत पुरुष कर्मचारियों द्वारा लैंगिक पूर्वाग्रहों को अपनाया जाना, महिलाओं की गतिशीलता के समक्ष बाधाएं, प्रतिकूल कार्य परिवेश आदि समस्याएं विद्यमान हैं।
- जब निर्वाचित महिलाओं का उनके पुरुष रिश्तेदारों द्वारा प्रतिनिधित्व किया जाता है तो उस स्थिति में उन्हें पर्याप्त **अधिकार प्राप्त नहीं होते हैं।** अधिकांशतः, प्राप्त शक्तियों पर उनके पति और परिवार के अन्य पुरुष सदस्यों द्वारा अधिकार कर लिया जाता है, जिन्होंने महिलाओं को चुनाव लड़ने के लिए प्रेरित किया था।

निष्कर्ष

समाज में निर्णयन प्रक्रिया में महिलाओं की भूमिकाओं के महत्व को चिन्हित करते हुए सभी नागरिकों के मध्य अवसरों की समानता के साथ एक प्रगतिशील समाज के निर्माण हेतु महिलाओं की संस्थाओं को सुदृढ़ किया जाना अत्यधिक महत्वपूर्ण है।

5.4. निर्वाचन में मतदान संबंधी आचरणों को प्रभावित करने वाले कारक (Factors Affecting Voting Behaviour in Elections)

सुर्ख़ियों में क्यों?

हाल ही में, अभिजीत बनर्जी, अमोरी गेथिन और थॉमस पिकेटी के एक नए अध्ययन में भारत के मतदाताओं के समक्ष विकल्पों को निर्धारित करने वाले कारकों, मुद्दों और विचारों की जांच की गई है।

VISION IAS

मतदान संबंधी आचरण क्यों महत्वपूर्ण है?

- यह मतदाताओं की **आवश्यकताओं और अपेक्षाओं को समझने** के लिए एक अवसर के रूप में काम कर सकता है।
- यह **मतदाताओं के मनोविज्ञान या विचार को अप्रत्यक्ष** रूप से प्रकट करने में सहायक हो सकता है।
- निश्चित लोगों के समूह के मतदान के प्रतिरूप से यह पता लगाया जा सकता है कि **शक्ति का केंद्र स्थानीय, क्षेत्रीय** या **राष्ट्रीय है**।
- इसे **निर्वाचन प्रक्रिया में मतदाताओं के विश्वास** के परिमाण का आकलन करने के मापदंड के रूप में भी देखा जा सकता है।

मतदान संबंधी आचरण को प्रभावित करने वाले कारक

- **नृजातीय कारक (जातिगत और धार्मिक पहचान):** मतदाता आमतौर पर अपने नृजातीय समूह से संबद्ध राजनीतिक दलों और उम्मीदवारों का समर्थन करते हैं। इस समर्थन का निहितार्थ मनोवैज्ञानिक लगाव नहीं होता है, बल्कि मतदाता इस सह-नृजातीयता को राष्ट्रीय संसाधनों का अपने हित में उपयोग करने हेतु सर्वोत्तम अवसर के रूप में देखते हैं।
- **भाषा:** लोगों का अपनी भाषाओं के साथ भावनात्मक लगाव होता है, इसलिए भाषा-संबंधी कारक उनके मतदान संबंधी आचरण को प्रभावित करते हैं। तमिलनाडु में डी.एम.के. और आंध्र प्रदेश में टी.डी.पी. जैसे राजनीतिक दलों के उत्थान में भाषा को एक उत्तरदायी कारक माना जा सकता है।
- **वितरण की राजनीति:** मतदाता लक्षित लाभों के आधार पर नेताओं का चयन करते हैं और बदले में नेता, मतदाताओं को अपेक्षित लाभ प्रदान करते हैं।
- **उम्मीदवार के जीतने की संभावना:** मतदाता **ऐसे उम्मीदवार** के पक्ष में मतदान करना अधिक पसंद करते हैं जिसके जीतने की वास्तविक संभावना होती है।
- **व्यक्तित्व का आकर्षण:** किसी दल के नेता का आकर्षक व्यक्तित्व मतदाताओं की मतदान संबंधी वरीयताओं को निर्धारित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।
- **किसी राजनेता के प्रति निष्ठा:** व्यक्तिगत स्तर पर राजनीति करने वाले नेता प्रायः मतदाताओं के ऐसे सीमित भाग के लिए विश्वसनीय होते हैं, जिन्होंने ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में मतदाताओं के साथ निरंतर पारस्परिक संबंधों के माध्यम से व्यक्तिगत प्रतिष्ठा स्थापित की है।
- **सत्तारूढ़ दल का प्रदर्शन:** सत्तारूढ़ दल के प्रदर्शन के आधार पर मतदाताओं द्वारा उनका समर्थन और विरोध करने की प्रवृत्ति होती है।
- **विचारधारा:** कुछ मतदाताओं की साम्यवाद, पूंजीवाद आदि जैसी कुछ विचारधाराओं के प्रति प्रतिबद्धता होती है।
- **तात्कालिक कारक:** युद्ध, मंदी, रोग के प्रकोप जैसी चरम घटनाएं भी अप्रत्यक्ष रूप से मतदान संबंधी आचरण को प्रभावित करती हैं।
- **आपराधिक पृष्ठभूमि वाले उम्मीदवार:** कई शोधों से ज्ञात होता है कि उम्मीदवारों की आपराधिक पृष्ठभूमि के विषय में अधिकाधिक जानकारी, मतदाताओं को ऐसे उम्मीदवारों के चयन से विरत करती है।

मतदान संबंधी आचरण में उभरती प्रवृत्तियां

- **प्रदर्शन-आधारित या आर्थिक मतदान:** कई शोधों से यह तथ्य उभरकर सामने आया है कि किसी राजनीतिक दल या व्यक्तिगत नेता का राष्ट्रीय और राज्य स्तर पर आर्थिक प्रदर्शन, मतदाताओं के मतदान संबंधी आचरण को अत्यधिक प्रभावित करते हैं।
- **निर्वाचन क्षेत्र में प्रदर्शन:** हाल ही में, यह देखा गया है कि नृजातीय आधारित संसाधनों के वितरण की तुलना में, मतदाताओं में अपने निर्वाचन क्षेत्र के स्तर पर किए गए कार्यों के आधार पर नेताओं को चुनने की प्रवृत्ति अधिक होती है।

VISION IAS

- **शासन संबंधी मुद्दे:** 40% से अधिक मतदाताओं ने कहा है कि रोजगार के अवसर, स्वास्थ्य देखभाल सुविधाएं, सड़क, पेयजल आदि जैसे मुद्दे उनकी वरीयताओं को निर्धारित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

निष्कर्ष

यह देखा गया है कि मतदाताओं की उम्मीदवारों से संबंधित सूचना तक पहुंच उनकी वरीयताओं को निर्धारित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है, इसलिए उम्मीदवारों के विषय में जानकारी के प्रसार पर कदम उठाए जाने चाहिए। साथ ही, विश्वसनीय स्रोत द्वारा इस प्रकार की सूचनाओं का व्यापक रूप से प्रसारित किया जाना सर्वाधिक प्रभावी होता है। इसलिए, निर्वाचन आयोग द्वारा "व्यवस्थित मतदाता शिक्षा और चुनावी भागीदारी कार्यक्रम" (Systematic Voter Education and Electoral Participation: SVEEP) जैसी पहलों को बढ़ावा दिया जाना चाहिए।

6. न्यायपालिका (Judiciary)

6.1. उच्चतर न्यायपालिका (Higher Judiciary)

6.1.1. न्यायालय की अवमानना (Contempt of Court)

सुर्ख़ियों में क्यों?

हाल ही में, उच्चतम न्यायालय ने भारत के वर्तमान मुख्य न्यायाधीश को लक्षित करते हुए सोशल मीडिया पर की गई टिप्पणी के संदर्भ में, अधिवक्ता-कार्यकर्ता प्रशांत भूषण को न्यायालय के अवमान का दोषी माना था।

न्यायालय का अवमान क्या है?

- अवमान का तात्पर्य किसी **न्यायालय की गरिमा या प्राधिकार के प्रति अनादर प्रकट करना** है।
- **अवमान के संबंध में संवैधानिक उपबंध:**
  - न्यायालय का अवमान संविधान के **अनुच्छेद 19(2) के तहत वाक्-स्वातंत्र्य एवं अभिव्यक्ति-स्वातंत्र्य पर युक्तियुक्त निर्बंधनों** में से एक है।
  - संविधान के अनुच्छेद 129 में उपबंध किया गया है कि उच्चतम न्यायालय को अपने अवमान के लिए दंड देने की शक्ति होगी। **अनुच्छेद 215 में उपबंध किया गया है कि उच्च न्यायालयों को भी दंड देने की इसी प्रकार शक्ति प्राप्त होगी।**
- न्यायालय अवमान अधिनियम, 1971 अवमान को परिभाषित करता है (संविधान में न्यायालय के अवमान को परिभाषित नहीं किया गया है)। यह अवमान को सिविल और आपराधिक अवमान में विभाजित करता है।
  - **सिविल अवमान** का तात्पर्य किसी भी न्यायालय के आदेश की जानबूझकर की गई अवज्ञा से है।
  - **आपराधिक अवमान** से किसी भी ऐसी बात का (चाहे बोले गए या लिखे गए शब्दों द्वारा, या संकेतों द्वारा या दृश्य रूपणों द्वारा, या अन्यथा) प्रकाशन अथवा किसी भी अन्य ऐसे कार्य का करना अभिप्रेत है-
    - जो किसी न्यायालय को कलंकित करता है या जिसकी प्रवृत्ति उसे कलंकित करने की है अथवा जो उसके प्राधिकार को अवनत करता है या जिसकी प्रवृत्ति उसे अवनत करने की है; अथवा
    - जो किसी न्यायिक कार्यवाही के सम्यक् अनुक्रम पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है, या उसमें हस्तक्षेप करता है या जिसकी प्रवृत्ति उसमें हस्तक्षेप करने की है; अथवा
    - जो न्याय के प्रशासन में किसी अन्य रीति से हस्तक्षेप करता है या जिसकी प्रवृत्ति उसमें हस्तक्षेप करने की है अथवा जो उसमें बाधा डालता है या जिसकी प्रवृत्ति उसमें बाधा डालने की है।
- **दंड:** न्यायालय अवमान अधिनियम, 1971 के अनुसार, दंड छह माह तक का साधारण कारावास और/ या 2,000 रुपये तक का जुर्माना अथवा दोनों हो सकता है।
- **प्रतिबंध की अवधि**: जिस तिथि को अवमान किए जाने का आरोप लगाया गया है, उस तिथि से **एक वर्ष की समाप्ति के बाद** कोई भी न्यायालय अपनी धारणाओं/निर्णयों पर या किसी अन्य रूप में अवमान की कार्यवाही नहीं करेगा।

भारत में न्यायालय के अवमान को निर्धारित करने वाले न्यायिक निर्णय

- **न्याय प्रशासन में हस्तक्षेप: ब्रह्म प्रकाश शर्मा बनाम उत्तर प्रदेश राज्य वाद में,** उच्चतम न्यायालय ने यह माना कि न्यायालय की अवमान संबंधी अपराध घोषित/निर्धारित करने के लिए**, यह विशेष रूप से सिद्ध करना आवश्यक नहीं है कि न्याय के प्रशासन में कोई प्रत्यक्ष हस्तक्षेप हुआ है।**
- **न्यायालय को कलंकित करना: पी. एन. दुआ बनाम शिव शंकर और अन्य** वाद में, उच्चतम न्यायालय ने यह माना है कि केवल न्यायालय की आलोचना के आधार पर न्यायालय के अवमान का दोषी घोषित नहीं किया जा सकता है।
- **बरदनाथ मिश्र बनाम उड़ीसा उच्च न्यायालय के पंजीयक वाद में** न्यायालय ने कहा कि अवमान के मामले में न्यायालय को यह स्पष्ट करना होता है कि क्या अपमान न्यायाधीश के रूप में न्यायाधीश का किया गया है या न्यायाधीश का एक व्यक्ति के रूप में अपमान किया गया है। यदि व्यक्ति के रूप में है तो निर्णय के लिए न्यायाधीश को उनके निजी विशेषाधिकारों पर छोड़ दिया जाता है और न्यायालय को अवमान के लिए प्रतिबद्धता का अधिकार नहीं है।
- **न्याय की सामान्य प्रक्रिया में हस्तक्षेप: प्रीतम लाल बनाम मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय** में उच्चतम न्यायालय ने कहा कि न्यायालयों की कार्यवाही को हस्तक्षेप से बचाए रखने और न्यायिक प्रक्रियाओं को निर्बाध एवं अपनी गरिमा को बचाए रखने के लिए अवमान करने वालों को दंडित करना कर्त्तव्य बन जाता है।

VISION IAS

न्यायालय अवमान के अपवाद

- न्यायिक कार्यवाही की **निष्पक्ष एवं सटीक रिपोर्टिंग।**
- किसी मामले की सुनवाई और निपटारे के पश्चात न्यायिक आदेश के **गुणदोषों पर की गई निष्पक्ष आलोचना।**
- यदि कोई प्रकाशन या अन्य कृत्य जो केवल न्यायाधीश के मानहानि से संबंधित है तथा न्याय की प्रक्रिया में हस्तक्षेप करने के उद्देश्य से नहीं किया गया है, तो इसे न्यायालय के अवमान के रूप में नहीं माना जाएगा।
- वर्ष 2006 में इस अधिनियम में संशोधन किया गया था, और सत्य को एक वैध प्रतिवाद के रूप में मान्यता दी यदि यह लोकहित में था और प्रामाणिक तरीके से इसका आह्वान किया गया था।

अन्य लोकतांत्रिक देशों में आलोचनाओं के संबंध में न्यायाधीशों की अनुक्रिया?

- **इंग्लैंड:** वर्ष 1930 में हुई पिछली अवमानना की कार्यवाही के बाद अब इंग्लैंड में अवमानना कानून को समाप्त कर दिया गया है।
- **कनाडा:** वर्ष 1987 में कोपिटो मामले में न्यायालय ने कहा कि जब तक न्यायिक व्यवस्था के समक्ष कोई खतरा न हो, न्यायालयों की स्वतंत्र रूप से आलोचना की जा सकती है।

न्यायालयी अवमानना संबंधी मुद्दे

- **वाक् और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को सीमित/प्रतिबंधित करता है:** अवमानना का कानून अभी भी **'न्यायालयों और न्यायिक प्रशासन के महत्व को बनाए रखने की आवश्यकता'** और **अलंघनीय मूल अधिकार** {"उचित प्रतिबंधों" के अधीन 'भारत के संविधान के अनुच्छेद 19 (1) (क) द्वारा संरक्षित और गारंटीकृत वाक् और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता} **के मध्य बेहतर संतुलन** बनाए रखने हेतु प्रयासरत है।
- **अस्पष्ट और व्यापक क्षेत्राधिकार**: भारत में आपराधिक अवमान की परिभाषा अत्यधिक व्यापक है और इस प्रकार की कार्यवाही आरंभ करने के लिए न्यायालय की स्वतः संज्ञान की शक्तियों के कारण इसे सरलता से लागू किया जा सकता है।
- **प्राकृतिक न्याय के विरूद्ध:** प्राकृतिक न्याय का एक मूल सिद्धांत है कि कोई भी स्वयं के मामले में न्यायाधीश नहीं हो सकता है। हालांकि, अवमानना कानून न्यायपालिका को स्वयं के मामलें में न्यायाधीश के रूप में कार्य करने का अवसर प्रदान करता है।
- **सीमित अपीलीय अधिकार**: वर्तमान सांविधिक योजना के अनुसार, आपराधिक अवमानना हेतु दोषी ठहराए गए व्यक्ति को निर्णय के विरूद्ध पुनर्विचार याचिका दायर करने का अधिकार है और याचिका पर सामान्यत: अवमानकर्ता को सुने बिना पीठ द्वारा अदालत में निर्णय दे दिया जाता है।
- **कार्यकारी व्यवस्था प्रभावित होती है:** न्यायालय के आदेश का कभी कभी कार्यकारी को ब्लैकमेल करने के लिए उपयोग किया जाता है। न्यायालय के अवमान का भय प्रशासन के संसाधनों, जैसे सुरक्षाबल का उपयोग, लॉजिस्टिक्स आदि, का अनुपयुक्त आवंटन की ओर प्रेरित करता है।
- **अंतर्राष्ट्रीय अभ्यास:** "न्यायालय को कलंकित" करने के अपराध के तहत भारत में अभी भी दण्डित किया जाता है, भले ही इसे अमेरिका, कनाडा और इंग्लैंड में एक अपराध के रूप में समाप्त कर दिया गया है।

आगे की राह

- भारतीय **न्यायालय के अवमान कानूनों** के अंतर्गत **प्रदत्त न्यायालीय शक्ति की प्रकृति विवेकाधीन** है। इसका दुरुपयोग रोकने के लिए **इसे और अधिक व्यवस्थित और सैद्धांतिक बनाया जाना चाहिए।**
  - न्यायालय अवमान अधिनियम, 1971 की धारा 2 (c) (iii) में उल्लिखित 'किसी अन्य तरीके से' पद, जो न्यायालय की आपराधिक अवमानना में न्यायालयों की विवेकाधीन शक्तियों का स्रोत है, को या तो हटा दिया जाना चाहिए या इस असीम शक्ति की रोकथाम करने के लिए कुछ विशिष्ट दिशा-निर्देशों को शामिल किया जाना चाहिए।
- इस अधिनियम में **'आपराधिक मनोवृत्ति' (*mens rea*) की अवधारणा को सम्मिलित किया जाना चाहिए।**
  - 'आपराधिक मनोवृत्ति' इरादतन अपराध या दोषी मानसिक तत्व को संदर्भित करने वाली एक कानूनी अवधारणा है। आपराधिक परीक्षण में अपराध सिद्ध करने के लिए अपराधी की 'आपराधिक मनोवृत्ति' को जाहिर या उजागर करना सामान्यत: आवश्यक होता है।
- कार्यवाही **भारतीय साक्ष्य अधिनियम और दंड प्रक्रिया संहिता के अनुसार** की जा सकती है।
- अवमानना के लिए दंड अपर्याप्त हैं और यह अप्रभावी है, विशेष रूप से अर्थदंड के संबंध में साथ ही इसे न्याय प्रशासन में हस्तक्षेप से निपटने के लिए पर्याप्त रूप से बढ़ाया जाना चाहिए।

क्या यह प्रावधान बनाए रखा जाना चाहिए या नहीं?

वर्ष 2018 में न्याय विभाग ने भारतीय विधि आयोग से **न्यायालय अवमान अधिनियम, 1971** के मूल्यांकन का आग्रह किया था। जिसके

VISION IAS

पश्चात **विधि आयोग** ने एक रिपोर्ट प्रस्तुत की है जिसमें कहा गया कि इस अधिनियम में निम्नांकित कारणों से संशोधन करने की कोई आवश्यकता नहीं है:

- **अवमान मामलों की अत्यधिक संख्या:** विभिन्न उच्च न्यायालयों और उच्चतम न्यायालय में उच्च संख्या में लंबित सिविल और आपराधिक अवमान, इस अधिनियम की **निरंतर प्रासंगिकता** को न्यायोचित ठहराती है। आयोग ने कहा कि अवमान की परिभाषा में संशोधन इस कानून के समग्र प्रभाव को कम कर सकता है और लोगों के मन में न्यायालयों और उनके प्राधिकार और कार्यप्रणाली के प्रति सम्मान को भी कम कर सकता है।
- **अवमान की शक्ति का स्रोत:** न्यायालय संविधान से अपनी अवमान शक्तियां प्राप्त करते हैं। इस अधिनियम में केवल अवमान के लिए जाँच और दंड के संबंध में प्रक्रियाओं को रेखांकित किया गया है। इसलिए, अधिनियम से इस अपराध प्रावधान को हटाने से प्रवर न्यायालयों की अंतर्निहित संवैधानिक शक्तियों (किसी को भी अपने अवमान के लिए दंडित करने की) पर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा।
- **अधीनस्थ न्यायालयों पर प्रभाव:** संविधान प्रवर न्यायालयों को अपने अवमान के लिए दंडित करने की अनुमति प्रदान करता है। यह अधिनियम अतिरिक्त रूप से उच्च न्यायालय को अधीनस्थ न्यायालयों के अवमान के लिए भी दंडित करने की अनुमति प्रदान करता है। आयोग ने यह तर्क दिया कि यदि अवमान की परिभाषा संकुचित/सीमित की जाती है तो अधीनस्थ न्यायालयों की गरिमा को क्षति पहुंच सकती है क्योंकि अपनी अवमानना के मामलों से निपटने का उनके पास कोई उपचार उपलब्ध नहीं होता है।
- **अंतर्राष्ट्रीय तुलना:** आयोग ने ब्रिटेन और भारत के 'न्यायालय को कलंकित करने' के अपराध का तुलनात्मक अध्ययन करते हुए कहा है कि यूनाइटेड किंगडम अपने अवमानना कानूनों में इसे अपराध नहीं मानता है तथा ब्रिटेन में इसे अपराध के दायरे से बाहर कर दिया गया है।
    - हालांकि, आयोग ने यह निर्दिष्ट किया कि भारत में इसे अपराध के दायरे से बाहर करने से विधायी अंतराल को बढ़ावा मिलेगा। इसने भारत में इसे अपराध के रूप में बनाए रखने पर सहमति व्यक्त की गई है क्योंकि भारत में आपराधिक अवमानना के मामलों की संख्या अधिक है, जबकि ब्रिटेन में न्यायालय को कलंकित करने संबंधी अंतिम अपराध वर्ष 1931 में हुआ था ।
    - ब्रिटेन में न्यायालय को कलंकित करने का अपराध अन्य क़ानूनों के अंतर्गत अभी भी दंडनीय है।
- **इसका दुरुपयोग रोकने के लिए अधिनियम में पर्याप्त रक्षोपाय किए गए हैं।** वर्ष 1971 के अधिनियम के प्रावधानों से पता चलता है कि न्यायालय अवमानना के सभी मामलों में अभियोजित नहीं करेगी। आयोग ने पुन: यह टिप्पणी की कि इस अधिनियम की न्यायिक संवीक्षा की जाती रही है इसलिए इसमें संशोधन करने का कोई औचित्य नहीं है।
- **न्यायालयी शक्ति को सीमित करता है:** इस अधिनियम का प्रदर्शन प्रक्रियाओं के निर्धारण में बेहतर रहा है, तथा अवमान शक्तियों के उपयोग संबंधी न्यायालयों के असीम प्राधिकार को भी प्रतिबंधित करता है। अतः अवमान की परिभाषा में संशोधन से अस्पष्टता की स्थिति को बढ़ावा मिलेगा।

6.1.2. राज्य सभा में न्यायाधीशों की नियुक्ति (Judges in Rajya Sabha)

सुर्ख़ियों में क्यों?

हाल ही में, राष्ट्रपति द्वारा भारत के पूर्व मुख्य न्यायाधीश, श्री रंजन गोगोई को राज्य सभा के लिए नाम-निर्देशित किया गया।

अन्य संबंधित तथ्य

- संविधान के **अनुच्छेद 80(1)(a)** के तहत अपनी शक्तियों का प्रयोग करते हुए राष्ट्रपति ने श्री रंजन गोगोई को राज्य सभा के लिए नाम-निर्देशित किया है। इस अनुच्छेद में यह प्रावधान है कि राष्ट्रपति "साहित्य, विज्ञान, कला और समाज सेवा" जैसे विषयों के संबंध में विशेष ज्ञान या व्यावहारिक अनुभव रखने वाले 12 व्यक्तियों को उच्च सदन (राज्य सभा) के लिए नाम-निर्देशित कर सकता है।
- उल्लेखनीय है कि न्यायमूर्ति रंजन गोगोई (भारत के 46वें मुख्य न्यायाधीश) को उनकी सेवानिवृत्ति के छह माह के भीतर ही राज्य सभा हेतु नाम-निर्देशित किया गया है।

सेवानिवृत्ति के उपरांत नियुक्ति/विश्राम अवधि

- **समूह "ए" के सरकारी अधिकारी:** ये सेवानिवृत्ति के उपरांत 2 वर्ष के भीतर, सरकार की अनुमति के बिना, किसी प्रकार का लाभप्रद वाणिज्यिक रोज़गार प्राप्त नहीं कर सकते।
- **नियंत्रक-महालेखापरीक्षक (CAG):** अपने पद से निर्मुक्ति के उपरांत वह भारत सरकार या किसी भी राज्य सरकार के अधीन किसी अन्य पद हेतु पात्र नहीं होगा।
- **संघ लोक सेवा आयोग (UPSC):** पदावधि की समाप्ति के पश्चात् सदस्य उस पद पर पुनर्नियुक्ति हेतु पात्र नहीं होते हैं।

पक्ष में तर्क

- **किसी प्रकार की विधिक/संवैधानिक रोक नहीं:** अनुच्छेद 124(7) में केवल यह उपबंधित है कि उच्चतम न्यायालय का कोई भी सेवानिवृत्त न्यायाधीश "भारत के राज्यक्षेत्र के भीतर किसी भी न्यायालय में या किसी भी प्राधिकार के समक्ष अभिवचन या कार्य नहीं करेगा।"
    - यह उपबंध **केवल न्यायपालिका** में ही सेवानिवृत्ति के उपरांत नियुक्तियों को प्रतिबंधित करता है, परन्तु राष्ट्रपति, राज्यपाल, संसद के सदस्य आदि पदों पर नियुक्ति को निषिद्ध नहीं करता।
- **शक्तियों का कठोर पृथक्करण नहीं:** भारतीय संविधान में अमेरिकी संविधान के समान शक्तियों के कठोर पृथक्करण का उपबंध नहीं किया गया है।
    - इसके अतिरिक्त, यदि इस प्रकार के प्रख्यात व्यक्तियों की नियुक्तियां होती हैं, तो विधायिका और न्यायपालिका राष्ट्र-निर्माण के लिए एकजुट होकर कार्य कर सकती हैं।
    - संसद में सेवानिवृत्त न्यायाधीशों की उपस्थिति से विधायिका के समक्ष न्यायपालिका के विचारों को प्रस्तुत करने का अवसर प्राप्त होगा और इसी प्रकार यही लाभ न्यायपालिका को भी प्राप्त होगा।
- **अन्य क्षेत्रों में न्यायाधीशों की सेवानिवृत्ति के पश्चात् नियुक्तियों के दृष्टांत:** जैसे न्यायमूर्ति पी. सदाशिवम को केरल के राज्यपाल और न्यायमूर्ति हिदायतुल्ला को भारत के उपराष्ट्रपति के रूप में नियुक्त किया गया था।
- **न्यायमूर्ति रंजन गोगोई ने किसी राजनीतिक दल की सदस्यता ग्रहण नहीं की है:** प्रस्तुत उदाहरण एक न्यायाधीश के नाम-निर्देशन से संबंधित है, जबकि निर्वाचित और नाम-निर्देशित सदस्यों के मध्य अंतर विद्यमान होता है।
    - जो लोग किसी दल से सदन के लिए निर्वाचित होते हैं, वे उस दल के व्हिप (सचेतक) के अधीन होते हैं। वे दल के निर्देशों के अनुसार मतदान करने हेतु बाध्य होते हैं और सामान्यतया, यदि दल सत्ता में है तो वे दल एवं सरकार की आलोचना नहीं कर सकते।
    - दूसरी ओर, एक नाम-निर्देशित सदस्य एक स्वतंत्र सदस्य होता है, जो किसी भी दल के व्हिप के अधीन नहीं होता है।
- **राज्य सभा में मूल्यपरक वाद-विवादों को बढ़ावा:** प्रख्यात न्यायाधीश देश की विधि निर्माण प्रक्रिया में अति महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं तथा संसद की मूल भावना को बनाए रखने में सहयोग करते हुए राज्य सभा को सशक्त बना सकते हैं।
- **इस प्रकार की नियुक्तियों के विगत उदाहरण:** न्यायमूर्ति रंगनाथ मिश्रा, न्यायमूर्ति बहरुल इस्लाम तथा न्यायमूर्ति कवदूर सदानंद हेगड़े ने राज्य सभा के सदस्य के रूप में भी कार्य किया था।

विपक्ष में तर्क

- **न्यायपालिका की स्वतंत्रता से समझौता:** इससे इस धारणा को बल मिलता है कि यदि कोई न्यायाधीश कार्यपालिका के पक्ष में निर्णय देता है, तो उसे पुरस्कृत किया जाएगा।
    - वर्तमान में सेवारत न्यायाधीशों को सेवानिवृत्ति के उपरांत प्राप्त होने वाले उच्च पद का प्रस्ताव, किसी सेवानिवृत्त न्यायाधीश को पुरस्कृत करने से अधिक प्रलोभित करता है।
- **न्यायाधीशों की सत्यनिष्ठा:** न्यायाधीशों से अपेक्षा की जाती है कि वे अपनी सेवानिवृत्ति के पश्चात् भी सत्यनिष्ठ रहें, ताकि न्यायपालिका की स्वतंत्रता के प्रति प्रतिकूल धारणा उत्पन्न न हो सके।
- **शक्तियों के पृथक्करण के मूल सिद्धांतों का उल्लंघन:** न्यायालयों में सरकार के विरुद्ध सर्वाधिक वाद लंबित हैं। इस प्रकार की प्रत्येक नियुक्ति पारदर्शी रीति से वादों का निर्णयन करने की न्यायालय की क्षमता पर प्रश्नचिन्ह आरोपित करती है।
- **लोगों के विश्वास में कमी:** न्यायपालिका संवेदना और विश्वास पर आधारित होती है। इस प्रकार के प्रकरण न्यायपालिका की स्वतंत्रता में लोगों के विश्वास एवं आस्था को ठेस पहुँचाते हैं।

उठाए जा सकने योग्य कदम

- **अनिवार्य विश्राम अवधि (Mandatory cooling off period):** सेवानिवृत्ति के उपरांत सरकारी कार्यभार ग्रहण करने हेतु न्यायाधीशों के लिए यह प्रावधान होना चाहिए। यह अवधि निर्णयों के सेवानिवृत्ति पश्चात् प्रलोभनों से प्रभावित होने की संभावना को न्यून करेगी।
- **ब्रिटिश मॉडल का अनुसरण:** यहां उच्चतम न्यायालय के प्रत्येक न्यायाधीश को अपनी सेवानिवृत्ति के पश्चात् हाउस ऑफ लॉर्ड्स में बैठने का अधिकार प्राप्त है।
    - यदि सेवानिवृत्ति के उपरांत नाम-निर्देशन स्वचालित रूप से तथा 10 वर्ष के कार्यकाल के लिए हो जाए, तो राज्य सभा में ऐसे नए सदस्यों की स्वतंत्रता पर संदेह करने की कोई संभावना नहीं रह जाएगी।
- **न्यायाधीश पर अन्य क़ानूनों की प्रयोज्यता का विस्तार:** जैसे- लोकपाल और लोकायुक्त अधिनियम, 2013 की धारा 8, जिसके अंतर्गत इसके अध्यक्ष व सदस्यों को पुनर्नियुक्त होने या राजनयिक, राज्यपाल एवं अन्य पदों के रूप में कार्यभार ग्रहण करने से प्रतिबंधित कर दिया गया है। इस प्रकार का प्रावधान उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालय के पूर्व न्यायाधीशों पर भी लागू होना चाहिए।

VISION IAS

6.1.3. न्यायाधीशों का स्थानांतरण (Transfer of Judges)

सुर्ख़ियों में क्यों?

मद्रास उच्च न्यायालय की मुख्य न्यायाधीश के मेघालय उच्च न्यायालय में असामान्य स्थानांतरण के कारण कॉलेजियम प्रणाली के संबंध में विवाद उत्पन्न हुआ है।

यह विवाद क्यों?

- पूर्व में, देश के मुख्य न्यायाधीश की अध्यक्षता वाले कॉलेजियम द्वारा न्यायमूर्ति ताहिलरमानी को मेघालय उच्च न्यायालय में स्थानांतरित करने की अनुशंसा की गई थी।
- न्यायाधीश ताहिलरमानी के स्थानांतरण प्रस्ताव पर पुनर्विचार करने संबंधी अनुरोध को कॉलेजियम द्वारा अस्वीकृत कर दिया गया था, जिसके प्रत्युत्तर में न्यायाधीश ताहिलरमानी ने अपने पद से त्याग-पत्र दे दिया।
- हालांकि, **बार के कुछ सदस्यों ने उक्त स्थानांतरण** और इसके वास्तविक कारणों के संबंध में **पारदर्शिता के अभाव पर संदेह प्रकट किया है**। इस संदर्भ में उच्चतम न्यायालय ने एक आधिकारिक वक्तव्य जारी किया कि कॉलेजियम के पास निस्संदेह ठोस कारण मौजूद थे और यदि आवश्यक हो, तो इन्हें प्रकट किया जा सकता है।

न्यायाधीशों के स्थानांतरण की प्रक्रिया

- **संवैधानिक प्रावधान:** संविधान के **अनुच्छेद 222(1)** के तहत एक उच्च न्यायालय से दूसरे उच्च न्यायालय में न्यायाधीशों का स्थानांतरण भारत के मुख्य न्यायाधीश से परामर्श के पश्चात् राष्ट्रपति द्वारा किया जाता है।
  - **अनुच्छेद 217(1)** यह प्रावधानित करता है कि भारत के मुख्य न्यायमूर्ति से, उस राज्य के राज्यपाल से और मुख्य न्यायमूर्ति से भिन्न किसी न्यायाधीश की नियुक्ति की दशा में उस उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायमूर्ति से परामर्श करने के पश्चात्, राष्ट्रपति द्वारा उच्च न्यायालय के न्यायाधीश की नियुक्त की जाएगी।
- **न्यायिक निर्वचन:** उच्चतम न्यायालय वस्तुतः न्यायाधीशों के चयन, नियुक्ति और स्थानांतरण संबंधी शक्ति को तीन 'न्यायाधीश वादों' (Three Judges Cases) में दिए गए अपने निर्णयों से ग्रहण करता है। न्यायाधीशों के स्थानांतरण के विषय में उच्चतम न्यायालय के निर्णयों से, निम्नलिखित बिंदु उत्पन्न हुए हैं:
  - किसी न्यायाधीश का स्थानांतरण दंडात्मक उपाय नहीं हो सकता।
  - 'न्याय के बेहतर प्रशासन' के लिए केवल 'जनहित' के विषय पर स्थानांतरण का आदेश दिया जा सकता है।
  - स्थानांतरण का आदेश राष्ट्रपति द्वारा केवल भारत के मुख्य न्यायाधीश से प्रभावी परामर्श और उसकी सहमति के बाद ही दिया जा सकता है।

किए जा सकने योग्य उपाय

- **स्थानांतरण के लिए न्यायाधीशों की सहमति की आवश्यकता:** उच्च न्यायालय के न्यायाधीश भारत के मुख्य न्यायाधीश (CJI) और उच्चतम न्यायालय के कॉलेजियम के न्यायाधीशों के अधीनस्थ नहीं हैं। उन्हें संवैधानिक न्यायालयों के न्यायाधीशों के समान ही दर्जा प्राप्त है। संविधान ने CJI और कॉलेजियम के न्यायाधीशों को उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों पर प्रशासनिक अधीक्षण का अधिकार प्रदान नहीं किया है। इसलिए, स्थानांतरण से पूर्व संबद्ध न्यायाधीश की सहमति अवश्य होनी चाहिए।
- **स्थानांतरण के कारणों की रिकॉर्डिंग:** ऐसी रिकॉर्डिंग वस्तुतः न्यायिक और अर्ध-न्यायिक या यहां तक कि प्रशासनिक शक्ति के किसी भी संभावित मनमाने प्रयोग पर एक वैध नियंत्रण का कार्य करती है।
- **स्थानांतरण की मानक प्रक्रिया:** सरकार के परामर्श से स्थानांतरण की एक मानक प्रक्रिया स्थापित की जानी चाहिए। वर्तमान में कॉलेजियम को न्यायाधीशों के स्थानांतरण के मामले में सरकार से किसी भी प्रकार का सहयोग (इनपुट) प्राप्त करने की आवश्यकता नहीं होती है। परन्तु, न्यायाधीश के रूप में प्रोन्नति के संदर्भ में एक प्रक्रिया ज्ञापन (Memorandum of Procedure) का पालन किया जाता है।

निष्कर्ष

उच्चतम न्यायालय के कॉलेजियम द्वारा किसी भी मनमाने स्थानांतरण से उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की स्थिति अधीनस्थ के समान हो जाती है। इसके अतिरिक्त, कॉलेजियम प्रणाली अपनी अपारदर्शिता के कारण एक निर्भय और सशक्त न्यायपालिका का निर्माण करने तथा जनहित की सेवा करने में विफल रही है। इसलिए, सामान्य-जन का विश्वास बनाए रखने के लिए न्यायपालिका में पारदर्शिता को बढ़ावा देने हेतु त्वरित कदम उठाए जाने चाहिए।

VISION IAS

6.1.4. उच्चतम न्यायालय की क्षेत्रीय न्यायपीठ (Regional Bench of Supreme Court)

सुर्ख़ियों में क्यों?

भारत के उपराष्ट्रपति द्वारा उच्चतम न्यायालय की चार क्षेत्रीय न्यायपीठों की स्थापना का सुझाव दिया गया है। वर्तमान में, उच्चतम न्यायालय दिल्ली में अधिविष्ट है।

संवैधानिक प्रावधान

अनुच्छेद 130 (उच्चतम न्यायालय का स्थान): अनुच्छेद 130 के अनुसार, भारत के राष्ट्रपति के पूर्व अनुमोदन से भारत के मुख्य न्यायाधीश के आदेश पर उच्चतम न्यायालय को दिल्ली के अतिरिक्त अन्य स्थानों पर भी अधिविष्ट किया जा सकता है।

- अनुच्छेद 130 के तहत, भारत का मुख्य न्यायाधीश अभिनिर्दिष्ट व्यक्ति (persona designata) के रूप में कार्य करता है और उसे किसी अन्य प्राधिकारी/व्यक्ति से परामर्श करने की आवश्यकता नहीं होती है। इस संदर्भ में केवल राष्ट्रपति का अनुमोदन आवश्यक है।
- साथ ही, इस प्रकार की न्यायपीठों को स्थापित करने के लिए संविधान संशोधन की आवश्यकता नहीं होती है।

इस विषय से संबद्ध विभिन्न समितियाँ और उच्चतम न्यायालय का दृष्टिकोण

- **संसदीय स्थायी समिति:** विभिन्न संसदीय स्थायी समितियों द्वारा वर्ष 2004, 2005 और 2006 में अनुशंसा की गई थी कि उच्चतम न्यायालय की न्यायपीठों को देश में अन्यत्र स्थापित करने की अनुमति प्रदान की जानी चाहिए। वर्ष 2008 में, स्थायी समिति द्वारा सुझाव दिया गया था कि ट्रायल के आधार पर कम से कम एक न्यायपीठ की स्थापना चेन्नई में की जानी चाहिए।
- **विधि आयोग:** विधि आयोग द्वारा उच्चतम न्यायालय को 1.) संवैधानिक न्यायालय और 2.) नेशनल कोर्ट ऑफ अपील में विभाजित करने की अनुशंसा की गई थी। विधि आयोग ने अपनी **229वीं रिपोर्ट** में संवैधानिक और संबद्ध मुद्दों की सुनवाई हेतु **दिल्ली में एक संवैधानिक न्यायपीठ** तथा उच्च न्यायालयों के आदेशों/निर्णयों से उत्पन्न सभी अपीलीय कार्यों के निपटान हेतु दिल्ली (उत्तर), चेन्नई/हैदराबाद (दक्षिण), कोलकाता (पूर्व) और मुंबई (पश्चिम) में **चार अपीलीय न्यायपीठों (Cassation Benches)** को स्थापित करने की अनुशंसा की थी।
- **उच्चतम न्यायालय:** उच्चतम न्यायालय ने स्वयं वर्ष 1986 के आरंभ में चेन्नई, मुंबई और कोलकाता में क्षेत्रीय न्यायपीठों के साथ नेशनल कोर्ट ऑफ अपील की स्थापना करने की अनुशंसा की थी। **वी. वसंत कुमार वाद (2016)** में उच्चतम न्यायालय द्वारा नेशनल कोर्ट ऑफ अपील से संबंधित निर्णयन के लिए इस मामले को एक संवैधानिक न्यायपीठ को सौंपा गया था।
    - चेन्नई, मुंबई और कोलकाता में **क्षेत्रीय न्यायपीठों** के साथ **नेशनल कोर्ट ऑफ अपील** का उद्देश्य दीवानी, आपराधिक, श्रम तथा राजस्व मामलों में अपने क्षेत्राधिकार के भीतर उच्च न्यायालयों एवं न्यायाधिकरणों के निर्णयों के संबंध में न्याय के अंतिम न्यायालय के रूप में कार्य करना है।

क्षेत्रीय न्यायपीठों की आवश्यकता

- **संवैधानिक दायित्व: अनुच्छेद 39-A** राज्य को यह सुनिश्चित करने का निर्देश देता है कि विधिक तंत्र इस प्रकार से कार्य करे कि समान अवसर के आधार पर न्याय सुलभ हो सके और आर्थिक या किसी अन्य निर्योग्यता के कारण कोई नागरिक न्याय प्राप्त करने के अवसर से वंचित न हो जाए। इस प्रकार, यह सुनिश्चित करना आवश्यक हो जाता है कि उत्तर-पूर्वी राज्यों या दक्षिणी राज्यों के लोगों के लिए मुकदमेबाजी से संबंधित कार्य-संपादन की अतिरिक्त लागत (additional transaction cost) न्यूनतम हो।
- **वादों (cases) की अत्यधिक लंबितता:** उच्चतम न्यायालय में 65,000 से अधिक संख्या में मामले लंबित हैं और अपीलों के निपटान में कई वर्ष लग जाते हैं।
- **संवैधानिक न्यायालय के रूप में उच्चतम न्यायालय:** संवैधानिक न्यायपीठों (अर्थात् पांच या अधिक न्यायाधीशों वाली न्यायपीठ) द्वारा निर्धारित किए जाने वाले मामलों की संख्या में हाल के दिनों में निरंतर कमी हुई है। ऐसे में क्षेत्रीय न्यायपीठों के साथ, दिल्ली में स्थित भारत का उच्चतम न्यायालय केवल संवैधानिक कानून और सार्वजनिक कानून से संबंधित मामलों की सुनवाई करेगा।
- **कल्याण के एक मापन के रूप में मुकदमेबाजी:** भारत में मुकदमेबाजी पर एक अनुभवजन्य अध्ययन में यह पाया गया है कि दीवानी मामलों को दायर करने और आर्थिक समृद्धि (अधिक समृद्ध राज्यों में दीवानी मुकदमेबाजी की दर अत्यधिक है) के मध्य प्रत्यक्ष संबंध है। हालाँकि, हाल के वर्षों में दीवानी मामलों में बैकलॉग (लंबित मामलें) के कारण ऐसे (दीवानी) मामलों को दायर करने में कमी आई है जो भविष्य में भारत की आर्थिक संवृद्धि को प्रभावित कर सकता है। इस प्रकार, क्षेत्रीय न्यायपीठों की स्थापना उचित दिशा में उठाया जाने वाला कदम सिद्ध हो सकता है।

क्षेत्रीय न्यायपीठों की स्थापना से संबंधित मुद्दे

- **उच्चतम न्यायालय के प्राधिकार में कमी:** क्षेत्रीय न्यायपीठों का गठन अंततः उच्चतम न्यायालय के निर्णयों की सर्वोच्चता को कम कर सकता है।

VISION IAS

- हालांकि, आलोचकों का तर्क है कि **इस देश के कई उच्च न्यायालयों ने न्याय में कमी किए बिना न्याय प्रदान करने हेतु विभिन्न न्यायपीठों का गठन किया है।** उदाहरण के लिए, बॉम्बे उच्च न्यायालय की मुंबई, औरंगाबाद, नागपुर और पणजी (गोवा) में चार न्यायपीठें हैं।
- इसके अतिरिक्त, कार्यात्मक और संरचनात्मक प्रकृति वाले विकेंद्रीकरण से, जहाँ दिल्ली में स्थित न्यायपीठ केवल संवैधानिक मामलों का निपटान करती है, इस प्रकार की चिंताओं का समाधान किया जा सकता है।

- **यह एकीकृत न्यायिक प्रणाली को प्रभावित करेगा:** भारतीय संविधान द्वारा शीर्ष पर एक उच्चतम न्यायालय सहित इसके नीचे राज्यों में उच्च न्यायालयों के रूप में एक एकीकृत न्यायिक प्रणाली की स्थापना की गयी है। ऐसे में उच्चतम न्यायालय के क्षेत्रीय न्यायपीठों की स्थापना इसकी एकात्मक विशेषता को कमजोर कर सकती है। उल्लेखनीय है कि वर्ष 2010 में, उच्चतम न्यायालय की पूर्ण पीठ (full court) (जिसमें भारत के मुख्य न्यायाधीश की अध्यक्षता में 27 न्यायाधीश शामिल थे) ने उपर्युक्त कारण को उद्धृत करते हुए क्षेत्रीय न्यायपीठों के गठन संबंधी विधि आयोग की अनुशंसा को अस्वीकार कर दिया था।
  - हालांकि, यह तर्क दिया जाता है कि विभिन्न न्यायपीठों वाले उच्च न्यायालय ने एकीकृत न्यायिक प्रणाली को कमजोर नहीं किया है।

निष्कर्ष

लंबित वादों की बढ़ती संख्या और निर्धन याचिकाकर्ताओं द्वारा सामना की जाने वाली व्यावहारिक समस्याओं को देखते हुए, यह कहा जा सकता है कि क्षेत्रीय न्यायपीठों की स्थापना के विचार पर गंभीरतापूर्वक चिंतन किया जाना चाहिए। अपीलों के निपटान हेतु उच्चतम न्यायालय की क्षेत्रीय न्यायपीठों और दिल्ली में एक संवैधानिक न्यायपीठ की स्थापना, इस दिशा में बेहतर कदम सिद्ध होंगे।

6.1.5. भारतीय संविधान का अनुच्छेद 131 (Article 131 of Indian Constitution)

सुर्ख़ियों में क्यों?

हाल ही में, **केरल और छत्तीसगढ़** ने भारतीय संविधान के **अनुच्छेद 131** के तहत नागरिकता संशोधन अधिनियम (केरल) और राष्ट्रीय अन्वेषण अभिकरण अधिनियम (छत्तीसगढ़) जैसे विभिन्न केंद्रीय क़ानूनों की संवैधानिक वैधता को चुनौती देते हुए उच्चतम न्यायालय में याचिका दायर की है।

अनुच्छेद 131 के बारे में

- संविधान का अनुच्छेद 131 उच्चतम न्यायालय की **आरंभिक अधिकारिता** से संबंधित है। इसके तहत उच्चतम न्यायालय भारत सरकार और एक या अधिक राज्यों के मध्य; एक ओर भारत सरकार तथा किसी राज्य या राज्यों और दूसरी ओर एक या अधिक अन्य राज्यों के मध्य; एवं दो या अधिक राज्यों के मध्य के किसी विवाद का निस्तारण करता है।
- इसका तात्पर्य यह भी है कि कोई भी अन्य न्यायालय इस तरह के विवादों की सुनवाई नहीं कर सकता है।
- अनुच्छेद 131 के तहत किसी मामले को दायर करने के लिए उस मामले को केंद्र और राज्य के मध्य का विवाद होना चाहिए और उसमें आवश्यक रूप से विधि का या तथ्य का ऐसा कोई प्रश्न अंतर्वलित होना चाहिए जिस पर केंद्र और राज्य के विधिक अधिकार का अस्तित्व या विस्तार निर्भर है।
  - **कर्नाटक राज्य बनाम भारत संघ वाद (वर्ष 1978)** में न्यायमूर्ति पी. एन. भगवती ने कहा था कि अनुच्छेद 131 के तहत उच्चतम न्यायालय के समक्ष किसी वाद को दायर करने हेतु, राज्यों को यह प्रदर्शित करने की आवश्यकता नहीं है कि उनके विधिक अधिकारों का उल्लंघन हुआ है, बल्कि केवल यह प्रदर्शित करना है कि उक्त विवाद में विधिक प्रश्न निहित है।
  - इसका उपयोग विभिन्न दलों के नेतृत्व वाली राज्य और केंद्र सरकारों के मध्य राजनीतिक मतभेदों को समाप्त करने हेतु नहीं किया जा सकता है।
- **हालांकि, केंद्र के पास अपने कानूनों को लागू करवाने की अन्य शक्तियां हैं।**
  - संसद द्वारा बनाए गए कानूनों को लागू करने के लिए केंद्र सरकार किसी राज्य को निर्देश जारी कर सकती है।
  - यदि राज्य केंद्र के निर्देशों का अनुपालन नहीं करते हैं, तो केंद्र सरकार कानूनों का अनुपालन करवाने हेतु राज्यों के विरुद्ध एक स्थायी निषेधाज्ञा (permanent injunction) की मांग करने के लिए न्यायालय में अपील दायर कर सकती है।
- **उच्चतम न्यायालय की आरंभिक अधिकारिता निम्नलिखित तक विस्तारित नहीं है:**
  - उच्चतम न्यायालय की आरंभिक अधिकारिता का विस्तार उस विवाद पर नहीं होगा जो किसी ऐसी संधि, करार, प्रसंविदा, वचनबद्ध, सनद या वैसी ही अन्य लिखत से उत्पन्न हुआ है जो इस संविधान के प्रारंभ होने से पहले की गई थी और ऐसे प्रारंभ के पश्चात् प्रवर्तन में है या जो यह उपबंध करती है कि उक्त अधिकारिता का विस्तार ऐसे विवाद पर नहीं होगा;
  - किसी अंतर्राज्यीय (inter-state) नदी या नदी-दून के या उसमें जल के प्रयोग, वितरण या नियंत्रण से संबंधित विवाद;
  - भारत सरकार के विरुद्ध निजी व्यक्तियों (private individuals) द्वारा दायर की गई याचिका।

उच्चतम न्यायालय की अन्य अधिकारिता

- **सलाहकारी (Advisory):** सलाहकारी अधिकारिता के तहत, राष्ट्रपति को संविधान के अनुच्छेद 143 के तहत शीर्ष अदालत से राय लेने का अधिकार प्राप्त है।
- **अपीलीय (Appellate):** अपनी अपीलीय अधिकारिता के तहत, उच्चतम न्यायालय निचली अदालतों के निर्णयों के विरुद्ध अपील की सुनवाई कर सकता है।
- **असाधारण आरंभिक अधिकारिता (Extraordinary original jurisdiction):** उच्चतम न्यायालय के पास राष्ट्रपति और उपराष्ट्रपति के निर्वाचन से संबंधित विवादों, ऐसे मामले जिसमें केंद्र एवं राज्य दोनों शामिल हैं और मूल अधिकारों के उल्लंघन से संबंधित मामलों का समाधान करने की अनन्य शक्ति है।

अनुच्छेद 131 का महत्व

- **भारत का अर्ध-संघीय संवैधानिक ढांचा:** अंतर-सरकारी विवाद असामान्य नहीं हैं और इसलिए, संविधान निर्माताओं द्वारा ऐसे मतभेदों की अपेक्षा भी की गई थी तथा इनके समाधान के लिए उच्चतम न्यायालय की अनन्य आरंभिक अधिकारिता को संविधान में शामिल किया गया था।
- **राज्यों के मध्य विवादों के समाधान हेतु:** व्यक्तियों के विपरीत, राज्य सरकारें मूल अधिकारों के उल्लंघन की शिकायत नहीं कर सकती हैं या अनुच्छेद 32 (भाग 3 द्वारा प्रदत्त मूल अधिकारों को प्रवर्तित कराने के लिए उपचार) के तहत न्यायालयों की शरण नहीं ले सकती हैं। इसलिए, संविधान में यह उल्लेख है कि जब भी किसी राज्य सरकार को यह प्रतीत होता है कि उसके कानूनी अधिकार खतरे में हैं या उनका उल्लंघन किया गया है, तो वह उक्त "विवाद" को उच्चतम न्यायालय में ले जा सकती है।
    - राज्यों ने नदी जल बंटवारे और सीमा विवाद के संबंध में पड़ोसी राज्यों के विरुद्ध अनुच्छेद 131 के तहत ऐसे मामले दर्ज किए हैं।

अनुच्छेद 131 के तहत किसी विधि को असंवैधानिक घोषित करने की शक्ति

- वर्ष 2011 में, **मध्य प्रदेश राज्य बनाम भारत संघ वाद** में, उच्चतम न्यायालय ने यह निर्णय दिया था कि केंद्रीय क़ानूनों की वैधता को संविधान के अनुच्छेद 32 के तहत चुनौती दी जा सकती है, न कि अनुच्छेद 131 के तहत।

आगे की राह

उच्चतम न्यायालय को इस प्रश्न पर निर्णय करने हेतु एक बड़ी पीठ का गठन करना चाहिए कि क्या केंद्रीय कानूनों को चुनौती देने वाले मुकदमे अनुच्छेद 131 के तहत दायर करने योग्य हैं या नहीं। इस मामले में, यदि याचिका दायर की जाती है, तो उसी बेंच द्वारा ही इन विवादों पर अधिनिर्णय किया जा सकता है।

6.2. न्यायिक सुधार (Judicial Reforms)

6.2.1. अखिल भारतीय न्यायिक सेवा (All India Judicial Services)

सुर्ख़ियों में क्यों?

हाल ही में, एक कानूनी थिंक टैंक **विधि** द्वारा अखिल भारतीय न्यायिक सेवा (AIJS) के प्रस्ताव पर पुनः चर्चा की गयी।

पृष्ठभूमि

- वर्ष 1958 में विधि आयोग की 14वीं रिपोर्ट में सर्वप्रथम AIJS के सृजन का विचार प्रस्तुत किया गया था।
- वर्ष 1996 में प्रथम राष्ट्रीय न्यायिक वेतन आयोग (न्यायमूर्ति जगन्नाथ शेट्टी आयोग) ने भी जिला न्यायाधीश-स्तर पर इसकी अनुशंसा की थी।
- वर्ष 1976 में **स्वर्ण सिंह समिति** की अनुशंसा के पश्चात्, 42वें संविधान संशोधन अधिनियम, 1976 द्वारा एक अखिल भारतीय न्यायिक सेवा को शामिल करने के लिए संविधान के **अनुच्छेद 312** (अखिल भारतीय सेवाओं का गठन) में संशोधन किया गया था।
- वर्तमान में, जिला न्यायाधीशों और अधीनस्थ न्यायपालिका की नियुक्तियां संबंधित राज्य सरकारों द्वारा की जाती हैं।

AIJS की आवश्यकता क्यों?

- **रिक्त पदों को भरने के लिए:** यह भारत में जिला एवं अधीनस्थ न्यायपालिका के लगभग 5,000 रिक्त पदों को भरने में सहायता प्रदान करेगी, जैसा कि वर्ष 2013 में विधि और न्याय संबंधी संसदीय स्थायी समिति द्वारा अनुशंसा की गई थी।
- **न्याय की गुणवत्ता को समृद्ध करने के लिए:** चूंकि न्यायिक अकादमियां उचित प्रशिक्षण प्रदान करती हैं और उच्च न्यायालय उनके कार्यों में नवाचार हेतु चिन्हित मापदंडों के अंतर्गत स्वतंत्रता प्रदान करते हैं, इसलिए इससे जिला न्यायाधीशों की दक्षता में पर्याप्त वृद्धि होगी तथा यह उनके निर्णयों से उत्पन्न होने वाली अपीलों की संख्या को कम करेगा।

VISION IAS

- **राज्य तंत्र में विद्यमान अंतराल (कमियों) को दूर करने हेतु:** वर्तमान प्रणाली के अंतर्गत उच्च न्यायालयों या राज्य लोक सेवा आयोगों द्वारा जिला न्यायपालिका हेतु न्यायाधीशों की भर्ती की जाती है तथा यह तंत्र विभिन्न कमियों, विलंब की समस्या और अक्षमता से युक्त है।
    - इसके अतिरिक्त, कुछ मामलों में अनियमितता का आरोप लगाते हुए इन सीमित नियुक्तियों को भी उच्चतर न्यायपालिका में चुनौती दी जाती है, जिसके कारण न्यायपालिका योग्य उम्मीदवार की सेवाओं से वंचित हो जाती है।
- **उच्च प्रतिभाओं को आकर्षित करने के लिए:** यह पारदर्शी एवं कुशल नियुक्ति पद्धति के माध्यम से बेहतर प्रतिभाओं को जिला और अधीनस्थ न्यायपालिका में सम्मिलित होने के लिए प्रोत्साहित करने में सहायता प्रदान करेगी। यह नौकरी में संतुष्टि और व्यक्तिगत प्रतिष्ठा को अधिक महत्वपूर्ण बनाता है जो युवा पुरुषों और महिलाओं को प्रेरित करता है तथा उनके भ्रष्ट होने की संभावना कम हो जाती है।
- **सहकारी संघवाद:** एक एकीकृत न्यायपालिका, समान विधियों और एक अखिल भारतीय न्यायपालिका के माध्यम से सहकारी संघवाद की अवधारणा को संस्थागत बनाने में सहायता प्रदान करती है।
- **बेहतर बार-पीठ संबंध (Better Bar-Bench relation):** उच्च गुणवत्ता वाले न्यायाधीश तथा अधिवक्ताओं और न्यायाधीशों के मध्य सौहार्दपूर्ण संबंध से न्यायपालिका को बेहतर बनाने में सहायता प्राप्त होती है। वर्तमान परिस्थिति में यह एक वांछनीय सुधार है।

AIJS के बारे में

- इसका उद्देश्य जिला न्यायाधीश के पद के लिए एक केंद्रीकृत कैडर का गठन करना है, जिन्हें एक अखिल भारतीय परीक्षा के माध्यम से केंद्र द्वारा भर्ती किया जाएगा और अखिल भारतीय सेवाओं (AIS) के आधार पर प्रत्येक राज्य में नियुक्त किया जाएगा।
- इसे न्यायिक पदों में विद्यमान रिक्तियों, हाशिए पर स्थित समुदायों के अल्प प्रतिनिधित्व की समस्या और बेहतर प्रतिभा को आकर्षित करने में विफलता के समाधान के तौर पर प्रस्तुत किया जा रहा है।

अन्य संबंधित तथ्य

- सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 और दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 के अनुसार, राज्य सरकार द्वारा निर्धारित भाषा में दीवानी एवं फौजदारी न्यायालयों की कार्यवाही संचालित की जानी चाहिए।
- केवल उच्च न्यायालयों को अपनी कार्यवाही का संचालन अंग्रेजी भाषा में करना आवश्यक है। हालांकि, कुछ उच्च न्यायालयों को विशेष छूट प्राप्त है, जो हिंदी भाषा में अपनी कार्यवाही का संचालन करते हैं।

AIJS से संबंधित मुद्दे

- **केंद्रीकरण और संघवाद को लेकर वाद-विवाद की आशंका:** AIJS के गठन के उपरांत, राज्य सरकारों द्वारा जिला न्यायाधीशों की भर्ती और नियुक्ति की शक्तियों (अनुच्छेद 233) को एक केंद्रीकृत प्रणाली (जैसा कि वर्तमान में अन्य अखिल भारतीय सेवाओं के लिए व्यवस्था है) में हस्तांतरित किया जाएगा।
    - अनुच्छेद 233 के अनुसार, किसी राज्य में जिला न्यायाधीश नियुक्त होने वाले व्यक्तियों की नियुक्ति तथा जिला न्यायाधीश की पदस्थापना और प्रोन्नति उस राज्य का राज्यपाल ऐसे राज्य के संबंध में अधिकारिता का प्रयोग करने वाले उच्च न्यायालय से परामर्श करके करेगा।
- **भाषा की समस्या:** जिला और सत्र न्यायाधीश के न्यायालय के स्तर तक स्थानीय भाषा में कार्यवाही आयोजित की जाती हैं एवं अधिनिर्णय स्थानीय भाषा में लिखे जाते हैं।
    - AIJS प्रक्रिया के माध्यम से भर्ती किए जाने वाले न्यायाधीश राज्य की भाषा / रीति-रिवाजों से परिचित नहीं भी हो सकते हैं, जिसके कारण उन न्यायाधीशों द्वारा विभिन्न मामलों में प्रदत्त निर्णयों से स्थानीय आबादी की दृष्टि में न्यायिक प्रणाली की वैधता प्रभावित हो सकती है और इसकी दक्षता अत्यल्प हो सकती है।
- **न्यायपालिका की स्वतंत्रता:** वर्तमान में, जिला न्यायाधीशों की स्वतंत्रता को गारंटी इस तथ्य से प्राप्त होती है कि जिला न्यायाधीशों की नियुक्ति, स्थानांतरण और पदच्युति में उच्च न्यायालय महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करता है। AIJS के गठन से यह नियंत्रण विकृत या दुर्बल हो सकता है तथा इसके कारण न्यायपालिका की स्वतंत्रता में और अधिक ह्रास होगा।
    - इस तथ्य की भी आशंका व्यक्त की गई है कि भारतीय न्यायिक सेवा अधीनस्थ राज्य न्यायिक सेवा के सदस्यों के पदोन्नति के अवसर को काफी हद तक प्रभावित करेगी या अत्यल्प कर देगी।
- **आरक्षण और परीक्षा पद्धति को लेकर आशंका:** वर्तमान में अनेक समुदाय जो राज्य कोटा से लाभान्वित होते हैं, उनके द्वारा AIJS के सृजन का विरोध किया जा सकता है। ऐसा इसलिए है, क्योंकि राज्य सरकारों द्वारा अन्य पिछड़ा वर्ग (OBC) के रूप में मान्यता प्राप्त समुदायों को केंद्र सरकार द्वारा OBC के रूप में वर्गीकृत किया भी जा सकता है और नहीं भी।

VISION IAS

- एक "राष्ट्रीय परीक्षा" का विचार अल्प विशेषाधिकार प्राप्त पृष्ठभूमि के लोगों का न्यायिक सेवाओं में प्रवेश अवरुद्ध कर सकता है।

स्थानीय विधि: इसके द्वारा स्थानीय विधियों, प्रथाओं और रीति-रिवाजों को अनदेखा किया जा सकता है, जबकि ये अलग-अलग राज्यों में बहुत हद तक भिन्न-भिन्न होते हैं। इसके कारण AIJS के माध्यम से चयनित किए गए न्यायाधीशों के लिए प्रशिक्षण की लागतों में अत्यधिक वृद्धि हो सकती है।

आगे की राह

- यह सुनिश्चित करने की आवश्यकता है कि AIJS द्वारा प्रदान की जाने वाली सेवा (नियुक्ति की प्रक्रिया से लेकर पदच्युति की प्रक्रिया तक) केंद्र सरकार और राज्य सरकारों, दोनों के प्रभाव से ग्रसित न हो।
  - विधि आयोग की 116 वीं रिपोर्ट में अनुशंसा की गई है कि उच्चतम न्यायालय के सेवानिवृत्त और सेवारत न्यायाधीश, बार एसोसिएशन के सदस्यों और विधिक शिक्षाविदों से मिलकर गठित प्रस्तावित **राष्ट्रीय न्यायिक सेवा आयोग** द्वारा ही AIJS में नियुक्तियां, पदस्थापनाएं और पदोन्नति की जानी चाहिए।
- देश की न्यायिक व्यवस्था में कोई भी परिवर्तन राज्यों और उच्च न्यायालयों के परामर्श से किया जाना चाहिए।
- निम्न प्रदर्शन करने वाले राज्यों में बड़ी संख्या में रिक्तियों के कारणों और वजहों की जांच करना अधिक विवेकपूर्ण निर्णय हो सकता है।
- AIJS में चयनित व्यक्तियों हेतु एक और भाषा के चयन के मामले में गहन प्रशिक्षण प्रदान करने की आवश्यकता है। यह कदम निश्चित रूप से राज्य की स्थानीय भाषा की पर्याप्त समझ विकसित करने में सहायता प्रदान करेगा।

6.2.2. फास्ट ट्रैक स्पेशल कोर्ट (Fast Track Special Courts)

सुर्ख़ियों में क्यों?

हाल ही में, विधि और न्याय मंत्रालय ने राष्ट्रीय महिला सुरक्षा मिशन (National Mission for Safety of Women: NMSW) के एक भाग के रूप में, बलात्कार और POCSO अधिनियम से जुड़े मामलों के निपटान हेतु 1,023 फास्ट ट्रैक स्पेशल कोर्ट्स (FTSCs) स्थापित करने के लिए एक योजना प्रारंभ की है।

फास्ट ट्रैक स्पेशल कोर्ट का विकास

- वर्ष 2000 में, 11वें वित्त आयोग ने निचली अदालतों में दीर्घावधि से लंबित मामलों (विशेष रूप से विचाराधीन मामलों) के शीघ्र निपटान हेतु 1,734 फास्ट ट्रैक कोर्ट्स (FTCs) के गठन के लिए एक योजना की सिफारिश की।
- राज्य सरकारों द्वारा संबंधित उच्च न्यायालयों से परामर्श के पश्चात् प्रत्येक जिले में पाँच वर्षों (वर्ष 2000-05) के लिए औसतन 5 FTCs की स्थापना की जानी थी।
- इन FTCs के लिए न्यायाधीशों की नियुक्ति तदर्थ आधार पर की गई थी। उच्च न्यायालयों ने इन्हें उच्च न्यायालय के सेवानिवृत्त न्यायाधीशों, अर्ह न्यायिक अधिकारियों और बार एसोसिएशन के सदस्यों में से चयनित किया था।
- वर्ष 2005 तक केवल 1,562 FTCs कार्यरत थे। उच्चतम न्यायालय के निर्देश के उपरांत यह योजना वर्ष 2010-11 तक संचालित हुई। लेकिन वर्ष 2011 के अंत तक, FTCs की संख्या घटकर केवल 1,192 रह गई थी।
- तदुपरान्त, केंद्र सरकार ने इस योजना को बंद कर दिया। हालाँकि, राज्य सरकारें अपने स्वयं के धन से FTCs की स्थापना कर सकती थीं।
- हालांकि, यदि राज्य सरकारें FTCs को जारी रखने का निर्णय लेती हैं तो उन्हें इसे एक स्थायी कोर्ट के रूप में गठित करना होगा। अरुणाचल प्रदेश, असम, महाराष्ट्र, तमिलनाडु और केरल जैसे राज्यों ने FTCs की स्थायी स्थापना के विकल्प का चयन किया है।
- वर्ष 2012 में दिल्ली में घटित एक सामूहिक बलात्कार के मामले के उपरांत, **वर्मा समिति** की रिपोर्ट में त्वरित न्याय की संकल्पना पर बल दिया गया तथा राज्यों से यौन उत्पीड़न के मामलों की शीघ्र सुनवाई के लिए FTSCs स्थापित करने का अनुरोध किया गया।

FTSCs से संबंधित मुद्दे

- **संस्थागत मुद्दे:** इसमें निम्नलिखित शामिल हैं: अपर्याप्त कर्मचारी और आई.टी. अवसंरचना, अपर्याप्त कर्मियों से जूझ रहे फॉरेंसिक साइंस लैब से रिपोर्ट प्राप्त करने में विलंब, पीड़ितों की सहायता हेतु विभिन्न सेवाओं का अभाव, पीड़ितों/गवाहों के सुरक्षोपायों का अभाव, अव्यावहारिक कार्यस्थगन इत्यादि।
  - इसके कारण अत्यधिक संख्या में शिकायतकर्ताओं और गवाहों के प्रतिपक्षी (हॉस्टाइल) होने के उदाहरण सामने आते हैं।

VISION IAS

- **न्यायाधीशों की अपर्याप्त संख्या:** अधिकांशत: नई नियुक्तियां नहीं की जाती हैं और जब राज्य द्वारा वर्तमान व्यवस्था में कार्यरत न्यायाधीशों से कार्य निष्पादित कराया जाता है तो उनकी अनुपस्थिति से शेष न्यायाधीशों के कार्यभार में केवल वृद्धि होती है।
- **विधायी स्पष्टता का अभाव:** ऐसा कोई स्पष्ट विधायी आधार मौजूद नहीं है जो इन न्यायालयों के उद्देश्य या फास्ट ट्रैक पद्धति से इनके विशिष्ट कार्य-संचालन और इनके द्वारा अनुसरण की जाने वाली समयबद्ध प्रक्रियाओं को स्थापित करता हो।
  - इस प्रकार, वे तकनीकी रूप से फास्ट ट्रैक कोर्ट्स की तुलना में विशेष न्यायालय हैं।
- **प्रतिपुष्टि एवं अद्यतन का अभाव (Lack of feedback and updation):** लगभग एक दशक पूर्व इनकी स्थापना से लेकर अब तक फास्ट ट्रैक कोर्ट्स की अवधारणा में कोई उल्लेखनीय विकास नहीं हुआ है।

भारत में लंबित मामले

- अगस्त 2019 तक, उच्चतम न्यायालय, उच्च न्यायालयों और अधीनस्थ न्यायालयों में 3.5 करोड़ से अधिक मामले लंबित थे।
- इनमें से 87.3% मामले अधीनस्थ न्यायालयों में और 12.5% मामले 24 उच्च न्यायालयों में लंबित थे।
- वर्ष 2017 तक, उच्च न्यायालयों में 1,079 न्यायाधीशों की अधिकृत संख्या की तुलना में 403 पद रिक्त थे, जबकि अधीनस्थ न्यायालयों में 5,706 न्यायाधीशों की अधिकृत संख्या की तुलना में 22,704 पद रिक्त थे।
- वर्ष 2006 और वर्ष 2017 के मध्य, उच्च न्यायालयों में रिक्तियों की संख्या 16% से बढ़कर 37% और अधीनस्थ न्यायालयों में 19% से बढ़कर 25% हो गईं।

आगे की राह

- न्यायाधीशों की संख्या में वृद्धि के अतिरिक्त, महानगरीय और दूर-दराज के गैर-महानगरीय दोनों क्षेत्रों पर समान रूप से ध्यान दिया जाना चाहिए।
- विशेष अदालतों की स्थापना के पश्चात्, उनके प्रदर्शन और प्रभावशीलता का आकलन करने के लिए आवधिक निगरानी और मूल्यांकन व्यवस्था को अपनाया जाना चाहिए।
- न्यायिक अधिकारियों और अभियोजकों का उनकी अभिवृत्ति, ज्ञान एवं कौशल के आधार पर चयन किया जाना चाहिए तथा उन्हें संवेदनशीलता संबधी विशेष प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए।
- अन्य न्यायालयों और गैर-सरकारी संगठनों के साथ सहयोग के तंत्र को विकसित किया जाना चाहिए।
- व्यापक कानूनों के अंतर्गत पीड़ितों के लिए व्याख्याता, सामाजिक कार्यकर्ताओं और अन्य सेवाओं सहित पीड़ित सहायता सेवाओं, उन्हें सुरक्षा में गवाही देने तथा अनुभव होने वाले आघात को कम करने में सक्षम बनाने से संबंधित प्रावधान किए जाने चाहिए।

6.2.3. ऑनलाइन न्याय प्रदायगी (Online Justice Delivery)

सुर्ख़ियों में क्यों?

हाल ही में, उच्चतम न्यायालय ने देश के सभी न्यायालयों के लिए **न्यायिक कार्यवाही हेतु वीडियो-कॉन्फ्रेंसिंग का व्यापक रूप से उपयोग करने के दिशा-निर्देश जारी किए हैं** ताकि कोविड-19 महामारी के दौरान सोशल डिस्टेंसिंग को बनाए रखने के लिए अधिवक्ताओं और वादियों के एकत्रीकरण से बचा जा सके।

न्यायिक सेवाओं की ऑनलाइन प्रदायगी न्यायिक प्रणाली में विभिन्न मुद्दों से निपटने में किस प्रकार सहायक है?

- **लंबित मामलों के संदर्भ में:** वर्ष 2006-2019 के मध्य, सभी न्यायालयों में विचाराधीन मामलों में 22% की समग्र वृद्धि हुई है। ऑनलाइन न्यायिक सेवाएं इस कार्यसंचय को समाप्त करने और इसमें लगने वाले समय तथा लागत को कम करने के लिए अतिरिक्त सहायता प्रदान कर सकती हैं।
- **न्यायालयों की दक्षता में वृद्धि:** विशेष रूप से दीवानी मामलों में, मानक प्रणाली द्वारा उत्पन्न नित्य निर्णयों और आदेशों के प्रारूपों को न्यायालयों द्वारा न्याय की त्वरित प्रदायगी हेतु उपयोग किया जा सकता है।
  - कागजी कार्यवाही में कमी से न्यायाधीशों और न्यायालय के अन्य कर्मचारियों को प्रशासनिक कार्यभार से राहत प्राप्त होगी तथा वे न्यायिक कार्यों पर ध्यान केंद्रित कर सकेंगे।
  - रीयल-टाइम ऑनलाइन डेटा, मामलों की बेहतर पहचान और वर्गीकरण की सुविधा प्रदान करेगा तथा उच्च न्यायालयों को **अधीनस्थ अदालतों पर उचित पर्यवेक्षण एवं नियंत्रण स्थापित करने में सक्षम बनाएगा।**
- **अवसंरचनात्मक बाधाओं का निपटान:** दृश्य-श्रव्य विधि के माध्यम से मामलों की सुनवाई, न्यायालय की कार्यवाही के लिए भवन, कर्मचारी व अवसंरचना एवं सभी पक्षों के लिए सुरक्षा, परिवहन आदि के संदर्भ में लागत को कम कर सकती है।
- **न्यायिक आंकड़ों की उपलब्धता:** भारतीय विधि आयोग ने अपनी 245वीं रिपोर्ट में वर्णित किया है कि संपूर्ण देश के न्यायालयों के मामलों से संबंधित व्यापक और सटीक आंकड़ों के अभाव से सरकार द्वारा कुशल नीति निर्धारण में बाधा उत्पन्न होती है। न्यायिक सेवाओं की ऑनलाइन प्रदायगी द्वारा निर्मित डिजिटल डेटाबेस इस आवश्यकता को पूर्ण कर सकते हैं।

- **न्यायिक प्रणाली में पारदर्शिता और जवाबदेही में सुधार:** न्यायिक कार्यवाहियों की दृश्य-श्रव्य रिकॉर्डिंग की स्वीकृति कार्यवाहियों का सटीक रिकॉर्ड प्रदान करके न्यायालयों की पारदर्शिता में वृद्धि कर सकती है। साथ ही, इससे न्यायालयों में अनुचित आचरण और न्यायालय के समय के अपव्यय को हतोत्साहित किया जा सकता है।
- **व्यवसाय करने की सुगमता (इज ऑफ़ डूइंग बिज़नेस) में वृद्धि:** अनुबंध संबंधी विवादों के ऑनलाइन समाधान से घरेलू और विदेशी व्यवसायियों के विश्वास में बढ़ोत्तरी होगी, क्योंकि वे भारत में निवेश की योजना बनाते हैं।

चुनौतियाँ

- **न्यायालय और सूचना एवं प्रौद्योगिकी (IT) अवसंरचना में निवेश की कमी:** अत्याधुनिक ई-न्यायालयों के प्रभावी परिचालन हेतु उन्नत प्रौद्योगिकी की आवश्यकता होती है, जैसे- उच्च गति युक्त इंटरनेट कनेक्शन, नवीनतम दृश्य-श्रव्य उपकरण, क्लाउड कंप्यूटिंग, पर्याप्त बैंडविड्थ की उपलब्धता आदि।
- **न्यायालय के अधिकारियों और कर्मचारियों के मध्य तकनीकी जानकारी का अभाव** और समर्पित संस्थानिक तकनीकी सहायता की अनुपस्थिति।
- **वादियों और अधिवक्ताओं में जागरूकता का अभाव:** एक सर्वेक्षण के अनुसार 40 प्रतिशत से भी कम मामलों को विशेष रूप से कंप्यूट्रीकृत प्रणाली के माध्यम से दायर किया गया था।
- ग्रामीण क्षेत्रों में अपर्याप्त अवसंरचना, विद्युत और इंटरनेट कनेक्टिविटी की अनुपलब्धता तथा अल्प डिजिटल साक्षरता के कारण **न्याय तक पहुंच में डिजिटल विभाजन विद्यमान है।**
- विभिन्न विभागों के मध्य सॉफ्टवेयर के समन्वय, संचार और अन्तरसंक्रियता के अभाव के कारण **अंतर्विभागीय चुनौतियां।**
- **साइबर सुरक्षा संबंधी खतरे:** न्यायिक डेटा में संवेदनशील मामलों की जानकारी और अभियोग के आंकड़े शामिल होते हैं, इसलिए उनके इलेक्ट्रॉनिक भंडारण एवं प्रसारण की सुरक्षा तथा गोपनीयता की चिंता बनी रहती है।
- **प्रक्रियात्मक समस्याएं:** जैसे- दृश्य/श्रव्य प्रसारण के माध्यम से प्राप्त साक्ष्यों की स्वीकार्यता और प्रामाणिकता, अभिसाक्ष्य की पहचान एवं/या व्यक्तियों की सुनवाई के विषय, सुनवाई की गोपनीयता आदि।

आगे की राह

- **इलेक्ट्रॉनिक साक्ष्य के उपयोग के लिए नियम निर्माण:** न्यायालयों की कार्यवाहियों की दृश्य-श्रव्य रिकॉर्डिंग करने और दिनचर्या के निर्णयों तथा आदेशों के मानक प्रणाली से उत्पन्न स्वरूपों को बनाए रखने के सुझावों को शामिल करने के लिए प्रक्रियात्मक क़ानूनों / नियमों में भी संशोधन करना आवश्यक हो सकता है।
- **नियमित प्रशिक्षण कोर्स का सृजन और उपलब्धता:** ऑनलाइन सिस्टम का उपयोग और ई-डेटा {जैसे- ई-फाइल मिनट (स्मरणार्थ लेख) प्रविष्टियों, समन, वारंट, जमानत आदेश, आदेश आदि के रिकॉर्ड} का रखरखाव करने के लिए न्यायाधीशों, न्यायालय कर्मचारियों तथा पैरालीगल व्यक्तियों हेतु आवश्यक। कोर्स की अधिकतम पहुँच सुनिश्चित करने हेतु आभासी शिक्षण उपकरणों का उपयोग करना चाहिए।
- **उपयोगकर्ता के अनुकूल ई-कोर्ट तंत्र और जागरूकता सृजन,** जो जन सामान्य द्वारा सरलता और सुगमता से सुलभ हो तथा कई भारतीय भाषाओं में जानकारी प्रदान करता हो।
- **डेटा गोपनीयता पर स्पष्ट नियम:** इनमें डेटा अतिक्रमण के परिणाम, गोपनीयता का उल्लंघन आदि तथा एक प्रभावी शिकायत निवारण तंत्र संबंधी नियम शामिल होने चाहिए।

कुछ महत्वपूर्ण पहलों का विवरण

- **ई-कोर्ट मिशन मोड प्रोजेक्ट:**
  - यह एक **अखिल भारतीय परियोजना** है, जिसकी निगरानी और वित्त पोषण देश भर में ज़िला न्यायालयों के लिए **न्याय विभाग** (भारत सरकार के विधि एवं न्याय मंत्रालय के अधीन) द्वारा की जाती है।
  - ई-कोर्ट्स परियोजना का उद्देश्य देश के सभी जिला और अधीनस्थ न्यायालयों को सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी (ITC) में सक्षम बनाते हुए नागरिकों व साथ ही साथ न्यायालयों को भी निर्दिष्ट सेवाएं प्रदान करना है।
  - नागरिकों को प्रदान की जाने वाली सेवाओं में मामलों के पंजीकरण की स्थिति, मामले की स्थिति, मामले की सूची, दैनिक आदेश पत्र और अंतिम आदेश/निर्णय शामिल हैं।
  - **ई-कोर्ट्स सेवा मोबाइल एप्लिकेशन और ई-कोर्ट्स नेशनल पोर्टल भी विकसित किए गए हैं।**
- **राष्ट्रीय न्यायिक डेटा ग्रिड:** यह एक वेब पोर्टल है, जो देश के किसी भी न्यायालय में लंबित मामलों की संख्या से संबंधित डेटा प्रदान करता है।
- **न्यायिक सेवा केंद्र (Judicial Service Centre: JSC):** इन केंद्रों की स्थापना सभी कंप्यूटराइज्ड न्यायालयों में की गई है, जो **वादियों/अधिवक्ताओं द्वारा याचिका और आवेदन दाखिल करने के लिए एक एकल खिड़की के रूप में कार्य करते हैं।** साथ ही, ये जारी मामलों तथा आदेशों एवं निर्णयों आदि की प्रतियों के बारे में जानकारी भी उपलब्ध करवाते हैं।
- **उच्चतम न्यायालय की ई-समिति:** यह भारत सरकार द्वारा भारतीय न्यायपालिका के कम्प्यूटरीकरण पर एक राष्ट्रीय नीति निर्माण और तकनीकी संचार एवं प्रबंधन संबंधी परिवर्तनों के संबंध में परामर्श प्रदान करने हेतु भारत के मुख्य न्यायाधीश की सहायता करने के लिए उच्चतम न्यायालय में स्थापित एक निकाय है।
- **उच्च न्यायालयों में रिइंजीनियरिंग कमेटी:** इनकी स्थापना उच्चतम न्यायालय के ई-कमेटी संबंधी आदेश के अनुसार की गई है। इन समितियों की भूमिका वर्तमान न्यायिक प्रक्रियाओं को सुव्यवस्थित करने और इनमें सुधार करने, निरर्थक प्रक्रियाओं को समाप्त करने तथा न्यायिक प्रक्रियाओं को ITC सक्षम बनाने के संबंध में नई प्रक्रियाओं को डिज़ाइन करके न्यायिक प्रक्रिया को रिइंजीनियरिंग (एक प्रकार से पुनर्रचना) करने की है।
- **विधिक सूचना प्रबंधन और ब्रीफिंग सिस्टम (Legal Information Management & Briefing System: LIMBS):** यह एक वेब आधारित पोर्टल है, जिसे विधि कार्य विभाग, विधि और न्याय मंत्रालय द्वारा सरकार के विभागों एवं मंत्रालयों के विभिन्न अदालती मामलों की निगरानी तथा संचालन के लिए विकसित किया गया है।
- **इंटरऑपरेबल क्रिमिनल जस्टिस सिस्टम (ICJS):** इसका उद्देश्य ई-कोर्ट और ई-प्रिजन डेटाबेस के साथ-साथ आपराधिक तथा न्यायिक प्रणाली के अन्य स्तंभों, जैसे- फोरेंसिक, अभियोजन और बाल सुधार गृहों के साथ चरणबद्ध तरीके से क्राइम एंड क्रिमिनल्स ट्रैकिंग नेटवर्क एंड सिस्टम्स (CCTNS) परियोजना को एकीकृत करना है।

VISION IAS

6.3. ग्राम न्यायालय (Gram Nyayalayas)

सुर्ख़ियों में क्यों?

उच्चतम न्यायालय ने सभी राज्यों को एक माह के भीतर "ग्राम न्यायालयों" की स्थापना के लिए अधिसूचना जारी करने का निर्देश दिया है और साथ ही, इसने उच्च न्यायालयों से यह कहा है कि वे इस मुद्दे के संबंध में राज्य सरकारों के साथ परामर्श की प्रक्रिया को तीव्र करें।

पृष्ठभूमि

- **विधि आयोग (वर्ष 1986) की 114वीं रिपोर्ट** में निम्नलिखित हेतु जमीनी स्तर पर ग्राम न्यायालयों (मोबाइल ग्राम न्यायालय) को स्थापित करने की सिफारिश की गयी थी:
  - विशेष रूप से दूरी, समय और संबद्ध लागतों के संदर्भ में बाधाओं को कम करने हेतु समाज के हाशिए पर स्थित वर्गों के लिए न्याय तक पहुंच प्रदान करने।
  - संक्षिप्त प्रक्रिया (summary procedure) प्रदान करके विलंब को कम करने।
  - न्यायपालिका के उच्च स्तरों पर कार्यभार को कम करने।
- इनके माध्यम से अधीनस्थ न्यायालयों के समक्ष लंबित मामलों को लगभग 50% तक कम करने की अपेक्षा की गयी है तथा साथ ही, छह माह के भीतर निस्तारित किए जाने वाले नए मुक़दमों को भी संज्ञान में लिया जा सकता है।
- **ग्राम न्यायालय अधिनियम, 2008** को 2 अक्टूबर 2009 को अधिनियमित किया गया था। इस अधिनियम के तहत 5,000 से अधिक ग्राम न्यायालय स्थापित किए जाने की संभावना थी, जिसके लिए केंद्र सरकार ने संबंधित राज्य/केंद्र शासित प्रदेशों की सहायता करने हेतु लगभग 1,400 करोड़ रुपये आवंटित किए थे।
- हालांकि, वर्तमान में केवल 11 राज्यों ने ग्राम न्यायालयों को अधिसूचित करने के लिए कदम उठाए हैं। ज्ञातव्य है कि देश में केवल 208 ग्राम न्यायालय कार्यरत हैं।
  - कुछ राज्यों में, ग्राम न्यायालय की स्थापना संबंधी प्रस्ताव परामर्श के लिए उच्च न्यायालयों के समक्ष लंबित हैं, जबकि कुछ राज्यों में वे अधिसूचित होने के बावजूद कार्यरत नहीं हैं।
  - यद्यपि, कुछ राज्यों ने ग्राम न्यायालयों की स्थापना के लिए अधिसूचनाएँ जारी की हैं, तथापि सभी स्थापित ग्राम न्यायालय कार्यरत नहीं हैं (केरल, महाराष्ट्र और राजस्थान में स्थित ग्राम न्यायालयों को छोड़कर)।
  - उल्लेखनीय है कि, कुछ ही राज्यों द्वारा तत्परता से ग्राम न्यायालयों की स्थापना की गई है, जबकि पूर्वोत्तर के राज्यों में एक भी ग्राम न्यायालय कार्यरत नहीं है।

ग्राम न्यायालयों के बारे में

- **संरचना:** इसे प्रत्येक पंचायत के लिए मध्यवर्ती स्तर पर या एक जिले में मध्यवर्ती स्तर पर निकटवर्ती पंचायतों के समूह के लिए स्थापित किया जाता है।
  - यह अपनी अधिकारिता के अंतर्गत आने वाले गाँवों में मोबाइल न्यायालय संचालित कर सकता है और राज्य सरकार द्वारा इसके लिए आवश्यक सभी सुविधाओं का विस्तार किया जाएगा।
- **नियुक्तियां:** राज्य सरकार द्वारा उच्च न्यायालय के परामर्श से प्रत्येक ग्राम न्यायालय के लिए **न्यायाधिकारी** नामक एक पीठासीन अधिकारी की नियुक्ति की जाएगी, जिसके पास प्रथम श्रेणी के एक न्यायिक मजिस्ट्रेट के रूप में नियुक्त होने की पात्रता हो।
- **अधिकारिता, शक्तियां और प्राधिकार:** ग्राम न्यायालयों को **फौजदारी** एवं **दीवानी** दोनों न्यायालयों की शक्तियां प्राप्त होंगी। दीवानी मामलों में ग्राम न्यायालय द्वारा पारित निर्णय को एक डिक्री (न्यायिक निर्णय) माना जाएगा।
  - ग्राम न्यायालयों द्वारा इस अधिनियम की पहली और दूसरी अनुसूची में विनिर्दिष्ट आपराधिक मामलों, दीवानी मुकदमों, दावों या वादों पर न्यायिक कार्यवाही संचालित की जा सकती है। इसमें निम्नलिखित सम्मिलित हैं:
    - मृत्युदंड, आजीवन कारावास या दो वर्ष से अधिक की अवधि के कारावास की सजा से भिन्न अपराध।
    - केंद्रीय कानूनों से संबंधित अपराध, जैसे- मजदूरी का भुगतान, न्यूनतम मजदूरी, नागरिक अधिकारों का संरक्षण, बंधुआ मजदूरी, घरेलू हिंसा से महिलाओं का संरक्षण आदि।
    - राज्यों के कानूनों के तहत आने वाले वैसे अपराध, जिन्हें प्रत्येक राज्य सरकार द्वारा अधिसूचित किया गया हो।

VISION IAS

- दीवानी और संपत्ति से संबंधित मामले, जैसे- साझा चारागाह, जल प्रणाली, खेतों का उपयोग तथा कुएं या नलकूप से जल के निष्कर्षण का अधिकार आदि।

  - ग्राम न्यायालय अधिनियम की पहली और दूसरी अनुसूची में **केंद्र** और **राज्य** दोनों सरकारों द्वारा संशोधन किया जा सकता है।

- ग्राम न्यायालय; भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 में प्रावधानित रूल्स ऑफ़ एविडेंस (साक्ष्य नियमावली) के अनुसार कार्य करने हेतु बाध्य नहीं है, अपितु ये प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों द्वारा निर्देशित होते हैं तथा उच्च न्यायालय द्वारा निर्मित किसी भी नियम के अधीन होते हैं।

ग्राम न्यायालय की अप्रभावकारिता (Ineffectiveness of Gram Nyayalaya)

- **नियमित न्यायालयों के साथ समवर्ती अधिकारिता:** इस नवीन अधिनियम के कार्यान्वयन में विद्यमान जटिलताओं, नए न्यायाधिकारियों की नियुक्ति जैसे प्रावधान और केंद्र सरकार से अल्प वित्तपोषण के कारण अधिकांश राज्यों ने ग्राम न्यायालयों की स्थापना करने के बजाय तालुका स्तर पर नियमित न्यायालयों की स्थापना की है।
- **मानव संसाधनों की कमी:** न्यायाधिकारी के रूप में कार्य करने हेतु न्यायिक अधिकारियों की अनुपलब्धता, नोटरी, स्टांप वेंडर आदि की अनुपलब्धता के कारण इस संबंध में प्रगति प्रभावित हुई है।
- **निधि:** राज्यों द्वारा ग्राम न्यायालयों की स्थापना से संबंधित प्रस्तावों को न भेजने के कारण इस योजना के तहत निधियों के उपयोग की प्रगति धीमी रही है।
- **लंबित वादों में कमी का मुद्दा:** इस अधिनियम के उद्देश्यों में से एक जिले में निचली अदालतों में लंबित वादों और कार्यभार को कम करना था, लेकिन यह ज्ञात हुआ है कि इस उद्देश्य की प्राप्ति नहीं की जा सकी है। ग्राम न्यायालयों द्वारा निपटाए गए वादों की संख्या नगण्य है और वे अधीनस्थ न्यायालयों के समक्ष लंबित वादों में कमी करने में असफल रहें हैं।
- **कार्यप्रणाली:** ग्राम न्यायालयों को अंशकालिक आधार पर (सप्ताह में एक या दो बार) स्थापित किया गया है और ये मौजूदा न्यायालयों के अतिरिक्त नहीं हैं।
  - हालांकि, यह पाया गया है कि उच्च न्यायालयों और राज्य सरकारों के मध्य समन्वय के अभाव के कारण अधिकांश गांवों में, महीने में एक या दो बार ग्राम न्यायालयों का आयोजन किया जाता है, जबकि अन्य गावों में, यह स्थिति और भी ख़राब बनी हुई है।
- **जागरूकता की कमी:** याचिकाकर्ता, वकीलों, पुलिस अधिकारियों और अन्य लोगों सहित कई हितधारकों को जिला न्यायालय परिसर में स्थापित ग्राम न्यायालयों के बारे में जानकारी ही नहीं होती है। पुनः इस संस्था के बारे में जागरूकता उत्पन्न करने के लिए किसी सम्मेलन या सेमिनार का आयोजन भी कम ही होता है।
- इसके अतिरिक्त, श्रम न्यायालय, परिवार न्यायालय आदि वैकल्पिक मंचों के अस्तित्व के कारण ग्राम न्यायालयों की विशिष्ट अधिकारिता के बारे में अस्पष्टता और संशय की स्थिति बनी हुई है।

आगे की राह

- **स्थायी ग्राम न्यायालयों की स्थापना करना:** इन्हें सामान्यतः ग्रामीण क्षेत्र में उत्पन्न होने वाले विवादों की संख्या के आधार पर प्रत्येक पंचायत के लिए मध्यवर्ती स्तर पर या एक जिले में मध्यवर्ती स्तर पर निकटवर्ती पंचायतों के समूह के लिए स्थापित किया जा सकता है।
- **अवसंरचना और सुरक्षा:** ग्राम न्यायालयों की कार्यप्रणाली हेतु पृथक भवन के साथ-साथ ग्राम न्यायाधिकारियों और अन्य कर्मचारियों हेतु आवास निर्मित करने की भी आवश्यकता है।
- **ग्राम न्यायाधिकारी का प्रशिक्षण:** यह ग्राम न्यायालय के उद्देश्यों के परिप्रेक्ष्य में अनिवार्य है। ग्राम न्यायालय की कानूनी और प्रक्रियात्मक आवश्यकताओं के अतिरिक्त, प्रशिक्षण में उस समुदाय की स्थानीय भाषा भी शामिल हो सकती है, जहाँ उन्हें तैनात किया जाना है।
- **विभिन्न हितधारकों के मध्य जागरूकता को बढ़ावा देना:** राजस्व और पुलिस अधिकारियों सहित विभिन्न हितधारकों के मध्य जागरूकता उत्पन्न करने हेतु उपयुक्त कदम उठाए जा सकते हैं।

6.4. अधिकरणों के लिए नए नियम (New Rules for Tribunals)

सुर्ख़ियों में क्यों?

हाल ही में, केंद्रीय वित्त मंत्रालय द्वारा विभिन्न अधिकरणों में सदस्यों की नियुक्ति और सेवा शर्तों के लिए एक समान मानदंडों को निर्धारित करते हुए नए नियमों को तैयार किया गया है।

VISION IAS

नए नियमों के बारे में

- वित्त अधिनियम, 2017 की धारा 184 के तहत शक्तियों का प्रयोग करते हुए वित्त मंत्रालय द्वारा **"अधिकरण, अपीलीय अधिकरण और अन्य प्राधिकारी (सदस्यों की योग्यता, अनुभव और सेवा की अन्य शर्तें) नियम, 2020"** को तैयार किया गया है।
- ये नियम केंद्रीय प्रशासनिक अधिकरण; आयकर अपीलीय अधिकरण; सीमा शुल्क, उत्पाद शुल्क और सेवा कर अपीलीय अधिकरण सहित 19 अधिकरणों पर लागू होंगे। हालांकि, ये नियम विदेशी विषयक अधिकरणों (Foreigners Tribunals) पर लागू नहीं होंगे।
- **नियुक्ति:** उपर्युक्त अधिकरणों में नियुक्तियां केंद्र सरकार द्वारा **"खोज-सह-चयन समिति"** द्वारा की गई सिफारिशों के आधार पर की जाएंगी। इस समिति में निम्नलिखित सम्मिलित होंगे:
  - भारत का मुख्य न्यायाधीश (CJI) या CJI द्वारा नामित एक न्यायाधीश;
  - संबंधित अधिकरण का अध्यक्ष/चेयरपर्सन; तथा
  - संबंधित मंत्रालय/विभाग से दो सरकारी सचिव।
- **पदच्युति:** खोज-सह-चयन समिति के पास उपर्युक्त अधिकरणों के किसी सदस्य को पदच्युत करने की सिफारिश करने के साथ-साथ किसी सदस्य पर लगे कदाचार के आरोपों की जांच करने की भी शक्ति है।
- **अधिकरण के सदस्यों के लिए योग्यता (अर्हता):** केवल न्यायिक या विधिक अनुभव वाले व्यक्ति ही नियुक्ति के लिए पात्र होंगे।
- **पदावधि:** नए नियमों के तहत अधिकरणों के सदस्यों के लिए चार वर्ष की एक निश्चित पदावधि का प्रावधान किया गया है। यह वर्ष 2017 के नियमों के संबंध में न्यायालय की टिप्पणी पर आधारित है, जहाँ पूर्व में न्यायालय ने कहा था कि तीन वर्षीय कार्यकाल का प्रावधान (वर्ष 2017 के नियमों में), सदस्यों को न्याय-निर्णयन संबंधी अनुभव प्राप्त करने से रोकता है और इस प्रकार यह अधिकरण की दक्षता के लिए हानिकारक है।
- **स्वतंत्रता:** वर्ष 2017 के नियमों में यह प्रावधान था कि सदस्य पुन: नियुक्ति के लिए पात्र होंगे। हालांकि, वर्ष 2020 के इन नियमों में इस प्रावधान को हटा दिया गया है, क्योंकि न्यायालय द्वारा यह आशंका व्यक्त की गयी थी कि इस तरह के प्रावधान सदस्यों की स्वतंत्रता को प्रभावित करते हैं।
- **अन्य निरसित (omitted) प्रावधान:**
  - वह प्रावधान, जो संबंधित विभाग/ मंत्रालय के सचिव को खोज-सह-चयन समिति गठित करने में सक्षम बनाता है, उसका लोप कर दिया गया है।
  - 2017 के नियमों में शामिल प्रावधान, जिसने केंद्र को विशिष्ट मामलों के लिए नियमों में छूट देने की शक्ति प्रदान की थी, न्यायालय द्वारा व्यक्त चिंताओं को ध्यान में रखते हुए वर्ष 2020 के नियमों में उस प्रावधान का लोप कर दिया गया है।

विद्यमान चिंताएँ

- **नियुक्तियों में न्यायिक प्रधानता का अभाव (Lack of judicial primacy in appointments still remain):**
  - उच्चतम न्यायालय ने "एडवोकेट ऑन रिकॉर्ड एसोसिएशन बनाम भारत संघ वाद" (न्यायाधीशों वाले चतुर्थ मामले) (Fourth Judges Case) में यह निर्णय दिया था कि उच्च न्यायालय और उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों सहित न्यायिक अधिकारियों के चयन और नियुक्ति के मामले में न्यायपालिका की प्रधानता अनिवार्य होनी चाहिए।
  - अधिकरणों की खोज-सह-चयन समिति में सदस्यों की संख्या को 5 से घटाकर 4 (विशेषज्ञ सदस्य के रूप में नामित 5वें सदस्य को हटाकर) कर दी गई है। जैसा कि रोजर मैथ्यू वाद में न्यायालय ने पाया था, इस संरचना में अभी भी न्यायपालिका को केवल "सांकेतिक प्रतिनिधित्व" (CJI या उनके द्वारा नामित सदस्य) प्रदान किया गया है।
  - इसके अतिरिक्त, केंद्रीय प्रशासनिक अधिकरण (CAT), ऋण वसूली अपीलीय अधिकरण (DRAT) जैसे अधिकरणों में एक गैर-न्यायिक सदस्य अध्यक्ष नियुक्त हो सकता है, जो न्यायिक सर्वोच्चता को कमजोर करता है।
- **भारत संघ बनाम आर. गांधी (अध्यक्ष, मद्रास बार एसोसिएशन) वाद** (वर्ष 2010) में निर्धारित निम्नलिखित सिद्धांतों का पालन नहीं किया गया है:
  - **संरचना के संबंध में,** न्यायालय ने कहा था कि ऐसे 4 सदस्यीय खोज-सह-चयन समिति में, 2 न्यायिक सदस्य होने चाहिए।
  - **पदावधि:** न्यायालय ने कहा था कि सदस्यों का कार्यकाल पाँच या सात वर्ष का होगा।

VISION IAS

- अधिकरण के अध्यक्ष या सदस्य का निलंबन भारत के मुख्य न्यायाधीश की सहमति से ही किया जा सकता है। हालांकि, इस संबंध में वर्ष 2020 के नियमों में किसी भी प्रावधान को शामिल नहीं किया गया है।
- अधिकरणों की स्वतंत्रता के संबंध में, यह माना गया था कि सभी अधिकरणों और उसके सदस्यों के लिए प्रशासनिक समर्थन, मूल मंत्रालयों या संबंधित विभागों के बजाय विधि एवं न्याय मंत्रालय से प्राप्त होना चाहिए। इसे भी अभी लागू किया जाना शेष है।
- अधिकरण के न्यायिक सदस्य के रूप में भारतीय विधिक सेवा के सदस्यों के बजाय केवल न्यायाधीशों और अधिवक्ताओं को ही नियुक्ति किया जाना चाहिए।

अधिकरण

- अधिकरण एक अर्ध-न्यायिक निकाय होता है। भारत में इनका गठन अनुच्छेद 323-A या 323-B के अंतर्गत संसद या राज्य विधान-मंडल के अधिनियम द्वारा इनके समक्ष प्रस्तुत विभिन्न विवादों के न्यायनिर्णयन या विचारण हेतु किया जा सकता है।
- संविधान में अनुच्छेद 323A और 323B को **स्वर्ण सिंह समिति** की सिफारिश के आधार पर वर्ष 1976 में **42वें संविधान संशोधन अधिनियम** के माध्यम से अंतःस्थापित किया गया था।
  - अनुच्छेद 323-A प्रशासनिक अधिकरण से संबंधित है।
  - अनुच्छेद 323-B अन्य विषयों के लिए अधिकरणों से संबंधित है।
- ये विशेष रूप से तकनीकी विशेषज्ञता की आवश्यकता वाले विवादों के न्यायनिर्णयन में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करते हैं।
- ये सिविल प्रक्रिया संहिता और भारतीय साक्ष्य अधिनियम के तहत निर्धारित किसी भी एकसमान प्रक्रिया का पालन करने हेतु बाध्य नहीं हैं, लेकिन इनके द्वारा नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों का अनुपालन करना अनिवार्य है।
- इन्हें दीवानी न्यायालय (civil court) की कुछ शक्तियां प्राप्त होती हैं, जैसे - समन जारी करना और गवाहों को साक्ष्य प्रस्तुत करने की अनुमति प्रदान करना। इसके निर्णय कानूनी तौर पर पक्षकारों के लिए बाध्यकारी होते हैं, हालांकि इनके विरुद्ध अपील की जा सकती है।

7. पारदर्शिता और जवाबदेही (Transparency and Accountability)

7.1. सूचना का अधिकार अधिनियम {Right to Information (RTI) Act}

सुर्ख़ियों में क्यों?

हाल ही में, संसद द्वारा **सूचना का अधिकार (संशोधन) विधेयक, 2019** पारित किया गया।

RTI अधिनियम में किए गए संशोधन

- **निश्चित कार्यकाल की समाप्ति:** RTI अधिनियम के तहत, मुख्य सूचना आयुक्त (CIC) और सूचना आयुक्तों (ICs) का कार्यकाल पांच वर्षों के लिए निर्धारित किया गया है। हालिया संशोधन द्वारा इस प्रावधान को समाप्त कर दिया गया है और निर्धारित किया गया है कि केंद्र सरकार द्वारा CIC और ICs की पदावधि को अधिसूचित किया जाएगा।
- **वेतन का निर्धारण:** RTI अधिनियम के अनुसार, CIC और ICs (केंद्रीय स्तर पर) का वेतन क्रमशः मुख्य निर्वाचन आयुक्त (CEC) और निर्वाचन आयुक्तों (ECs) के वेतन के समान होगा। इसी प्रकार, राज्य मुख्य सूचना आयुक्त और राज्य सूचना आयुक्तों (राज्य स्तर पर) का वेतन क्रमशः राज्य के निर्वाचन आयुक्तों और मुख्य सचिव के समान होगा।
    - इस संशोधन के माध्यम से केंद्र और राज्य स्तर के मुख्य सूचना आयुक्त व सूचना आयुक्तों के वेतन, भत्ते एवं अन्य सेवा शर्तों का निर्धारण करने हेतु केंद्र सरकार को सशक्त बनाया गया है।

केंद्रीय सूचना आयोग के बारे में

- इसे सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005 के प्रावधानों के तहत स्थापित किया गया है।
- आयोग में एक मुख्य सूचना आयुक्त और अधिकतम दस सूचना आयुक्त (IC) होते हैं।
    - उनकी नियुक्ति एक समिति की अनुशंसा पर राष्ट्रपति द्वारा की जाती है। इस समिति की अध्यक्षता प्रधान मंत्री करते हैं तथा लोक सभा में विपक्ष के नेता और प्रधान मंत्री द्वारा नामित केंद्रीय कैबिनेट मंत्री इसके सदस्य होते हैं।
- उन्हें विधि, विज्ञान और प्रौद्योगिकी, सामाजिक सेवा, प्रबंधन, पत्रकारिता, जनसंचार या प्रशासन एवं शासन में व्यापक ज्ञान व अनुभव के साथ सार्वजनिक जीवन में प्रतिष्ठा प्राप्त व्यक्ति होना चाहिए।
- मुख्य सूचना आयुक्त और सूचना आयुक्त का कार्यकाल 5 वर्ष या 65 वर्ष की आयु प्राप्त करने तक, जो भी पहले हो, होता है। वे पुनर्नियुक्ति के लिए पात्र नहीं होते हैं।
- राष्ट्रपति कुछ स्थितियों में मुख्य सूचना आयुक्त और सूचना आयुक्त को पद से हटा सकते हैं।

संशोधन के पक्ष में तर्क

- उल्लेखनीय है कि **CEC** और **EC** के वेतन एवं भत्ते तथा अन्य सेवा शर्तें उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश के समान हैं, इसलिए, वेतन एवं भत्ते तथा अन्य सेवा शर्तों के मामले में **CIC, IC और राज्य CIC की स्थिति उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश के समकक्ष हो जाती है।**
    - जबकि, भारत निर्वाचन आयोग तथा केंद्रीय व राज्य सूचना आयोगों द्वारा निष्पादित किए जाने वाले कार्य पूर्णतः पृथक-पृथक हैं।
- प्रस्तावित संशोधनों का उद्देश्य मुख्य सूचना आयुक्तों एवं सूचना आयुक्तों और राज्य सूचना आयुक्तों के लिए वेतन, भत्ते एवं सेवा शर्तों से संबंधित नियमों के निर्माण करने हेतु RTI अधिनियम के तहत प्रावधान करना है। वर्तमान में, RTI अधिनियम, 2005 के तहत इस प्रकार के प्रावधान उपलब्ध नहीं हैं।

संशोधन के विपक्ष में तर्क

- **ये संशोधन CICs की स्थिति को कमजोर करते हैं:** मुख्य सूचना आयुक्त और मुख्य निर्वाचन आयुक्त (एवं राज्य स्तर के अधिकारियों) को एक ही स्तर पर रखा गया है, क्योंकि उच्चतम न्यायालय के अनुसार RTI तथा मतदान का अधिकार समान रूप से महत्वपूर्ण अधिकार हैं। हालाँकि, संशोधन इस स्थिति को परिवर्तित करते हैं।
- **ये संशोधन CICs और ICs की स्वतंत्रता को कमजोर करते हैं:** क्योंकि, केंद्र सरकार द्वारा CICs और ICs के कार्यकाल और वेतन का निर्धारण किया जा सकता है।
- **राज्य के अधिकार क्षेत्र का अतिक्रमण:** क्योंकि केंद्र सरकार द्वारा राज्य सूचना आयुक्तों के कार्यकाल, स्थिति और वेतन का निर्धारण किया जाएगा।
- **परामर्श का अभाव:** नागरिक समाज और राज्य सरकारों के साथ परामर्श न करने के कारण अलोकतांत्रिक प्रक्रिया को बढ़ावा मिलेगा। ज्ञातव्य है कि इसे न तो पब्लिक डोमेन में रखा गया था और न ही इन संशोधनों की अधिक संवीक्षा की गई थी।

VISION IAS

निष्कर्ष

- RTI के प्रयोगकर्ताओं पर हमलों की बढ़ती संख्या के आलोक में, सरकार सूचना के बेहतर अग्रसक्रिय प्रकटीकरण के संबंध में अपने प्रयासों को केंद्रित कर सकती है तथा भ्रष्टाचार एवं अनुचित कार्यों के प्रकटीकरण के माध्यम से शासन में ईमानदारी रखने वाले लोगों को सुरक्षा प्रदान कर सकती है।

7.1.1. 'सूचना का अधिकार' के दायरे में भारत के मुख्य न्यायाधीश का कार्यालय (CJI Under RTI)

सुर्ख़ियों में क्यों?

भारत के उच्चतम न्यायालय के **केंद्रीय लोक सूचना अधिकारी बनाम सुभाष चंद्र अग्रवाल वाद** में उच्चतम न्यायालय के पांच-न्यायाधीशों की संविधान पीठ ने घोषणा की है कि भारत के **मुख्य न्यायाधीश (CJI) का कार्यालय सूचना के अधिकार (RTI) अधिनियम के अंतर्गत एक 'सार्वजनिक प्राधिकरण'** है।

RTI और न्यायपालिका

- न्यायपालिका के साथ RTI का संबंध प्रारम्भ से ही विवाद का विषय रहा है।
- **RTI अधिनियम** द्वारा भारत के उच्चतम न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश और राज्यों के उच्च न्यायालयों के मुख्य न्यायाधीशों को RTI के प्रावधानों को लागू करने का **अधिकार प्रदान** किया गया है तथा इन सभी न्यायालयों द्वारा अपने-अपने नियमों का निर्माण किया गया है।
- हालांकि, **उच्चतम न्यायालय के नियमों ने चार प्रमुख तरीकों से RTI के प्रभाव को कम किया है।** RTI अधिनियम के विपरीत ये नियम निम्नलिखित की सुविधा प्रदान नहीं करते हैं:
  - सूचना प्रदान करने हेतु एक निश्चित समय सीमा;
  - एक अपील तंत्र;
  - सूचना प्रदान करने में विलंब या अनुचित तरीके से मना करने के लिए दंड; तथा
  - लोक हित में प्रासंगिक सूचनाओं को नागरिकों को उपलब्ध कराना।
- इसके अतिरिक्त, कई उच्च न्यायालयों द्वारा अत्यंत प्रतिकूल नियम बनाए गए हैं, जिससे किसी भी प्रकार की सूचना को प्राप्त कर पाना अत्यंत कठिन हो गया है। उदाहरण के लिए, इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने प्रत्येक सूचना की प्राप्ति हेतु उच्चतम न्यायालय द्वारा निर्धारित दस रुपये के विपरीत 500 रुपये का शुल्क निर्धारित किया है।
- संक्षिप्त में, इन नियमों ने न्यायपालिका को अपने निर्विवाद विवेक के आधार पर सूचना प्रदान करने की अनुमति प्रदान की है, जो RTI के उद्देश्य और मूल भावना के विपरीत है।
- RTI अधिनियम की धारा 23 के अंतर्गत किसी भी न्यायालय में अपील करने की अनुमति नहीं है। फिर भी, इस तथ्य से विरोधाभास उत्पन्न होता है कि भारतीय संविधान उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों को किसी भी विधि को समाप्त करने का अधिकार प्रदान करता है।
- इसके अतिरिक्त, उच्चतम न्यायालय ने कहा है कि न्यायालय के रजिस्ट्रार जनरल का निर्णय अंतिम होगा और केंद्रीय सूचना आयोग के पास किसी भी स्वतंत्र अपील पर निर्णय का अधिकार नहीं होगा।

उच्चतम न्यायालय का तर्क

क्या CJI सार्वजनिक प्राधिकरण है?

- इस निर्णय में कहा गया है कि भारत का उच्चतम न्यायालय और CJI का कार्यालय दो अलग-अलग सार्वजनिक प्राधिकरण नहीं हैं। **अनुच्छेद 124** के अनुसार CJI और अन्य न्यायाधीशों का कार्यालय उच्चतम न्यायालय के अंतर्गत शामिल होता है। इसलिए यदि उच्चतम न्यायालय एक सार्वजनिक प्राधिकरण {RTI अधिनियम की धारा 2 (h) के अनुसार} है, तो **CJI का कार्यालय** भी एक सार्वजनिक प्राधिकरण है।

न्यायाधीशों की संपत्ति की घोषणा

- इसने वर्ष 2010 के दिल्ली उच्च न्यायालय के निर्णय को वैध ठहराते हुए कहा कि CJI **न्यासीय सामर्थ्य** (fiduciary capacity) के आधार पर न्यायाधीशों की व्यक्तिगत संपत्ति की जानकारी नहीं रखता है। इसलिए, सेवारत न्यायाधीशों की व्यक्तिगत संपत्ति के विवरण का खुलासा करना उनके **निजता के अधिकार का उल्लंघन नहीं** है।

RTI अधिनियम की धारा 8(1)(J) में कहा गया है कि व्यक्तिगत सूचना, जिसका किसी भी लोक क्रियाकलाप या हित से कोई संबंध नहीं है या जिसके कारण व्यक्ति की निजता का अनुचित अतिक्रमण हो सकता है, केवल तभी सार्वजनिक की जा सकेगी जब अपीलीय प्राधिकारी संतुष्ट हो जाए कि व्यापक लोकहित में ऐसी सूचना का प्रकटीकरण उचित है।

VISION IAS

व्यक्तिगत सूचना का प्रकटीकरण

- उच्चतम न्यायालय ने निर्णय दिया है कि RTI के अंतर्गत सूचना का अधिकार **निरपेक्ष नहीं** है और इसे न्यायाधीशों की व्यक्तिगत निजता के अधिकार के साथ संतुलित होना चाहिए।
- इस प्रकार, सूचना आयुक्त को न्यायपालिका की निजता और स्वतंत्रता के अधिकार को ध्यान में रखते हुए आनुपातिकता के आधार पर सूचना का प्रकटीकरण करना चाहिए।
- इस संदर्भ में, इस निर्णय में न्यायालय द्वारा एक **'नॉन-इग्ज़ॉस्ट फैक्टर' (non-exhaustive factors)** की सूची प्रदान की गई और कहा गया कि **RTI की धारा 8 के अंतर्गत लोक हित का आकलन** करते समय लोक सूचना अधिकारी (PIO) द्वारा इस पर विचार किया जाना चाहिए, जिसमें शामिल हैं: सूचना की प्रकृति और विषय-वस्तु, गैर-प्रकटीकरण के परिणाम, अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता और आनुपातिकता आदि।
- **इसके विरुद्ध उठाए गए मुद्दे:**
  - इसके लिए अति न्यायिक कुशाग्रता की आवश्यकता होती है और माना गया कि **RTI अधिनियम की धारा 8(1)(J) के आधार पर अधिकांश PIO स्पष्ट रूप से सूचना के प्रकटीकरण से मना** कर सकते हैं और इस प्रकार यह सूचना की मांग करने वालों को उनके आदेशों के विरुद्ध अपील करने हेतु प्रोत्साहित करेगा।
  - इसके विपरीत, न्यायालय को न्यायाधीशों की व्यक्तिगत सूचना के उन पक्षों को अधिक स्पष्ट रूप से सार्वजनिक कर देना चाहिए, ताकि PIO लोकहित के लिए बिना न्यायिक निर्णय की आवश्यकता के प्रकटीकरण कर सके।

न्यायिक नियुक्तियों से संबंधित सूचना के संदर्भ में

- यहाँ, उच्चतम न्यायालय द्वारा **'इनपुट'** और **'आउटपुट'** प्रक्रिया के मध्य अंतर किया गया है। कोलेजियम रिज़ॉल्यूशन का अंतिम परिणाम 'आउटपुट' प्रक्रिया है, जबकि "इनपुट" अवलोकन, सांकेतिक कारण, आगत और डेटा होते हैं, जिनकी कॉलेजियम द्वारा जांच की जाती है। यहां, कॉलेजियम द्वारा केवल अनुशंसित न्यायाधीशों के नामों **(आउटपुट)** का प्रकटीकरण किया जा सकता है, न कि कारणों **(इनपुट)** का।
- साथ ही, उच्चतम न्यायालय ने कहा कि कॉलेजियम के विचार-विमर्श से संबंधित सूचनाओं को **तृतीय-पक्ष से संबद्ध गोपनीय सूचना** के रूप में माना जाता है।
- ऐसे मामलों में, PIO को RTI अधिनियम की धारा 11 में अधिदेशित अनिवार्य प्रक्रिया का पालन करना चाहिए। अर्थात्, सूचना के लिए RTI अनुरोध के बारे में सबसे पहले तृतीय पक्ष को - संबंधित न्यायाधीश - को नोटिस जारी किया जाना चाहिए। PIO को निर्णय लेने से पूर्व तृतीय पक्ष के मत पर विचार करना चाहिए।
- **इसके विरुद्ध उठाए गए मुद्दे:**
  - यह **एस. पी. गुप्ता बनाम भारत संघ और अन्य वाद (1981)** में उच्चतम न्यायालय के दावे के विपरीत है, जिसमें कहा गया था कि कानून मंत्री या केंद्र सरकार के अन्य उच्च-स्तरीय पदाधिकारियों, उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश तथा राज्य सरकार और भारत के मुख्य न्यायाधीश के मध्य नियुक्ति और गैर-नियुक्ति आदि के संबंध में होने वाले पत्राचार से संबंधित दस्तावेज़ को प्रकटीकरण से **प्रतिरक्षा के लिए संरक्षित नहीं माना** जा सकता है।

निष्कर्ष

उच्चतम न्यायालय ने सटीक विश्लेषण किया है कि "पारदर्शिता और जवाबदेही परस्पर संबद्ध होनी चाहिए"। RTI के अंतर्गत बढ़ती पारदर्शिता न्यायिक स्वतंत्रता के समक्ष कोई खतरा उत्पन्न नहीं करती है। इस प्रकार, यह निर्णय, न्यायिक व्यवस्था में लोगों के विश्वास को बढ़ावा देने में सहायक सिद्ध होगा।

7.2. गैर-सरकारी संगठनों का विनियमन (NGOs Regulation)

सुर्ख़ियों में क्यों?

हाल ही में, गैर-सरकारी संगठनों (NGOs) के बेहतर विनिमयन हेतु संसद द्वारा **विदेशी अभिदाय (विनियमन) संशोधन विधेयक, 2020 {Foreign Contribution (Regulation) Amendment Bill, 2020}** पारित किया गया है।

NGOs को विनियमित करने की आवश्यकता

- **जवाबदेही सुनिश्चित करना:** पूर्व में, केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो (CBI) और आसूचना ब्यूरो की रिपोर्टों सहित विभिन्न रिपोर्टों में वृहत संख्या में NGOs द्वारा फंड्स के दुरुपयोग की पुष्टि की गयी है, जिसकी कुल लागत भारत के सकल घरेलू उत्पाद का लगभग 2-3% तक हो सकती है।
- **NGOs की संगठनात्मक संरचनाओं की स्वतंत्रता और विश्वसनीयता:** उदाहरण के लिए, बोर्ड की भूमिका और संरचना, वित्तीय लेखांकन, प्रबंधन संरचना आदि के बारे में प्रायः सवाल उठाए जाते हैं।

- **संवैधानिक अधिदेश:** चूंकि NGOs सार्वजनिक निधि प्राप्त करते हैं, अतः लोगों को RTI (अनुच्छेद 21 के अंतर्गत प्राप्त) के तहत उन निधियों के उपयोग के बारे में जानने का अधिकार है।
- **सामाजिक सेवा वितरण अभिकर्ता के रूप में NGOs की प्रभावशीलता:** सरकार द्वारा प्रदत्त भूमि पर स्थापित अस्पताल और शैक्षणिक संस्थान जैसे कई निकाय, अब RTI अधिनियम की धारा 2 (h) के तहत सार्वजनिक प्राधिकरण की परिभाषा में शामिल होंगे।
- **पारदर्शिता लाना:** CBI ने उच्चतम न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत अपनी एक रिपोर्ट में कहा है कि देश भर के 29 लाख पंजीकृत गैर-सरकारी संगठनों में से मात्र 10% ने अपनी वार्षिक आय और व्यय को दर्ज किया है।

संशोधन में शामिल प्रावधान

- **कुछ मामलों में विदेशी अंशदान को स्वीकार करने पर प्रतिबंध:** इस अधिनियम के तहत चुनाव के उम्मीदवारों, समाचार पत्र के संपादकों या प्रकाशकों, न्यायाधीशों, सरकारी कर्मचारियों, विधान मंडल के सदस्यों को किसी भी प्रकार के विदेशी अंशदान को स्वीकार करना निषिद्ध है।
  - यह संशोधन इस सूची में लोक सेवकों को भी शामिल करता है। लोक सेवकों में ऐसा व्यक्ति शामिल होता है, जो सरकार के अधीन सेवारत या वेतनभोगी होता है, या किसी भी लोक कर्तव्य के निर्वहन के लिए उसे सरकार द्वारा पारिश्रमिक दिया जाता है।
- **विदेशी अभिदाय (अंशदान) का हस्तांतरण:** इस अधिनियम के तहत, विदेशी अभिदाय को किसी अन्य व्यक्ति को तब तक हस्तांतरित नहीं किया जा सकता, जब तक वह व्यक्ति विदेशी अभिदाय स्वीकार करने के लिए पंजीकृत नहीं हो जाता।
  - यह संशोधन किसी अन्य व्यक्ति को विदेशी अभिदाय के हस्तांतरण पर रोक लगाता है।
- **पंजीकरण के लिए आधार, पासपोर्ट और OCI (प्रवासी भारतीय नागरिक) कार्ड:** इस संशोधन में कहा गया है कि पूर्व अनुमति या पंजीकरण के इच्छुक किसी भी व्यक्ति को अपने सभी पदाधिकारियों, निदेशकों आदि की आधार संख्या प्रदान करनी होगी। किसी विदेशी व्यक्ति के मामले में उन्हें पहचान के लिए पासपोर्ट या OCI कार्ड की एक प्रति प्रदान करनी होगी।
- **FCRA खाता:** संशोधन में वर्णित है कि विदेशी अंशदान **बैंक द्वारा 'FCRA खाते' के रूप में** निर्दिष्ट खाते में ही प्राप्त किया जा सकता है। यह खाता केवल भारतीय स्टेट बैंक, नई दिल्ली की शाखा में ही खोला जा सकता है, जैसा कि केंद्र सरकार द्वारा अधिसूचित किया गया है।
- **विदेशी अंशदान के उपयोग में प्रतिबंध:** अधिनियम के तहत, यदि विदेशी अंशदान को स्वीकार करने वाला व्यक्ति **अधिनियम के किसी भी प्रावधान का उल्लंघन करने का दोषी** पाया जाता है, तो अप्रयुक्त विदेशी अंशदान का उपयोग **केवल केंद्र सरकार की पूर्व अनुमति** के साथ ही किया जा सकता है।
  - संशोधन में उपबंध किया गया है कि सरकार **संक्षिप्त जांच (summary inquiry) , या ऐसी किसी लंबित जांच के आधार पर** ऐसे व्यक्तियों के लिए **अप्रयुक्त विदेशी अंशदान के उपयोग को भी प्रतिबंधित** कर सकती है।
- **लाइसेंस का नवीनीकरण:** इस अधिनियम के तहत, पंजीकरण का प्रमाण-पत्र प्राप्त करने वाले प्रत्येक व्यक्ति को अवधि की समाप्ति के छह माह के भीतर प्रमाण-पत्र को नवीनीकृत कराना होगा।
  - इस संशोधन के अनुसार, सरकार यह सुनिश्चित करने के लिए **प्रमाण-पत्र को नवीनीकृत करने से पूर्व जांच** कर सकती है कि व्यक्ति ने अधिनियम में निर्दिष्ट सभी शर्तों का अनुपालन किया है।
- **प्रशासनिक उद्देश्यों के लिए विदेशी अंशदान के उपयोग में कमी:** इस अधिनियम के तहत, विदेशी अंशदान प्राप्त करने वाले व्यक्ति को केवल उसी उद्देश्य के लिए इसका उपयोग करना चाहिए, जिसके लिए अंशदान प्राप्त हुआ है। इसके अतिरिक्त, उन्हें **50 प्रतिशत से अधिक अंशदान का उपयोग प्रशासनिक व्ययों को पूर्ण करने के लिए नहीं** करना चाहिए।
  - संशोधन ने इस **सीमा को घटाकर 20 प्रतिशत** तक कर दिया है।
- **पंजीकरण का निलंबन:** इस अधिनियम के तहत, सरकार **180 दिनों से अनधिक की अवधि के लिए किसी व्यक्ति के पंजीकरण को निलंबित** कर सकती है।
  - संशोधन में प्रावधान किया गया है कि इस प्रकार के **निलंबन को आगे और 180 दिनों तक बढ़ाया** जा सकता है।

FCRA में संशोधन के संदर्भ में चिंता

- **वित्तीयन तक पहुंच का अभाव:** कई NGOs विदेशी निधियों का उपयोग नहीं कर पाएंगे, क्योंकि जिस योजना के तहत वे **अनुदानकर्ता एजेंसियों और बड़े NGOs** से ये निधियां प्राप्त करते हैं, जिसे **पुनरानुदान (regranting)** के रूप में जाना जाता है, को प्रतिबंधित कर दिया गया है।

VISION IAS

- **अन्वेषण पर प्रतिबंध:** NGOs के प्रशासनिक कार्यों पर व्यय होने वाली राशि को 50 प्रतिशत से घटाकर 20 प्रतिशत कर दिया गया है, इसका तात्पर्य है कि कई छोटे NGOs पर्याप्त कामगारों को रोजगार नहीं दे पाएंगे, न ही विशेषज्ञों को नियोजित कर सकेंगे तथा उन रणनीतियों को क्रियान्वित करने में असमर्थ होंगे, जिनकी NGOs के विकास हेतु आवश्यकता होती है।
- **आधार की अनिवार्यता:** आधार पर उच्चतम न्यायालय के निर्णय में, व्यक्तिगत आधार डेटा की अधिक से अधिक गोपनीयता सुनिश्चित करने और सरकारों की पहुंच को प्रतिबंधित करने के लिए कहा गया था, जबकि **संशोधन के तहत आधार की अनिवार्यता इस निर्णय का उल्लंघन** करती है।
- **बेहतर परीक्षण का अभाव:** उपर्युक्त संशोधनों के लिए विधेयक का प्रारूप तब तक **सार्वजनिक** नहीं किया गया था, जब तक कि इसे लोक सभा में पुर:स्थापित नहीं कर दिया गया था।
- **सामाजिक कल्याण योजनाओं के वितरण में बाधा:** शिक्षा, स्वास्थ्य व लोगों की आजीविका के क्षेत्रों में इसके दूरगामी परिणाम होंगे, क्योंकि NGOs इन क्षेत्रों में सरकारी योजनाओं के वितरण के लिए अंतिम व्यक्ति तक संयोजकता प्रदान करते हैं।

विदेशी अभिदाय (विनियमन) अधिनियम, 2010 {Foreign Contribution (Regulation) Act, 2010 (FCRA)}

- यह अधिनियम विदेशी अंशदान को स्वीकार एवं उपयोग करने वाले व्यक्तियों या संगठनों और कंपनियों को विनियमित करता है।
  - विदेशी स्रोत द्वारा किसी विदेशी मुद्रा, प्रतिभूति या वस्तु (एक निर्दिष्ट मूल्य से परे) के रूप में दान या अंतरण को विदेशी अंशदान कहा जाता है।
- **FCRA में किए गए संशोधनों के उद्देश्य:**
  - गैर-सरकारी संगठनों को विनियमित करने और उन्हें अधिक जवाबदेह एवं पारदर्शी बनाने के लिए।
  - विदेशी निधियों द्वारा समर्थित धार्मिक रूपांतरणों (धर्म परिवर्तन) को विनियमित करने के लिए।
  - यह सुनिश्चित करने के लिए कि विदेशी धन का उपयोग राष्ट्रीय हितों के विरुद्ध या देश विरोधी गतिविधियों के लिए नहीं किया जा रहा है।

NGOs के विनियमन के लिए अन्य विनियमन

- **विदेशी मुद्रा प्रबंधन अधिनियम (Foreign Exchange Management Act: FEMA)**
  - इसे विदेशी व्यापार और भुगतान को सुविधाजनक बनाने के उद्देश्य से **विदेशी विनिमय से संबंधित कानून को समेकित और संशोधित करने के लिए** प्रस्तुत किया गया था।
  - वित्त मंत्रालय के अंतर्गत आने वाले कुछ NGOs भी FEMA के तहत पंजीकृत हैं।
- **श्रम कानून:** 20 से अधिक कर्मचारियों को नियुक्त करने वाले किसी भी NGO को कर्मचारी भविष्य निधि का अनुपालन करना होगा (20 से कम कर्मचारियों वाले संगठनों के लिए अनुपालन स्वैच्छिक होगा)।
- **GST कानून:** यदि किसी वित्तीय वर्ष में किसी इकाई का वस्तु या वाणिज्यिक सेवाओं का कारोबार दो मिलियन रुपये से अधिक है तो यह कानून लागू होगा।
- **प्रत्यायन (Accreditation):** हाल ही में, विजय कुमार समिति की अनुशंसाओं के आधार पर NGOs के लिए नए प्रत्यायन दिशा-निर्देश जारी किए गए थे:

संबंधित तथ्य

सूचना के अधिकार के अंतर्गत गैर-सरकारी संगठन

हाल ही में, उच्चतम न्यायालय ने यह निर्णय दिया कि सरकार से फंड (धन) प्राप्त करने वाले गैर-सरकारी संगठन (NGOs) सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005 के दायरे में शामिल होंगे।

इस निर्णय से संबद्ध मुद्दे

- सरकार ऐसे विनियमों का प्रयोग असहमति व्यक्त करने वाले और अधिकार आधारित समर्थन समूहों को लक्षित करने के लिए कर सकती है।
- छोटे गैर-सरकारी संगठनों में इस तरह के कानूनी मानदंडों और विनियमों की पुष्टि करने की क्षमता का अभाव हो सकता है।

VISION IAS

आगे की राह

जिस प्रकार **नागरिक समाज संगठन (civil society organisations)** दूसरों से जवाबदेही की अपेक्षा करते हैं, उसी प्रकार उनका भी नैतिक दायित्व है कि वे स्वयं को जवाबदेह और पारदर्शी बने एवं उच्चतम मानकों का अनुपालन करें। हालांकि, **विनियमन को उनकी कार्यशैली की स्वतंत्रता के साथ संतुलित होना** चाहिए। कुछ सुझाव निम्नलिखित हैं:

- **विजय कुमार समिति की अनुशंसाएं:**
  - गैर-सरकारी संगठनों के संबंध में **आयकर अधिनियम** और **FCRA** के प्रयोज्य प्रावधानों के निर्बाध संचालन के लिए पंजीकरण प्रक्रिया का आधुनिकीकरण किया जाए।
  - NGO का विवरण उपलब्ध डेटाबेस जानकारी के रूप में उपलब्ध कराया जाना चाहिए।
- **द्वितीय प्रशासनिक सुधार आयोग (ARC) की अनुशंसाएं:**
  - FCRA को विकेंद्रीकृत और राज्य सरकारों/जिला प्रशासन को प्रत्यायोजित कर दिया जाना चाहिए।
  - कानून की **व्यक्तिनिष्ठ व्याख्या और इसके संभावित दुरुपयोग** से बचने के लिए विधायिका के उद्देश्य व स्वयंसेवी क्षेत्रक की कार्यप्रणाली के मध्य उत्तम संतुलन स्थापित किया जाना चाहिए।

7.3. शासकीय गुप्त बात अधिनियम (Official Secrets Act: OSA)

सुर्खियों में क्यों?

हाल ही में, एक मामले में शासकीय गुप्त बात अधिनियम को लागू किया गया था।

शासकीय गुप्त बात (गोपनीयता) अधिनियम के बारे में

- यह भारत का **जासूसी-विरोधी (anti-espionage) अधिनियम** है। इसे **1923** में औपनिवेशिक काल के दौरान लागू किया गया था, जिसका उद्देश्य ऐसे सभी कार्यों पर प्रतिबंध आरोपित करना था जो किसी भी प्रकार से शत्रु राज्यों को सहायता प्रदान करते थे।
- स्वतंत्रता के पश्चात् भी इस अधिनियम को यथावत जारी रखा गया। **सरकारी कर्मचारियों और नागरिकों** पर लागू यह अधिनियम जासूसी, राजद्रोह और **राष्ट्र की अखंडता** के समक्ष विद्यमान अन्य संभावित खतरों से निपटने हेतु एक रूपरेखा प्रदान करता है।
- यह अधिनियम मुख्यतः दो पहलुओं से संबंधित है:
  - **धारा 3 -** जासूसी या गुप्तचरी; और
  - **धारा 5 -** सरकार की अन्य गोपनीय सूचनाओं का प्रकटीकरण। गोपनीय सूचना के अंतर्गत कोई भी शासकीय कोड, पासवर्ड, स्केच, योजना, मॉडल, लेख, नोट, दस्तावेज़ या सूचना शामिल हो सकती है। इस अधिनियम के तहत सूचना को संप्रेषित करने वाले व्यक्ति और सूचना प्राप्त करने वाले दोनों को दंडित किया जा सकता है।
- इनके अतिरिक्त, इसमें प्रतिबंधित/निषिद्ध क्षेत्रों में नियोजित सशस्त्र बलों से संबंधित सूचनाओं का प्रकटीकरण इत्यादि दंडनीय अपराध के रूप में वर्णित है।
- दोषी पाए जाने वाले किसी भी व्यक्ति को 14 वर्ष तक का कारावास, जुर्माना या दोनों से दंडित किया जा सकता है।

शासकीय गुप्त बात अधिनियम संबंधी मुद्दे

- **स्पष्टता का अभाव:** इस अधिनियम में, **"गुप्त बात (secret)"** या **"शासकीय गुप्त बात (official secrets)"** शब्दों या किसी भी चिन्हित मानदंड को परिभाषित नहीं किया गया है। लोक सेवक किसी भी सूचना को "गुप्त बात" के रूप में परिभाषित कर उसे प्रकट करने से मना कर सकते हैं।
- **सूचना के अधिकार (RTI) अधिनियम से टकराव:** RTI अधिनियम की **धारा 22**, OSA सहित अन्य कानूनों के प्रावधानों की तुलना में इसके प्रावधानों की सर्वोच्चता का प्रावधान करती है। यह OSA के प्रावधानों के साथ किसी बात के असंगत होने की स्थिति में भी RTI अधिनियम को एक अधिभावी (overriding) प्रभाव प्रदान करता है। हालांकि, RTI अधिनियम की धारा 8 और 9 के तहत, सरकार सूचना का प्रकटीकरण करने से मना कर सकती है। इस प्रकार, यदि सरकार प्रभावी तरीके से OSA की धारा 6 के तहत किसी दस्तावेज को "गुप्त बात" के रूप में वर्गीकृत करती है, तो उस दस्तावेज को RTI अधिनियम के दायरे से बाहर रखा जा सकता है।
- **संदेश प्रदाता की असुरक्षा:** "राष्ट्रीय सुरक्षा" या सरकार की "स्थिरता" या "शासकीय गोपनीयता" के आधार पर संदेशवाहक को लक्षित करने और व्हिसलब्लोअर को अपराधी घोषित करने का प्रयास वस्तुतः अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता और लोगों के जानने के अधिकार पर कुठाराघात है।
- **पत्रकारिता संबंधी नैतिकता के विरुद्ध:** सरकार द्वारा इसके आधार पर पत्रकारों का उत्पीड़न किया जाता है और उन्हें अपने स्रोतों का प्रकटीकरण करने हेतु बाध्य किया जाता है।

VISION IAS

अधिनियम की समीक्षा करने हेतु किए गए प्रयास

- **विधि आयोग:** आयोग ने **'राष्ट्रीय सुरक्षा के विरुद्ध अपराध'** पर इसकी रिपोर्ट में अवलोकन किया है कि "किसी परिपत्र को केवल गुप्त या गोपनीय के रूप में चिन्हित करने मात्र से ही उसे इस कानून के प्रावधानों के दायरे में नहीं लाया जाना चाहिए, यदि उसका प्रकाशन लोक हित में है और राष्ट्रीय आपातकाल एवं राज्य हित का कोई प्रश्न निहित नहीं है"। हालांकि, विधि आयोग ने **इस अधिनियम में किसी भी प्रकार के संशोधन की अनुशंसा नहीं की है।**
- **द्वितीय प्रशासनिक सुधार आयोग (2006):** इसने अनुशंसा की कि OSA को निरस्त किया जाना चाहिए और राष्ट्रीय सुरक्षा अधिनियम में एक अध्याय (जिसमें शासकीय गुप्त बात से संबंधित प्रावधान शामिल हों) को जोड़कर इसे प्रतिस्थापित किया जा सकता है।
- **केंद्रीय गृह मंत्रालय के तहत गठित एक उच्च स्तरीय पैनल (2015)** ने 16 जून 2017 को मंत्रिमंडलीय सचिवालय को अपनी रिपोर्ट सौंपी, जिसमें अनुशंसा की गई थी कि **OSA को अधिक पारदर्शी और RTI अधिनियम के अनुरूप** बनाया जाए। किन्तु इस समिति की रिपोर्ट पर कोई कार्रवाई नहीं की गई है।
- **न्यायपालिका का दृष्टिकोण:** 2009 में दिल्ली उच्च न्यायालय ने निर्णय दिया कि केवल "गुप्त बात" के रूप में चिन्हित किसी दस्तावेज़ के प्रकाशन मात्र से ही कोई पत्रकार OSA के तहत दोषी नहीं होगा।

इस अधिनियम को लागू किए जाने संबंधी प्रमुख दृष्टांत

- **कुमार नारायण जासूस वाद (1985):** प्रधानमंत्री कार्यालय और राष्ट्रपति सचिवालय के 12 पूर्व स्टाफ सदस्यों को 10 वर्ष के कारावास की सजा से दंडित किया गया।
- **ISRO जासूसी वाद:** अवैध लाभ प्राप्ति हेतु पाकिस्तान को रॉकेट और क्रायोजेनिक तकनीक से संबंधित सूचनाएं प्रदान करने के कथित आरोप के लिए वैज्ञानिक एस. नांबी नारायण के विरुद्ध।
- **इफ्तिखार गिलानी वाद:** पाकिस्तान के लिए जासूसी का कार्य करने के आरोप में कश्मीर टाइम्स का पत्रकार जिसे 2002 में गिरफ्तार किया गया था।
- **माधुरी गुप्ता वाद:** पूर्व राजनयिक जिसे ISI को संवेदनशील सूचनाएं प्रदान करने के आरोप में तीन वर्ष के कारावास की सजा सुनाई गई थी।

आगे की राह

- इस अधिनियम को या तो निरसित किया जा सकता है या RTI अधिनियम जैसे अन्य अधिनियमों के साथ इसका विलय किया जा सकता है।
- इसके अतिरिक्त, विभिन्न कार्यवाहियों और कानून के अनुसार परिभाषित "गुप्त बात" के आधार पर वस्तुनिष्ठ मापदंडों का निर्माण किया जाना चाहिए।
- राज्य की सुरक्षा और अखंडता के प्रति खतरों को भारत के संविधान द्वारा प्रदत्त लोगों के मूल अधिकारों के साथ संतुलित किए जाने की आवश्यकता है।

7.4. आधार (Aadhar)

सुर्ख़ियों में क्यों?

हाल ही में, आधार के लागू होने के दसवें वर्ष पर, एक डेवलपमेंट कंसल्टिंग फर्म **डालबर्ग** द्वारा 1,67,000 भारतीयों को कवर करते हुए **"स्टेट ऑफ़ आधार: ए पीपल्स पर्सपेक्टिव"** नामक रिपोर्ट जारी की गई है। यह रिपोर्ट अन्य राष्ट्रों को भी सुभेद्य लोगों के लिए सार्वजनिक सेवाओं में सुधार के संबंध में मूल्यवान सीख प्रदान करती है।

आधार के बारे में

- **आधार** भारत के सभी निवासियों के लिए **भारतीय विशिष्ट पहचान प्राधिकरण (UIDAI)** द्वारा जारी **12 अंकों की एक विशिष्ट पहचान संख्या** है।
  - आधार अधिनियम, 2016 {आधार (वित्तीय और अन्य सब्सिडी, लाभ और सेवाओं के लक्षित वितरण) अधिनियम, 2016} के प्रावधानों के तहत स्थापित UIDAI एक सांविधिक प्राधिकरण है। UIDAI, इलेक्ट्रॉनिकी और सूचना प्रौद्योगिकी मंत्रालय (MeitY) के तहत कार्य करता है।
- आधार में बायोमेट्रिक डेटा के साथ चार प्रकार की व्यक्तिगत जानकारी, यथा- नाम, आयु, लिंग और पता को समाविष्ट किया जाता है।
- इसके अतिरिक्त, आधार में **वर्चुअल आई.डी.** जैसी नई विशेषताओं को शामिल किया गया है जो व्यक्ति की निजता को सुरक्षित रखने में सहायता करती है।

VISION IAS

- आधार का एक महत्वपूर्ण उद्देश्य कल्याणकारी सेवाओं पर निर्भर देश के बहुसंख्यक निवासियों को कुशल, पारदर्शी और लक्षित तरीके से सेवा वितरण करने हेतु राज्य की क्षमता में सुधार करना रहा है।

इस रिपोर्ट के मुख्य निष्कर्ष

- **आधार प्राप्त करना - नामांकन और अद्यतन:**
  - **सकारात्मक पक्ष:** वर्तमान में आधार भारत में पहचान (ID) हेतु सर्वाधिक लोकप्रिय दस्तावेज है, जिसने अनुमानित 65-70 मिलियन व्यक्तियों को प्रथम पहचान दस्तावेज प्रदान किया है। कुछ राज्यों में 99% से अधिक आधार नामांकन स्तर प्राप्त कर लिया गया है। वहीं असम और मेघालय जैसे राज्यों में अपवादस्वरूप नामांकन स्तर 50% से भी कम बना हुआ है।
  - **चिंताएं:** वयस्कों और बच्चों के एक बड़ी संख्या को अभी भी आधार प्राप्त नहीं हुआ है। वहीं आधार में नामांकित लोगों में से कुछ की आई.डी. में त्रुटियां विद्यमान हैं तथा अनेक लेन-देनों के संबंध में फिंगरप्रिंट प्रमाणीकरण विफल रहा है।
- **आधार का उपयोग:**
  - **सकारात्मक पक्ष:** भारत में आधार एक डिफ़ॉल्ट आई.डी. बन गया है। जिनके पास आधार है, वे नियमित रूप से और कई सेवाओं में इसका उपयोग कर सकते हैं। वर्ष 2019 के इस संस्करण में 80% उत्तरदाताओं ने बताया कि आधार ने सरकार द्वारा वित्त पोषित कल्याणकारी सेवाओं की विश्वसनीयता में सुधार किया है।
  - **चिंताएं:** फिर भी, हाशिए पर स्थित समूहों द्वारा आधार-संबंधी समस्याओं के कारण सेवाओं से बहिष्करण का सामना किया जा रहा है। इसके अतिरिक्त, लगभग 34% भारतीयों ने अधिकाधिक सेवाओं से आधार को जोड़ने के संबंध में चिंताएं व्यक्त की हैं और इस प्रावधान के कारण उनमें किसी सेवा से वंचित होने का भय बना हुआ है। उदाहरण के लिए, आधार संबंधी कठिनाइयों के कारण अनुमानित 15 मिलियन बच्चे मध्याह्न भोजन से वंचित हो गए थे।
- **धारणाएं, संतुष्टि और विश्वास:**
  - **सकारात्मक पक्ष:** 90% लोगों का विश्वास है कि उनका डेटा आधार प्रणाली में सुरक्षित है और कल्याणकारी योजनाओं के 61% लाभार्थियों का विश्वास है कि आधार ने अन्य लोगों को उनके लिए निर्धारित लाभों को प्राप्त करने से रोका है।
  - **चिंताएं:** हालांकि, कुछ लोग अपने आधार के संभावित दुरुपयोग होने के संबंध में चिंतित हैं। उदाहरण के लिए, 2% लोगों द्वारा धोखाधड़ी का सामना किया गया है और इसके लिए उन्होंने आधार को जिम्मेदार ठहराया है, जिसके कारण आधार के प्रति उनके विश्वास में कमी आई है।
- **विभिन्न राज्यों में उपयोगकर्ताओं का भिन्न-भिन्न अनुभव:** आधार का उपयोग और उपयोग की जाने वाली सेवाओं की आवृत्ति दोनों के संबंध में राज्यों में भिन्नताएं विद्यमान हैं। आधार का प्रदर्शन वस्तुतः कार्यान्वयन (जैसे- नामांकन केंद्रों की संख्या) और स्थानीय अवसंरचना (जैसे- मोबाइल डेटा कनेक्टिविटी) दोनों से संबंधित कारकों से प्रभावित होता है।

अन्य निष्कर्ष

- 95% वयस्कों और 75% बच्चों के पास आधार है।
- 8% लोगों (अनुमानित 102 मिलियन लोग) के पास आधार नहीं है।
- 80% लाभार्थियों का मानना है कि आधार ने PDS राशन, मनरेगा तथा सामाजिक पेंशन को और अधिक विश्वसनीय बना दिया है।

संबंधित तथ्य: आधार प्रमाणीकरण नियम (Aadhaar Authentication Rules)

हाल ही में, सुशासन (समाज कल्याण, नवाचार, ज्ञान) के लिए आधार प्रमाणीकरण नियम, 2020 को अधिसूचित किया गया।

इन नियमों के बार में

- इन नियमों के अनुसार, केंद्र सरकार निम्नलिखित उद्देश्यों के लिए अनुरोध करने वाली संस्थाओं को आधार प्रमाणीकरण की अनुमति दे सकती है-
  - सुशासन सुनिश्चित करने के लिए डिजिटल प्लेटफार्मों का उपयोग;
  - समाज कल्याण के लाभों के अपव्यय को रोकना; तथा
  - नवाचार को बढ़ावा और ज्ञान का प्रसार करना।
- अब तक, सरकार ने सार्वजनिक वितरण प्रणाली जैसे कुछ कार्यक्रमों के अंतर्गत समाज कल्याण के लाभों के वितरण के लिए आधार नंबर के प्रयोग की अनुमति दी है। हालाँकि, ये नए नियम कृषि, शिक्षा, स्वास्थ्य योजनाओं आदि के लिए आधार के प्रयोग को विस्तार प्रदान करते हैं।
- प्रमाणीकरण सेवाओं का लाभ उठाने के लिए, प्रत्येक सरकारी विभाग को भारतीय विशिष्ट पहचान प्राधिकरण (UIDAI) की मंजूरी

VISION IAS

लेनी होगी।

- इसके अतिरिक्त, किसी निजी संस्था की बजाए केवल सरकारी एजेंसियों को ही आधार प्रमाणीकरण सेवाओं का उपयोग करने की अनुमति होगी।
    - यह वर्ष 2016 के उच्चतम न्यायालय के निर्णय के अनुरूप है, कि आधार का उपयोग **केवल सरकारी सब्सिडी योजनाओं के लाभार्थियों को प्रमाणित करने के लिए** किया जा सकता है।

इन नियमों के अपेक्षित लाभ

- **ग्राहक केंद्रित:** परिवहन मंत्रालय ड्राइविंग लाइसेंस को नवीनीकृत करने के लिए आधार प्रमाणीकरण की अनुमति ले सकता है। ड्राइविंग लाइसेंस की संपर्क रहित डिलीवरी हो सकती है, जो विशेष रूप से कोविड-19 संकट के दौरान नागरिकों की सहायता करेगी, क्योंकि उन्हें अब शारीरिक (भौतिक) रूप से परिवहन कार्यालय में उपस्थित नहीं होना पड़ेगा।
- **फ़र्ज़ी लाइसेंस की पहचान करना:** उदाहरणस्वरुप- आधार प्रमाणीकरण से परिवहन मंत्रालय को नकली या प्रतिलिपि ड्राइविंग लाइसेंसों को निरस्त करने में सहायता मिलेगी।

आगे की राह

- सेवाओं के संबंध में आधार को अनिवार्य करने संबंधी प्रत्येक निर्णय को सावधानीपूर्वक लिया जाना चाहिए, क्योंकि आधार को अनिवार्य बनाने से कल्याणकारी योजनाओं और अन्य सेवाओं से लोगों का बहिष्करण हो सकता है।
- आधार से संबंधित प्रक्रियाओं में सुधार समाज के सबसे सुभेद्य वर्गों को ध्यान में रखते हुए कुशल प्रणालियों को डिजाइन करके किया जाना चाहिए। जैसे-जैसे अधिक सेवाएं आधार से जुड़ती जाएँगी, वैसे ही आसान पहुँच के साथ-साथ बाधा रहित अद्यतन और प्रमाणीकरण कार्य अधिक महत्वपूर्ण होते जाएंगे।
- भिन्न-भिन्न राज्यों द्वारा आधार को भिन्न-भिन्न तरीकों से लागू किया गया है, जो एक-दूसरे की सफल प्रथाओं के आधार पर नवाचार करने और सीखने का अवसर प्रदान करती हैं।

8. शासन (Governance)

8.1. सरकारी विज्ञापनों का विनियमन (Regulation of Government Advertisements)

सुर्ख़ियों में क्यों?

हाल ही में, कुछ राज्यों ने सरकारी विज्ञापनों के विषय में उच्चतम न्यायालय के दिशा-निर्देशों को लागू करने के लिए समितियों के गठन के संबंध में सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय के पत्र का प्रत्युत्तर दिया है।

सरकारी विज्ञापनों को विनियमित करने की आवश्यकता

- **निहित स्वार्थों के प्रयोजन का प्रदर्शन:** जनहित की पूर्ति के विपरीत, कई सरकारी विज्ञापन राजनीतिक व्यक्तित्व और दलों का महिमामंडन करते हैं।
- **सार्वजनिक उद्देश्य के संबंध में स्पष्टता का अभाव:** नागरिकों के लिए सरकारी संदेश और मतदाताओं के लिए राजनीतिक संदेश के मध्य अत्यल्प अंतर होता है।
- **लोकतांत्रिक व्यवस्था के विरुद्ध:** सत्तारुढ़ सरकार विशेष रूप से निर्वाचनों से पूर्व ऐसे विज्ञापनों का उपयोग करके अन्य दलों और प्रत्याशियों की तुलना में अधिक लाभ अर्जित करती है।
    - यह सरकारों को प्रकाशनों और मीडिया संगठनों को संरक्षण देने की भी अनुमति प्रदान करता है, ताकि विज्ञापन जानकारी के **चयनात्मक प्रसार** द्वारा अनुकूल मीडिया कवरेज प्राप्त हो सके।
- **लागतों में घातांकी वृद्धि:** सूचना के अधिकार के तहत दायर किए गए विभिन्न आवेदनों के माध्यम से प्राप्त जानकारी से ज्ञात होता है कि हाल के दिनों में प्रत्येक चुनावी वर्ष में विज्ञापनों पर किए गए सरकारी व्यय में लगभग 40% की वृद्धि हुई है।

कार्यान्वयन की स्थिति

- इन निर्देशों के अनुसरण में, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय ने एक आदेश जारी किया, जिसके अनुसार-
    - उच्चतम न्यायालय के दिशा-निर्देश सरकार द्वारा प्रायोजित विज्ञापनों में अनुमानित सामग्री को विनियमित करने के लिए एक कानून लागू होने तक एक **स्थानपन्न व्यवस्था** के रूप में कार्य करेंगे।
    - केंद्र में **तीन सदस्यीय समिति** का गठन किया जाएगा तथा ऐसी ही समिति समानान्तर रूप से राज्य स्तर पर भी स्थापित की जाएगी, जिसे संबंधित राज्य सरकारों द्वारा गठित किया जाएगा।
- **समिति की नियुक्ति:**
    - केंद्र सरकार ने वर्ष 2016 में एक समिति का गठन किया था। हालांकि, कथित तौर पर कुछ सदस्यों के सत्तारुढ़ राजनीतिक दल से संबद्ध होने के कारण आलोचनाएँ हुई थीं।
    - राज्य सरकारों से भी इसी प्रकार की समितियों के गठन की अपेक्षा थी, हालाँकि कर्नाटक, गोवा, मणिपुर, मिज़ोरम और नागालैंड जैसे कुछ राज्यों को छोड़कर अधिकांश राज्यों में न तो ऐसी कोई समिति गठित की गई तथा न ही उन्होंने उसके गठन की प्रक्रिया ही आरंभ की है।
- **हित संघर्ष:** सरकार ने पूर्ववर्ती विभागों को एकीकृत करते हुए **ब्यूरो ऑफ़ आउटरीच एंड कम्युनिकेशन (BOC)** का गठन किया है। इसे विज्ञापनों की जांच करने और समिति को उच्चतम न्यायालय के दिशा-निर्देशों के किसी भी कथित उल्लंघन की रिपोर्ट करने हेतु अधिदेशित किया गया है। इस प्रकार, यह समिति सरकारी निकाय के इनपुट पर निर्भर हो जाती है, जो समिति की स्वायत्तता के विरुद्ध है।
- **मानदंडों का उल्लंघन:** विभिन्न राज्य सरकारों ने उच्चतम न्यायालय के दिशा-निर्देशों की अवहेलना की है, जैसे कि- छत्तीसगढ़ में विकास यात्रा को सरकारी धन का उपयोग करके विज्ञापित किया गया था, जिसमें विभिन्न राजनीतिक नेताओं की तस्वीरों को प्रदर्शित किया गया था।

सरकारी विज्ञापनों के अतंर्निहित तर्क

- **सरकारी पहलों के संबंध में जानकारी साझा करना:** ये विज्ञापन सरकार की नीतियों या पहलों के संबंध में, या नागरिकों के लिए किसी भी सार्वजनिक स्वास्थ्य या सुरक्षा अथवा अन्य मामलों के संबंध में आवश्यक जानकारी के प्रसार की सुविधा प्रदान करते हैं।
- **सूचना का अधिकार:** नागरिकों का सरकार के कार्यों के संबंध में जानकारी प्राप्त करना संविधान के **अनुच्छेद 21** के तहत एक मूल अधिकार है।
- **विज्ञापनों की प्रकृति:** सरकार के अनुसार, विभिन्न सरकारी एजेंसियों की ओर से **विज्ञापन और दृश्य प्रचार निदेशालय (DAVP)** द्वारा जारी किए गए विज्ञापनों में से 60% विज्ञापन भर्ती, निविदा और सार्वजनिक नोटिस जैसे मुद्दों से संबंधित होते हैं।
- **विज्ञापनों की जांच करने के लिए उपाय:** सरकारी विज्ञापनों को विनियमित करने के लिए भूतपूर्व DAVP द्वारा जारी किए गए पर्याप्त दिशा-निर्देश मौजूद हैं।

VISION IAS

सरकारी विज्ञापन की सामग्री विनियमन पर उच्चतम न्यायालय के वर्ष 2015 के दिशा-निर्देश

- **विज्ञापनों का दायरा:**
  - इसमें प्रिंट, इलेक्ट्रॉनिक, आउटडोर या डिजिटल मीडिया में प्रकाशित **कॉपी** (लिखित पाठ/श्रव्य) और **क्रिएटिव** (विजुअल/वीडियो/मल्टीमीडिया) दोनों शामिल हैं।
  - इसमें वर्गीकृत विज्ञापन **शामिल नहीं** होता है।
- **विज्ञापनों में सामग्री के पाँच मार्गदर्शक सिद्धांत:**
  - **सरकारी उत्तरदायित्वों से संबंधित-** सरकारी विज्ञापन की सामग्री सरकारों के **संवैधानिक** और **विधिक दायित्वों** के साथ-साथ नागरिकों के **अधिकारों** तथा **पात्रताओं** के लिए भी प्रासंगिक होनी चाहिए।
  - **निष्पक्ष रीति से प्रस्तुत-** विज्ञापन सामग्री को एक उद्देश्यपूर्ण, निष्पक्ष और सुलभ तरीके से प्रस्तुत किया जाना चाहिए तथा संबंधित अभियान के उद्देश्यों की पूर्ति हेतु डिज़ाइन किया जाना चाहिए।
  - **सत्तारुढ़ दल के राजनीतिक हितों को बढ़ावा देने के लिए निर्देशित नहीं किया जाना चाहिए-**
    - उनमें सत्ताधारी दल का नाम, दल का प्रतीक चिन्ह या लोगो शामिल नहीं करना चाहिए तथा किसी भी रूप में विपक्षी दलों के विचारों/कार्यों पर किसी भी प्रकार का आक्षेप नहीं करना चाहिए।
    - उनमें राष्ट्रपति, राज्यपाल, प्रधानमंत्री, मुख्यमंत्री, अन्य मंत्रियों और भारत के मुख्य न्यायाधीश के अपवाद सहित सरकारी नेताओं की **तस्वीरें** समाविष्ट नहीं करनी चाहिए।
  - **विज्ञापनों की लागत प्रभावशीलता-** सार्वजनिक निधियों का इष्टतम उपयोग होना चाहिए, जो एक आवश्यकता-आधारित विज्ञापन दृष्टिकोण को दर्शाता है।
  - **प्रक्रियाओं का अनुपालन-** सरकारी विज्ञापन को **विधिक आवश्यकताओं** (निर्वाचन विधियों और स्वामित्व अधिकारों) एवं **वित्तीय विनियमों** तथा प्रक्रियाओं का पालन करना चाहिए।
- **अनुपालन और प्रवर्तन:** सरकार को ऐसे **तीन सदस्यीय निकाय** का गठन करना चाहिए जिसमें असंदिग्ध रूप से तटस्थ और निष्पक्ष व्यक्ति शामिल हों तथा जिन्होंने अपने संबंधित क्षेत्रों में उत्कृष्ट प्रदर्शन किया हो।
  - यह निकाय इन निर्देशों के कार्यान्वयन को सुनिश्चित करेगा।
  - यह न्यायालय द्वारा निर्धारित दिशा-निर्देशों के उल्लंघन पर जन-सामान्य की शिकायतों को संबोधित करेगा।

संबंधित तथ्य: सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म पर सरकार के विज्ञापन

सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय ने केंद्र के पैसे से संचालित आउटरीच (पहुँच संबंधी) अभियानों हेतु **ब्यूरो ऑफ़ आउटरीच एंड कम्युनिकेशन (BOC)** की सूची में सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म्स को सम्मिलित करने के लिए नीतिगत दिशा-निर्देशों का मसौदा जारी किया है।

सोशल मीडिया का उपयोग करने के लाभ

- **पहुँच में वृद्धि:** सोशल मीडिया राय निर्धारण के साथ-साथ जनमत तैयार करने के लिए एक सशक्त मंच के रूप में कार्य करता है।भारत में, केवल फेसबुक के 210 मिलियन से अधिक उपयोगकर्ता हैं। भारत में लगभग 400 मिलियन स्मार्टफोन उपयोगकर्ता भी हैं जो अभूतपूर्व पहुँच प्रदान करते हैं।
- **वास्तविक समय में लोगों से संलग्नता (Real Time engagement):** सोशल मीडिया लोगों से संलग्न होने में लगने वाले समय और स्थान की कमी की समस्या का समाधान करता है। यह नीति निर्माताओं को वास्तविक समय के आधार पर हितधारकों से जुड़ने में सहायता कर सकता है। उदाहरण के लिए, लीबिया संकट के दौरान विदेश मंत्रालय ने लीबिया में फंसे भारतीय नागरिकों को खोजने और उन्हें वहां से निकालने में सहायता के लिए ट्विटर जैसे सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म का उपयोग किया था।
- **लक्षित दृष्टिकोण:** सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म्स लक्षित दृष्टिकोण की भी सुविधा प्रदान करते हैं जो कुशल और लागत प्रभावी तरीके से लक्षित लोगों तक पहुंचने में सहायता करता है।
- **व्यक्तिगत अंतःक्रिया (Individual Interaction):** मीडिया के पारंपरिक रूपों के अंतर्गत व्यक्तिगत उपयोगकर्ता के साथ अंतःक्रिया या तो संभव नहीं है या बहुत सीमित है। यह सेवाओं के संबंध में प्रतिक्रिया प्राप्त करने में भी उपयोगी है।
- **धारणाओं का प्रबंधन (Managing Perceptions):** सरकार के लिए एक बड़ी चुनौती असत्यापित तथ्यों और सरकारी नीतियों के संबंध में तुच्छ व भ्रामक अफवाहों के प्रसार को रोकना है। इन प्लेटफॉर्म का लाभ उठाने से इस प्रकार की धारणाओं से निपटने और सूचित राय के निर्धारण में तथ्यों को प्रस्तुत करने में सहायता मिल सकती है।

सोशल मीडिया के उपयोग से संबंधित चुनौतियाँ

- **कौन-से प्लेटफ़ॉर्म का उपयोग करना चाहिए:** विभिन्न प्लेटफॉर्म्स और यहां तक कि सोशल मीडिया के अनेक प्रकारों को देखते हुए, यह चयन करना अधिक कठिन है कि किस प्रकार के और कितने प्लेटफॉर्म्स से जुड़ा जाए तथा इन प्लेटफॉर्म्स के मध्य इंटर-लिंकेज कैसे स्थापित किया जाए।

VISION IAS

- **कौन संलग्न होगा:** अधिकांश विभागों में पारंपरिक मीडिया से जुड़ने की क्षमता सीमित है। इसके अतिरिक्त **सोशल मीडिया पर गहन और निरंतर संपर्क की आवश्यकता** होती है, अत: इनके लिए ऐसे संसाधनों की उपलब्धता और भी सीमित हो जाती है।
- **कैसे संलग्न हुआ जाए:** नियमों के अनुपालन से जुड़े अनेक प्रश्न उभरते हैं, यथा- कैसे खाता बनाएं और प्रबंधित करें, प्रतिक्रिया समय (response time) क्या होना चाहिए, विधिक निहितार्थ क्या हैं आदि।

निष्कर्ष

- अतीत में, निर्वाचन सुधारों पर विधि आयोग की रिपोर्ट, नियंत्रक-महालेखापरीक्षक (CAG) तथा भारत निर्वाचन आयोग (ECI) सहित विभिन्न निकायों ने इस प्रकार के विज्ञापन को विनियमित करने के लिए मानकों की अनेक बार मांग की है।
  - भारत निर्वाचन आयोग ने यह भी अनुशंसा की है कि मौजूदा सरकारों की उपलब्धियों को प्रदर्शित करने वाले किसी भी विज्ञापन को, विधायिका के लिए निर्वाचन से पूर्व छह माह की अवधि हेतु प्रतिबंधित किया जाना चाहिए।
- इन विनिमयों की उपेक्षा **राजनीतिक अभियानों और रैलियों** में सार्वजनिक धन के उपयोग के बारे में महत्वपूर्ण चिंताएं भी प्रदर्शित करती हैं।

8.2. आपराधिक कानूनों में सुधार (Reforms in Criminal Laws)

सुर्ख़ियों में क्यों?

हाल ही में, केंद्र सरकार (गृह मंत्रालय) ने सभी राज्य सरकारों को **भारतीय दंड संहिता (Indian Penal Code: IPC)** तथा **दंड प्रक्रिया संहिता (Code of Criminal Procedure: CrPC)** में आमूल चूल परिवर्तन करने और उन्हें पुनर्संरचित करने हेतु अपने सुझाव प्रेषित करने के लिए कहा, ताकि भारत की आपराधिक न्याय प्रणाली में सुधार का मार्ग प्रशस्त हो सके।

अन्य संबंधित तथ्य

- **पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो (BPRD)** द्वारा IPC, CrPC, भारतीय साक्ष्य अधिनियम (Indian Evidence Act) तथा स्वापक औषधि और मन:प्रभावी पदार्थ अधिनियम (Narcotic Drugs and Psychotropic Substances Act) जैसे कानूनों की समीक्षा की जाएगी।

आपराधिक कानूनों (IPC और CrPC) में सुधार की आवश्यकता

- **कानूनों को और अधिक नैतिक तथा नीतिपरक बनाना:** संवैधानिक नैतिकता के नए आदर्शों, यथा- अपराधों की संभावित लघु परिभाषा, निरपराधता की पूर्वधारणा आदि के अनुरूप संहिता निर्मित करने के लिए दंड संहिता में शामिल कुछ अपराधों को निरस्त करने की आवश्यकता है।
- **अभियोजन में निष्पक्षता सुनिश्चित करना:** आपराधिक न्याय प्रणाली में, चूंकि अभियुक्त के तौर पर एक व्यक्ति को राज्य की शक्ति के विरुद्ध प्रस्तुत किया जाता है, अत: ऐसी स्थिति में आपराधिक कानून के अंतर्गत यह सुनिश्चित करना होगा कि राज्य द्वारा अभियोजक के रूप में अपनी स्थिति का अनुचित लाभ न उठाया जाए।
- **अप्रचलित और पुरातन प्रावधानों का निष्प्रभावन:** स्वतंत्रता के आदर्श के अनुसरण हेतु आपराधिक और दंड संहिता में पर्याप्त परिवर्तन किए जाने की आवश्यकता है तथा इनमें समाविष्ट अप्रचलित प्रावधानों को निश्चित रूप से समाप्त किया जाना चाहिए।
  - यह अपेक्षा की गयी थी कि विभिन्न विधायी संशोधनों द्वारा नियमित रूप से IPC को संशोधित किया जाएगा, परन्तु ऐसा न होने के कारण न्यायालय स्वयं ही इस प्रकार के कार्य के संपादन हेतु बाध्य हुए हैं।
- **अस्पष्टता और अनिश्चितता का निवारण करना:** उदाहरण के लिए, दंड संहिताओं में 'आपराधिक मानववध' और 'हत्या' को स्पष्ट रूप से परिभाषित नहीं किया गया है, इसी कारण इन धाराओं की संहिता के सर्वाधिक अशक्त भाग के रूप में आलोचना की जाती है।
  - उल्लेखनीय है कि 'आपराधिक मानववध' को तो परिभाषित किया गया है, परन्तु 'हत्या' को परिभाषित नहीं किया गया है।

IPC और CrPC के बारे में

- **IPC:** यह भारत की **आधिकारिक आपराधिक संहिता** है।
  - यह एक व्यापक संहिता है, जिसमें आपराधिक कानून के समस्त सारभूत पहलुओं को समाविष्ट करने का प्रयास किया गया है।
  - इस संहिता का प्रारूप **लॉर्ड मैकाले की अध्यक्षता में वर्ष 1834 में गठित भारत के प्रथम विधि आयोग की अनुशंसाओं के आधार पर वर्ष 1860 में तैयार किया गया था।**
- **CrPC:** यह भारत में सारभूत आपराधिक कानून के प्रशासन हेतु अपनाई गई प्रक्रिया से संबंधित प्रमुख विधान है।
  - इसे वर्ष 1973 में अधिनियमित किया गया, हालांकि वर्ष 1882 में ही इसे निर्मित किया गया था।

VISION IAS

- यह अपराध की जांच, संदिग्ध अपराधियों की गिरफ़्तारी, साक्ष्य संग्रह, अभियुक्त व्यक्ति के अपराध या निरपराधता के निर्धारण और दोषियों के लिए दंड के निर्धारण हेतु एक तंत्र की स्थापना करता है।

आगे की राह

- **IPC में कोई भी संशोधन अनेक सिद्धांतों को ध्यान में रख कर किया जाना चाहिए, यथा-**
  - कोई भी सुधार **लोकतांत्रिक मूल्यों** को बनाए रखने के लिए प्रस्तुत किए जाने चाहिए और मानवाधिकारों को उच्च प्राथमिकता प्रदान की जानी चाहिए। इन विधियों को पुनर्संरचित करते समय अपराध से पीड़ित व्यक्ति के अधिकारों की पहचान करने हेतु पीड़ित और उसे प्रभावित करने वाले मनोवैज्ञानिक प्रभावों के अध्ययन (विक्टिमोलॉजिकल) को सुदृढ़ आधार प्रदान करने पर बल दिया जाना चाहिए।
  - **नए अपराधों का निर्धारण** और अपराधों के वर्तमान वर्गीकरण में संशोधन आपराधिक न्यायशास्त्र के सिद्धांतों ध्यान में रखते हुए किया जाना चाहिए, क्योंकि इसमें विगत चार दशकों में पर्याप्त परिवर्तन हुए हैं।
  - **नए प्रकार के दंड,** जैसे- सामुदायिक सेवा आदेश, क्षतिपूर्ति आदेश तथा पुष्टिकर और सुधारवादी न्याय के अन्य पहलूओं को भी इसके अंतर्गत शामिल किया जा सकता है।
  - **अपराधों का वर्गीकरण** भविष्य में अपराधों के निर्धारण में सहायक रीति के अनुसार किया जाना चाहिए।
  - आपराधिक न्याय प्रणाली में अनेक प्रवेशकों से निपटने हेतु राज्य की सुरक्षार्थ **सिद्धांतहीन अपराधीकरण से बचना चाहिए।**
  - **प्रक्रियात्मक पक्ष के दृष्टिकोण से**, दंडाज्ञा सुधार अत्यधिक आवश्यक है। सिद्धांतवादी दंडाज्ञा अत्यावश्यक है, क्योंकि वर्तमान में न्यायाधीशों को आरोपित किए जाने वाले दंड की मात्रा और प्रकृति को निर्धारित करने की विवेकाधीन शक्ति प्राप्त है।

आपराधिक न्याय स्पष्ट नीति की स्थिति में नहीं है, इसलिए एक स्पष्ट नीति का प्रारूप निर्मित किए जाने की आवश्यकता है, जो IPC या CrPC में परिकल्पित किए जाने वाले परिवर्तनों से अवगत कराएगी।

8.2.1. महत्वपूर्ण डेटा - 'भारत में अपराध रिपोर्ट 2019' (Important Data - Crime In India 2019 Report)

सुर्ख़ियों में क्यों?

हाल ही में, राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड ब्यूरो की "भारत में अपराध" 2019 रिपोर्ट (क्राइम इन इंडिया रिपोर्ट-2019) जारी की गयी।

इस रिपोर्ट से संबंधित प्रमुख निष्कर्ष

- **महिलाओं के विरुद्ध अपराध:**
  - वर्ष 2018 से 2019 तक की अवधि में महिलाओं के विरुद्ध अपराधों में **7.3 प्रतिशत की वृद्धि हुई** है।
  - महिलाओं के विरुद्ध घटित अपराध के अधिकांश मामले **'पति या उसके रिश्तेदारों द्वारा किए गए अत्याचार'** के तहत दर्ज किए गए हैं।
- **जाति आधारित हिंसा:**
  - वर्ष 2018 से 2019 के दौरान **अनुसूचित जाति (SC)** के विरुद्ध अपराधों में 7.3% की वृद्धि दर्ज हुई है।
- **राज्य के विरुद्ध होने वाले अपराध:**
  - वर्ष 2018 से 2019 तक की अवधि में राज्य के विरुद्ध होने वाले अपराधों की दर में **11.3%** की **गिरावट दर्ज** की गई है।
  - इनमें से 80.3% मामले **लोक संपत्ति नुकसान निवारण अधिनियम** (Prevention of Damage to Public Property Act) के तहत दर्ज किए गए हैं, उसके उपरांत **विधिविरुद्ध क्रियाकलाप (निवारण) अधिनियम** {Unlawful Activities (Prevention) Act} के तहत मामले दर्ज किए गए हैं।
- **साइबर अपराध:**
  - वर्ष 2018 से 2019 तक की अवधि में साइबर अपराध संबंधी मामलों में **63.5% की वृद्धि हुई है।**
  - दर्ज किए गए 60.4% साइबर अपराध के मामले **धोखाधड़ी** से संबंधित थे तथा उनके उपरांत यौन शोषण से संबद्ध मामले थे।
- **अनुसूचित जनजातियों के विरुद्ध अपराध** में वर्ष 2018 से 2019 के दौरान **26% की वृद्धि** हुई है।
- वर्ष 2018 से 2019 के दौरान **बच्चों के विरुद्ध घटित अपराधों में 4.5% की बढ़ोतरी** हुई है।
- वर्ष 2018 से 2019 तक की अवधि में **मामलों को दर्ज करवाने** में **1.6% की वृद्धि** हुई है।

VISION IAS

अन्य संबंधित तथ्य

जेल सांख्यिकी 2017 (भारत): NCRB द्वारा हाल ही में जारी

- **जेलों की संख्या में अपेक्षाकृत कमी:** राष्ट्रीय स्तर पर जेलों की कुल संख्या वर्ष 2015 के 1,401 से घटकर वर्ष 2017 में 1,361 हो गई, जो वर्ष 2015-2017 के दौरान 2.85% कमी को दर्शाता है।
- **जेलों में क्षमता से अधिक कैदियों की संख्या:** NCRB की रिपोर्ट में कहा गया है कि देश के कुल 1,361 जेलों में वर्ष 2017 के अंत तक 4.50 लाख कैदी थे। ज्ञातव्य है कि यह संख्या सभी जेलों की कुल क्षमता की तुलना में लगभग 60,000 अधिक है।
- **जेलों में मृत्यु:** वर्ष 2015-17 के दौरान जेलों में होने वाली मृत्युओं की संख्या में 5.49 प्रतिशत की वृद्धि हुई है।
- **विचाराधीन कैदी:** वर्ष 2015-17 के दौरान विचाराधीन कैदियों की संख्या में 9.4% की वृद्धि हुई है।

8.3. भारत में जेल सुधार (Prison Reform in India)

सुर्ख़ियों में क्यों?

हाल ही में, जेल रिफॉर्म्स (कारागार सुधार) पर गठित न्यायमूर्ति अमिताव रॉय समिति की एक रिपोर्ट को उच्चतम न्यायालय के समक्ष सुनवाई के लिए प्रस्तुत किया गया।

पृष्ठभूमि

- 'जेल', संविधान की सातवीं अनुसूची के अंतर्गत राज्य सूची का एक विषय है। जेलों का प्रशासन और प्रबंधन संबंधित राज्य सरकारों का उत्तरदायित्व है।
- हालांकि, गृह मंत्रालय जेलों और कैदियों से संबंधित विभिन्न मुद्दों पर राज्यों एवं केंद्रशासित प्रदेशों को नियमित मार्गदर्शन और परामर्श प्रदान करता रहता है।

जेल सुधार की आवश्यकता क्यों है?

उच्चतम न्यायालय ने, **राममूर्ति बनाम कर्नाटक राज्य वाद (वर्ष 1996)** में अपने ऐतिहासिक फैसले में जेल सुधार संबंधी कार्य को मूर्त रूप देने हेतु अनेक समस्याओं की पहचान की, जिन पर तत्काल ध्यान दिए जाने की आवश्यकता है।

- **जेलों में उनकी धारण क्षमता से अधिक कैदी:** राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड ब्यूरो द्वारा प्रकाशित "प्रिज़न स्टैटिस्टिक्स इंडिया" में यह उल्लेख किया गया है कि वर्ष 2015 में, देश के 1,401 जेलों में 3.83 लाख कैदियों की धारण क्षमता की तुलना में लगभग 4.2 लाख कैदी बंद थे, जो 114.4 % की भीड़भाड़ दर (ऑक्यूपेंसी रेट) को दर्शाता है।
  - **क्षमता से अधिक कैदी** होने के कारण गंभीर अपराधों के दोषी अपराधियों और छोटे अपराधों के दोषी अपराधियों के मध्य पृथक्करण कठिन हो गया है, जिसका छोटे अपराधों के दोषी अपराधियों पर बुरा प्रभाव पड़ता है।
  - **क्षमता से अधिक कैदी** के होने के परिणामस्वरूप सामान्य प्रशासन में असहजता, तनाव, अक्षमता और व्यवधान जैसी समस्याएं देखने को मिलती हैं।
- **सुनवाई में विलंब:** वर्ष 2016 में, भारतीय जेलों में बंद 67 प्रतिशत कैदी विचाराधीन थे, जो अंतर्राष्ट्रीय मानकों की तुलना में बहुत अधिक है। उदाहरण के लिए, इसी अवधि में ब्रिटेन, संयुक्त राज्य अमेरिका और फ्रांस में विचाराधीन कैदियों की संख्या क्रमश: 11 प्रतिशत, 20 प्रतिशत एवं 29 प्रतिशत थी।
- **यातना एवं दुर्व्यवहार:** विचाराधीन कैदियों सहित सभी कैदियों को बिना किसी पारिश्रमिक के कठोर श्रम करने के लिए विवश किया जाता है और उन्हें यातनाएं दी जाती हैं। यातना एवं दुर्व्यवहार के कारण हिरासत में होने वाली मृत्यु के मामलों में निरंतर वृद्धि हुई है। इसके अतिरिक्त, महिला कैदी दुर्व्यवहार के प्रति अधिक सुभेद्य होती हैं।
- **अत्यधिक संख्या में कर्मचारियों का अभाव:** जेल अधिकारियों के कुल स्वीकृत पदों का 33 प्रतिशत अभी भी रिक्त है, जबकि, भारत में जेल कर्मचारियों और कैदियों के मध्य का अनुपात लगभग 1:7 है।
- **अपर्याप्त जेल अवसंरचना:** अधिकांश भारतीय कारागारों का निर्माण औपनिवेशिक काल में हुआ था, जिनके जीर्णोद्धार की नितांत आवश्यकता है और इन कारागारों के कुछ हिस्से दीर्घकाल से निर्जन पड़े हैं।
- **स्वास्थ्य, स्वच्छता, भोजन आदि की उपेक्षा:** भारत में कैदियों को गंभीर अस्वास्थकर परिस्थितियों, उचित चिकित्सा सुविधाओं के अभाव तथा यातना एवं अनुचित व्यवहार से लगातार पीड़ित होना पड़ता है। कई कारागारों के रसोईघर संकीर्ण और अस्वच्छ हैं तथा दीर्घकाल से चली आ रही भोजन सारणी का प्रयोग किया जा रहा है।
- **महिला कैदियों का मुद्दा:** देश भर में कारागारों में कैद 4,33,000 से अधिक कैदियों में से लगभग 18,500 महिलाएं हैं। हालांकि, इन महिला कैदियों को किसी विशेष प्रकार की महिला कर्मियों की निगरानी में नहीं रखा जाता है। नीतिगत दस्तावेजों में जेल प्रशासन के सभी स्तरों के लिए सुझाए गए 33 प्रतिशत महिला कर्मियों की तुलना में सिर्फ 9.6 प्रतिशत ही महिला कार्यरत हैं।

VISION IAS

- **संचार सुविधाओं का अभाव:** कैदियों को बाहरी दुनिया, उनके परिवार के सदस्यों और रिश्तेदारों के साथ बिना किसी संपर्क के अलग-थलग रहने के लिए विवश किया जाता है। वे अपने परिवार के जीवन और खुशहाली से अनभिज्ञ रहते हैं।

जेल नियमावली (Prison Manual) (वर्ष 2016)

इसका उद्देश्य देश भर में जेलों के प्रशासन और कैदियों के प्रबंधन को प्रशासित करने वाले कानूनों, नियमों और विनियमों में आधारभूत एकरूपता लाना है। इस नियमावली में शामिल प्रमुख संशोधन निम्नलिखित हैं:

- नि:शुल्क विधिक सेवाओं तक पहुंच;
- महिला कैदियों के लिए अतिरिक्त प्रावधान;
- मृत्युदंड की सजा प्राप्त कैदियों के अधिकार;
- जेलों का आधुनिकीकरण और कंप्यूटरीकरण;
- रिहाई के पश्चात् देखभाल सेवाओं पर ध्यान केंद्रित करना;
- महिला कैदियों के बच्चों के लिए प्रावधान;
- संगठनात्मक एकरूपता और जेल के सुधारक कर्मचारियों की संख्या में वृद्धि पर ध्यान केंद्रित करना; एवं
- कारागार का निरीक्षण, आदि।

विभिन्न समितियों, विधि आयोग और न्यायपालिका द्वारा सुझाए गए सुधार

- **अखिल भारतीय जेल सेवा:** न्यायमूर्ति ए. एन. मुल्ला की अध्यक्षता में वर्ष 1980-1983 में गठित जेल सुधारों पर अखिल भारतीय समिति (All India Committee on Jail Reforms) ने उचित कार्य आवश्यकताओं, प्रशिक्षण और पर्याप्त पदोन्नति की व्यवस्था के साथ एक पेशेवर सेवा के रूप में **अखिल भारतीय जेल सेवा** को सृजित करने की सिफारिश की थी।
- सभी राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों द्वारा **मॉडल जेल नियमावली, 2016** का अनुपालन।
- **एकीकृत मानक:** गैर-सरकारी संगठनों और जेल प्रशासन के साथ मिलकर केंद्र सरकार को कारागारों के प्रभावी केंद्रीकरण के लिए पर्याप्त कदम उठाने चाहिए तथा संपूर्ण देश में एक समान जेल नियमावली का मसौदा तैयार करना चाहिए।
- **प्रशिक्षण और सुधारात्मक उपाय (Training & correctional activities):**
  - नवीनतम तकनीकों के उपयोग, सुधारक उपायों और शारीरिक फिटनेस के बारे में कर्मचारियों को प्रशिक्षित करना।कैदियों के लिए वस्त्र बुनाई, विद्युतीकरण, प्लंबिंग (नलसाजी), बढ़ईगीरी आदि क्षेत्रों में व्यावसायिक प्रशिक्षण पाठ्यक्रम आरंभ करना।कैदियों और कर्मचारियों के लिए खेल एवं प्रतियोगिताओं जैसी मनोरंजक गतिविधियों की सुविधा।
- **अवसंरचना:**
  - बायोमेट्रिक पहचान सुविधा, कैदी सूचना प्रणाली, CCTVs के प्रावधान, वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग की सुविधा आदि जैसे तकनीकों को जेल परिसर में अद्यतित करने की आवश्यकता है।
  - कैदियों के लिए चिकित्सालयों की बुनियादी सुविधाओं, जैसे- बिस्तर, उपकरण, परीक्षण सुविधाओं, चिकित्सा आपातकाल के दौरान वाहन आदि को अद्यतित करने की आवश्यकता है।
- **कर्मचारी:** सभी रिक्त पड़े कर्मचारियों के पदों को शीघ्र भरने की आवश्यकता है। अतिरिक्त कर्मचारियों, यथा- चिकित्सा कर्मी, रख-रखाव कर्मी, सुधारक कर्मचारी, लिपिक आदि की भर्ती की जानी चाहिए।
- **निधि प्रवाह:** स्टेट ट्रेजरी विभाग से कार्यान्वयन एजेंसी को होने वाले निधि प्रवाह की निगरानी के लिए तंत्र।
- **खुली जेल प्रणाली का सुदृढीकरण:** यह बंद कारावास व्यवस्था के बदले एक अत्याधुनिक और प्रभावी विकल्प के रूप में सामने आया है।
- **पैरा-लीगल वालंटियर्स (PLVs) का सुदृढीकरण:** वर्ष 2009 में, राष्ट्रीय विधिक सेवा प्राधिकरण (NALSA) ने PLVs नामक एक योजना शुरू की थी, जिसका उद्देश्य स्वयंसेवकों को आम लोगों और विधिक सेवा संस्थानों के बीच मध्यस्थ के रूप में कार्य करने के लिए विधिक प्रशिक्षण प्रदान करना था, ताकि पहुँच से संबंधित बाधाओं को दूर किया जा सके एवं न्याय तक पहुँच के लिए सभी वर्गों के लोगों को कानूनी सहायता उपलब्ध हो सके।
- **ग्रामीण क्षेत्रों में न्यायिक सेवाओं की उपलब्धता बढ़ाना** तथा न्यायालयों, पुलिस स्टेशनों व विधिक सहायता केंद्रों में बुनियादी ढांचे को बेहतर बनाना, ताकि न्याय तक पहुँच में ग्रामीण और शहरी आबादी के बीच मौजूद असमानता को कम किया जा सके।
- **विधि आयोग की सिफारिशें:**
  - आपराधिक प्रक्रिया संहिता में जमानत (bail) के प्रावधानों को संशोधित करना, जिसमें विचारधीन कैदियों को जमानत पर जल्द रिहा करने के संबंध में उपबंध किया जाना चाहिए।

VISION IAS

- ऐसे विचाराधीन कैदी, जिन्होंने सात वर्ष तक की अधिकतम सजा वाले मामलों में एक तिहाई समय कारागार में व्यतीत किया है, उन्हें जमानत पर रिहा किया जाना चाहिए।
- ऐसे विचाराधीन कैदी, जिन्होंने सात वर्ष से अधिक की सजा वाले दंडनीय अपराधों के मामलों में आधा समय कारागार में व्यतीत किया है, उन्हें जमानत पर रिहा किया जाना चाहिए।

○ ड्राफ्ट एंटी-टॉर्चर कानून (विधि आयोग की 273वीं रिपोर्ट द्वारा अनुसंशित) की तर्ज पर यातना विरोधी एक व्यापक विधि को अधिनियमित किया जाना चाहिए।

- **कारागार सुधार और सुधारात्मक प्रशासन पर राष्ट्रीय नीतिगत मसौदा, 2007** (Draft National Policy on Prison Reforms and Correctional Administration, 2007) में की गयी सिफारिशें:
  - रिहाई के पश्चात् देखभाल और पुनर्वास सेवाओं के लिए प्रावधान करना।
  - एक अनुसंधान एवं विकास शाखा की स्थापना और बंदियों के पुनर्वास के लिए काम करने वाले गैर-सरकारी संगठनों को वित्तीय सहायता प्रदान करना।
  - अपेक्षाकृत छोटे अपराधों के लिए दोषी अपराधियों के लिए कारावास हेतु समुदाय आधारित सजा का विकल्प प्रदान करना।

भारत में अब तक किए गए महत्वपूर्ण सुधारात्मक उपाय

- वर्ष 1835 में **टी. बी. मैकाले** द्वारा आधुनिक जेल प्रणाली की अवधारणा विकसित की गई।
- बंदीगृह अनुशासन समिति, 1836 ने सभी मानवीय आवश्यकताओं और सुधारों को अस्वीकार करते हुए कैदियों के लिए कठोरता बढ़ाने कीअनुशंसा की थी।
- भारत में कैदियों की कार्यदशा में एकरूपता लाने के लिए वर्ष 1894 में **जेल अधिनियम** को अधिनियमित किया गया था। इस अधिनियम में कैदियों के वर्गीकरण के लिए प्रावधान किए गए थे।
- एक मॉडल जेल नियमावली तैयार करने के लिए वर्ष 1957-59 में एक **अखिल भारतीय जेल नियमावली समिति** का गठन किया गया था।
  - इस समिति को बंदीगृह (prison) प्रशासन की समस्याओं की जांच करने और उनमें सुधार हेतु सुझाव देने के लिए कहा गया था।
- न्यायमूर्ति ए. एन. मुल्ला की अध्यक्षता में वर्ष 1980-83 में गठित **जेल सुधारों पर अखिल भारतीय समिति** ने भारत में कारागारों के आधुनिकीकरण के लिए एक स्थायी निकाय के रूप में **राष्ट्रीय जेल आयोग** की स्थापना का सुझाव दिया था।
  - इसके अतिरिक्त, बंदीगृह सेवा के अभिन्न अंग के रूप में देखभाल, पुनर्वास और परिवीक्षा।
- वर्ष 1987 में, भारत सरकार ने भारत में महिला कैदियों की स्थिति पर एक अध्ययन करने के लिए **न्यायमूर्ति कृष्णा अय्यर** की अध्यक्षता में एक समिति गठित की थी।
  - इस समिति ने महिलाओं और बाल अपराधियों से निपटने में महिला कर्मियों की विशेष भूमिका पर बल देते हुए पुलिस बल में अधिक महिलाओं को शामिल करने की सिफारिश की थी।

केस स्टडी

तेलंगाना में जेल सुधार

- यहाँ सुरक्षा आधारित प्रणाली से आगे बढ़ते हुए अधिकाधिक मानव-केंद्रित प्रणाली को अपनाने पर बल दिया गया है।
- जेल कर्मियों को व्यक्तिगत और सामूहिक रूप से कारागार में होने वाली प्रत्येक मृत्यु के लिए जवाबदेह बनाया गया है।
- मनोवैज्ञानिकों के सहयोग से सामूहिक व्यवहारात्मक थेरेपी उपलब्ध कराकर जीवन, अपराध और पारस्परिक संबंध के बारे में कैदियों की अभिवृत्ति को परिवर्तित करने में मदद मिली है।

स्वाधार गृह (Swadhar Greh)

- यह कठिन परिस्थितियों से ग्रसित व पीड़ित महिलाओं के पुनर्वास के लिए एक योजना है।
- इस योजना के तहत अन्य लाभार्थियों में, जेल से रिहा महिला कैदी भी शामिल हैं, जो परिवार, सामाजिक और आर्थिक सहायता से रहित हैं।

निष्कर्ष

वास्तव में, भारत में कारागार एक प्रकार के बड़े सामाजिक संगठन का निर्माण करती हैं। आपराधिक न्याय प्रणाली के भाग के रूप में, वे विधि के शासन को बनाए रखने में एक अमूल्य योगदान देती हैं, जिससे विधि एवं व्यवस्था बनी रहती है तथा समाज में शांति और समृद्धि कायम हो पाती है।

VISION IAS

8.3.1. हिरासत में हिंसा (Custodial Violence)

सुर्ख़ियों में क्यों?

हाल ही में, तमिलनाडु में कथित तौर पर हिरासत में हिंसा के कारण एक पिता और पुत्र दोनों की मृत्यु से संपूर्ण भारत में आक्रोश की स्थिति उत्पन्न हुई है।

हिरासत में हिंसा के बारे में

- हिरासत में हिंसा वह हिंसक कृत्य है, जो **न्यायिक और पुलिस हिरासत में संपन्न होता है।** इसके अंतर्गत एक अपराधी व्यक्ति को मानसिक एवं शारीरिक रूप से उत्पीड़ित किया जाता है। इसमें यातना, बलात्कार और मृत्यु शामिल हैं।
- **नेशनल कैंपेन अगेंस्ट टॉर्चर** (विभिन्न गैर-सरकारी संगठनों की एक संयुक्त पहल) के अनुसार, वर्ष 2019 में पुलिस हिरासत में मरने वाले कुल लोगों में से लगभग 3/4 की मृत्यु यातना के परिणामस्वरूप हुई थी।

इस प्रकार की घटनाओं से व्युत्पन्न विधिक सरोकार

- **मूल अधिकारों की अवहेलना:** कॉमन कॉज (Common Cause) और सी.एस.डी.एस.-लोकनीति (CSDS-Lokniti) की एक रिपोर्ट से यह ज्ञात हुआ है कि 12% पुलिस कर्मियों को कभी भी मानवाधिकार प्रशिक्षण प्राप्त नहीं होता। इसके अतिरिक्त, **राम मूर्ति बनाम कर्नाटक राज्य वाद (वर्ष 1996)** में उच्चतम न्यायालय द्वारा, कैदियों के मूल अधिकारों को बरकरार रखते हुए जेलों में 'उत्पीड़न और दुर्व्यवहार' की ऐसे कृत्यों के रूप में पहचान की गई थी, जिनमें सुधार किए जाने की आवश्यकता है।
- **गिरफ्तारी की शक्ति का दुरुपयोग:** राष्ट्रीय पुलिस आयोग ने अपने तृतीय रिपोर्ट में यह अवलोकित किया था कि सभी गिरफ्तारियों में से 60 प्रतिशत "अनावश्यक" थीं। इसके अतिरिक्त, आरोपी के लिए गैर-ज़मानती रिमांड प्राप्त करने हेतु भारतीय दंड संहिता (Indian Penal Code: IPC) की विभिन्न धाराओं, जैसे- धारा 506 का अनावश्यक अनुप्रयोग **स्वतंत्रता के मूल अधिकार (अनुच्छेद 19)** के विरुद्ध है।
- **विधियेत्तर (Extra-legal) व्यवहार:** इसमें ऐसी गिरफ्तारियां करते समय पुलिस द्वारा नियमों की अवहेलना और यातना का उपयोग करना, पुलिस हिरासत (15 दिन तक) या न्यायिक हिरासत (60-90 दिन तक) को स्वीकृति प्रदान करते समय मजिस्ट्रेट द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता (Code of Criminal Procedure: CrPC) के तहत निर्धारित उचित प्रक्रिया का पालन न करना आदि शामिल हैं।

ऐसी घटनाओं पर अंकुश लगाने के समक्ष चुनौतियाँ

- **यातना के विरुद्ध सशक्त कानून का अभाव:**
  - भारत में यातना के विरुद्ध कोई कानून नहीं है और हिरासत में हिंसा को अभी तक गैर-कानूनी भी घोषित नहीं किया गया है।
  - यद्यपि, भारत ने वर्ष 1997 में यातना के विरुद्ध संयुक्त राष्ट्र अभिसमय (U.N. Convention against Torture) पर हस्ताक्षर किए थे, परंतु अभी तक इसकी अभिपुष्टि नहीं की है।
- **आधुनिकीकरण का अभाव और अप्रयुक्त निधि:** पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो (Bureau of Police Reforms and Development: BPR&D) द्वारा प्रदत्त आंकड़ों तथा भारत के नियंत्रक और महालेखापरीक्षक (CAG) ने पुलिस बलों के आधुनिकीकरण (Modernisation of Police Forces: MPF) योजना के तहत आवंटित निधि के न्यून उपयोग को रेखांकित किया है।
- **स्वतंत्र कार्य पद्धति का अभाव:** वर्ष 1861 के पुलिस अधिनियम में 'अधीक्षण' (superintendence) तथा 'सामान्य नियंत्रण और निर्देशों' के संबंध में कोई प्रावधान नहीं किए गए हैं। इस प्रकार के उपबंधों की अनुपस्थिति से पुलिस बल कार्यकारिणी के माध्यम से राजनेताओं के निहित स्वार्थों की पूर्ति का साधन मात्र बनकर रह जाता है।
- **पुलिस बल में जवाबदेही की कमी और उन्मुक्तियों (या दंडाभाव) की विद्यमानता:**
  - **कानून, सामान्य नागरिकों को एक पुलिस अधिकारी पर मुकदमा चलाने की अनुमति प्रदान नहीं करता है** तथा यह केवल सरकार के विवेकाधीन है।
    - अधिकांश राज्यों द्वारा पुलिस द्वारा किए जाने वाले कदाचार के मामलों की जांच हेतु **स्वतंत्र शिकायत (अर्थात् परिवाद) प्राधिकरण** गठित करने की द्वितीय प्रशासनिक सुधार आयोग (Administrative Reforms Commission: ARC) और उच्चतम न्यायालय (प्रकाश सिंह वाद, 2006) की अनुशंसाओं को अभी तक लागू नहीं किया गया है।
  - दुराचारपूर्ण कृत्यों की जाँच के लिए **आंतरिक विभागीय जाँच-पड़ताल (Internal departmental inquiries)** कदाचित ही पुलिस कर्मियों को दोषी सिद्ध करती है।

VISION IAS

- **निम्न दोषसिद्धि दर: राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड ब्यूरो (National Crime Records Bureau: NCRB)** के आंकड़ों में दर्शाया गया है कि वर्ष 2001 से वर्ष 2018 के मध्य, केवल 26 पुलिस कर्मियों को हिरासत में हिंसा का दोषी ठहराया गया था, जबकि भारत में 1,727 ऐसी मृत्युओं को दर्ज किया गया था। इसका कारण यह है कि अधिकांश ऐसी मृत्युओं के लिए हिरासत में हिंसा के अतिरिक्त आत्महत्या जैसे अन्य कारकों को उत्तरदायी ठहराया गया।
- **राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग की अशक्त कार्यप्रणाली:** इसे गवाहों को सम्मन जारी करने, साक्ष्य प्रस्तुत करने का आदेश पारित करने और सरकार को दोषी अधिकारियों के विरुद्ध मुकदमा चलाने की संस्तुति करने का अधिकार प्राप्त है। यद्यपि, व्यवहार में इसकी अनुशंसाएं अधिकतर **क्षतिपूर्ति या अन्य तात्कालिक अंतरिम राहत** प्रदान करने के लिए सरकार से आग्रह करने तक ही सीमित रही हैं।
- **गवाह की सुरक्षा का अभाव:** प्रायः, हिरासत में मृत्यु से संबंधित जाँच में अत्यधिक विलंब होता है। इस दौरान पीड़ित परिवारों को सामान्यत: धमकी दी जाती है और गवाह प्रतिपक्षी (hostile) हो जाते हैं।
- **लोक समर्थन ऐसे कार्यों को प्रोत्साहित करता है:** जनता को यह अनुभव करने की आवश्यकता है कि कानून के तहत पुलिस को सीमित शक्तियां प्राप्त हैं। पुलिस को विधि का शासन बनाए रखना होता है तथा उनके द्वारा इसका दुरुपयोग नहीं किया जा सकता है।

आगे की राह

- **कानूनी उपाय:**
  - **यातना के विरुद्ध संयुक्त राष्ट्र अभिसमय की अभिपुष्टि करना।**
  - CrPC की धारा 197 में सुधार किया जाए, ताकि यह स्पष्ट किया जा सके कि मनमाने ढंग से हिरासत में रखने, यातनाएं देने, न्यायेत्तर हत्याओं और अन्य आपराधिक कृत्यों के मामले में अभियोजकों को पुलिस के विरुद्ध आरोप लगाने से पूर्व सरकारी अनुमोदन प्राप्त करने की आवश्यकता न हो।
- **प्रशासनिक उपाय और क़ानूनों का प्रवर्तन:**
  - **डी. के. बसु वाद (वर्ष 1997) में प्रदत्त निर्णय का सख्त कार्यान्वयन:** इस वाद में, उच्चतम न्यायालय ने गिरफ्तारी करते समय पारदर्शिता में वृद्धि करने और उत्तरदायित्व तय करने के लिए 11 निर्देश जारी किए थे। उदाहरण के लिए- अभियुक्त की चिकित्सा जांच अनिवार्य करना, गिरफ्तार व्यक्ति के निकटतम परिजन को सूचित करना आदि।
  - **न्यायाधीश की प्रभावी भूमिका:** न्यायाधीशों का कर्तव्य है कि वे गिरफ्तारी से संबंधित दस्तावेज़ों का निरीक्षण करके और संदिग्धों से प्रत्यक्षत: प्रश्न करके उनका हित सुनिश्चित करने के लिए पुलिस को शक्तियों का दुरुपयोग करने से रोकें।
  - यह सुनिश्चित करना चाहिए कि भारतीय संविधान के अनुच्छेद 22 के अनुसरण में संदिग्धों/आरोपियों को यथा शीघ्र आधिवक्ता से परामर्श का अधिकार (right to counsel) उपलब्ध हो।
- **पुलिस की जवाबदेही सुनिश्चित करना:**
  - **बाह्य जवाबदेही:** वर्ष 2006 के प्रकाश सिंह वाद में दिए गए निर्देशों के अनुरूप पुलिस परिवाद प्राधिकरणों (Police Complaints Authorities: PCAs) की स्थापना सुनिश्चित की जानी चाहिए। पुलिस द्वारा कथित रूप से दुर्व्यवहार करने पर उन्हें स्थानांतरित करने की प्रथा को समाप्त कर उन पर अभियोग चलाया जाना चाहिए। यह सुनिश्चित करना चाहिए कि राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग (NHRC) जैसे बाह्य अभिकरणों द्वारा आदेशित जांच को उसी पुलिस स्टेशन को संदर्भित नहीं किया जाए जहाँ की पुलिस पर आरोप लगाए गए हों।
  - **आंतरिक जवाबदेही:** पुलिस कारागारों की आकस्मिक और अप्रत्याशित जांच करने और डी. के. बसु वाद में उच्चतम न्यायालय के दिशा-निर्देशों के अविरत या बार-बार उल्लंघन के आरोपों पर प्रतिक्रिया करने हेतु राज्य स्तर पर एक स्वतंत्र एवं "पेशेवर रूप से उत्तरदायी" निकाय की स्थापना की जानी चाहिए।
- **जांच के वैज्ञानिक तरीकों के संबंध में प्रशिक्षण प्रदान करना:** जांच अधिकारियों द्वारा संदिग्धों और गवाहों के बयान दर्ज करने तथा पूछताछ के लिए आधुनिक व गैर-अवपीड़क तकनीकों को अपनाने हेतु प्रशिक्षित करना चाहिए।
- **विधि आयोग की 198वीं और 273वीं रिपोर्टों में की गई अनुशंसाओं** के अनुसरण में हिरासत में हुई हत्या के पीड़ितों और गवाहों के परिवारों की सुरक्षा के लिए **सुदृढ़ गवाह संरक्षण तंत्र (Robust Witness Protection Regime)** की व्यवस्था की जानी चाहिए। किसी भी प्रकार की कथित धमकी, दबाव या खतरे आदि पर पीड़ितों और गवाहों के परिवारों द्वारा दायर सभी शिकायतें दर्ज की जानी चाहिए।

निष्कर्ष

पुलिस प्रशिक्षण पर गोरे समिति (1971-73), पुलिस सुधार पर रिबेरो समिति (1998), पुलिस सुधार पर पद्मनाभैया समिति (2000), आपराधिक न्याय प्रणाली में सुधारों पर मलिमथ समिति (2001-03), द्वितीय प्रशासनिक सुधार आयोग (2006) आदि द्वारा इस संबंध

VISION IAS

में महत्वपूर्ण अनुशंसाएं की गई हैं। अत: उन्हें लागू करने के लिए राजनीतिक इच्छाशक्ति की आवश्यकता है, विशेषकर राज्यों द्वारा, क्योंकि पुलिस राज्य सूची का एक विषय है।

8.4. लोक सेवा वितरण के लिए ई-गवर्नेंस (E-Governance for Public Service Delivery)

सुर्ख़ियों में क्यों?

भारत में लोक सेवा वितरण में सुधार के लिए ई-गवर्नेंस से संबंधित विभिन्न पहलों की शुरुआत की गई है।

लोक सेवा या सार्वजनिक सेवा (Public service) क्या है?

- लोक सेवा ऐसी सेवा है जो सरकार द्वारा लोगों को प्रदान की जाती है:
  - या तो प्रत्यक्ष रूप से (सार्वजनिक क्षेत्रक के माध्यम से); या
  - सेवाओं के वित्त-पोषण संबंधी प्रावधान के माध्यम से।
- कुछ प्रमुख लोक सेवाएं हैं: स्वास्थ्य देखभाल, शिक्षा, निर्धनों और साधन-सुविधाओं से वंचितों के लिए सामाजिक सेवाएं, पर्यावरणीय संरक्षण, अवसंरचना- सड़क, रेलवे आदि।

भारत में लोक सेवा वितरण की स्थिति

- **अपर्याप्त निधि आवंटन:** जल और स्वच्छता सहित स्वास्थ्य संबंधी सेवाओं के लिए वार्षिक बजटीय आवंटन सकल घरेलू उत्पाद के 1.5% से भी कम पर स्थिर बना हुआ है।
- **लाभार्थियों के मध्य जागरूकता की कमी के कारण** लोक सेवा वितरण मांग द्वारा संचालित होने के बजाए आबंटन पर आधारित है।
- **मानव पूंजी का निम्न स्तर और अवसंरचना की अपर्याप्त उपलब्धता:** लोक सेवा के वितरण में विशेष रूप से स्थानीय स्तर पर प्रशिक्षित व प्रेरित अधिकारियों की कमी है।
- लोक सेवाओं और कार्यक्रमों की **दक्षतापूर्ण निगरानी के अभाव के साथ-साथ यह भ्रष्टाचार से भी ग्रस्त है।** उदाहरणस्वरूप- सार्वजनिक वितरण प्रणाली में व्याप्त भ्रष्टाचार के कारण अपेक्षित परिणाम प्राप्त नहीं हो पाते हैं।
- सेवा वितरण तंत्र की प्रकृति और उसमें संस्थागत कमियों के कारण **लोक सेवा वितरण की पहुंच अत्यधिक सीमित है और उसमें पारदर्शिता का भी अभाव है।**
- लोक स्वास्थ्य सेवाओं, ग्रामीण क्षेत्रों में सड़कों, स्कूलों (शौचालय आदि का अभाव) से संबंधित **निम्नस्तरीय अवसंरचना विद्यमान है।**
- **लोक सेवा वितरण की धीमी प्रक्रियाएं और उससे संबंधित शिकायत निवारण तंत्र की अनुपस्थिति,** नागरिकों को लोक सेवा वितरण अभिकर्ताओं की दया पर निर्भर कर देती है।

लोक सेवा वितरण में सुधार में ई-गवर्नेंस की भूमिका

ई-गवर्नेंस (इलेक्ट्रॉनिक गवर्नेंस) वस्तुतः सरल, जवाबदेह, त्वरित, अनुक्रियाशील और पारदर्शी शासन स्थापित करने हेतु सरकारी कामकाज की प्रक्रियाओं में सूचना और संचार प्रौद्योगिकी (Information and Communication Technologies: ICTs) का अनुप्रयोग है। यह सरकार के लक्ष्यों को पूरा करने के लिए लोगों, प्रक्रियाओं तथा सूचना और प्रौद्योगिकी को एकीकृत करता है। **ई-शासन में विद्यमान संभावनाएं:**

- **त्वरित, सुविधाजनक और लागत प्रभावी सेवा वितरण:** ई-सेवा (e-Service) वितरण के आरंभ होने के साथ, सरकार यथाशीघ्र और अत्यधिक सहूलियत के साथ, कम लागत पर सूचना और सेवाएं प्रदान कर सकती है।
- **पारदर्शिता, जवाबदेही और भ्रष्टाचार में कमी:** सूचना और संचार प्रौद्योगिकी के माध्यम से सूचना का प्रसार, पारदर्शिता को बढ़ाता है, जवाबदेही को सुनिश्चित करता है और भ्रष्टाचार को रोकता है।
- **शासन की पहुंच में विस्तार:** टेलीफोन नेटवर्क का विस्तार, मोबाइल के उपयोग में तीव्र प्रगति, इंटरनेट का प्रसार और अन्य संचार अवसंरचना को सुदृढ़ता प्रदान करने से अधिक से अधिक संख्या में लोक सेवाओं का वितरण संभव होगा।
- **सूचना के माध्यम से लोगों को सशक्त बनाना:** सूचना प्रणाली के माध्यम से नागरिकों की सरकारी कामकाज संबंधी सूचना तक पहुंच में हुई वृद्धि ने, नागरिकों को सशक्त बनाया है और साथ ही उनकी भागीदारी को भी बढ़ाया है। उदाहरण के लिए, हाल ही में राजस्थान सरकार द्वारा आरंभ किया गया **जन सूचना पोर्टल।** यह देश में अपनी प्रकार की पहली प्रणाली है और इसमें एक ही मंच पर 13 विभागों की 23 सरकारी योजनाओं और सेवाओं की सूचना उपलब्ध है। यह पहल **सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005 की धारा 4 (2)** की भावना, अर्थात "सूचना का अग्रसक्रिय प्रकटीकरण" से प्रेरित है ।
- **व्यापार और उद्योग के साथ अंतरक्रिया में सुधार:** जटिल प्रक्रियाओं और अधिकारी तंत्र द्वारा किए जाने वाले विलंब के कारण भारत में औद्योगिक विकास बाधित होता रहा है।

VISION IAS

ई-गवर्नेंस के अंगीकरण के समक्ष चुनौतियां

- **डिजिटल विभाजन:** व्यक्तियों, समुदायों और व्यवसायों की सूचना प्रौद्योगिकी तक पहुंच के मामले में व्यापक स्तर पर पृथक्करण विद्यमान है। सभी व्यक्तियों, समुदायों और व्यवसायों की सूचना प्रौद्योगिकी तक पहुंच एक समान नहीं है।
- **लागत:** भारत जैसे विकासशील देशों में, ई-गवर्नेंस परियोजनाओं के कार्यान्वयन की दिशा में लागत सबसे महत्वपूर्ण बाधाओं में से एक है क्योंकि इसके कार्यान्वयन, परिचालन और विकासात्मक रखरखाव संबंधी कार्यों में अत्यधिक धन की आवश्यकता होती है।
- **निजता और सुरक्षा:** व्यक्ति के द्वारा सरकारी सेवाओं को प्राप्त करने के लिए प्रदान किए जाने वाले व्यक्तिगत डेटा की निजता और सुरक्षा संबंधी चिंताएं ई-गवर्नेंस के कार्यान्वयन के समक्ष एक महत्वपूर्ण बाधा है।
- **स्थानीय भाषा:** ई-गवर्नेंस एप्लिकेशनों की भाषा संबद्ध लोगों की स्थानीय भाषा के अनुकूल होनी चाहिए ताकि वे इन एप्लिकेशनों का उपयोग करने और लाभ उठाने में समर्थ हो सकें।
- **परिवर्तन का प्रतिरोध:** सरकार के साथ पारस्परिक क्रिया की दिशा में ई-गवर्नेंस प्रणाली के लिए आवश्यक परिवर्तनों में कागज-आधारित व्यवस्था से वेब-आधारित व्यवस्था की ओर बढ़ना सबसे बड़ी समस्या है ।

आगे की राह

- **राष्ट्रीय ई-गवर्नेंस सेवा वितरण आकलन, 2019** (इस आकलन का उद्देश्य नागरिक के दृष्टिकोण से सेवा वितरण तंत्र की दक्षता का मूल्यांकन करके **समग्र रूप से ई-गवर्नमेंट के विकास में सुधार करना था**) में निम्नलिखित की अनुशंसा की गयी है:
  - समावेशी डिजिटल पारिस्थितिकी तंत्र का निर्माण करना;
  - समावेशी विकास को बढ़वा देने के लिए ई-साक्षरता प्रदान करना;
  - अधिक से अधिक लोगों को शामिल करने हेतु पहुँच का विस्तार करना;
  - उन्नत सेवा वितरण के लिए नए युग की तकनीकों को अपनाना;
  - शासन में एकरूपता के लिए मानकों को अपनाना; तथा
  - एकीकृत सेवा वितरण - IndEA (इंडिया एंटरप्राइज आर्किटेक्चर) पर ध्यान केंद्रित करना।
- **नागपुर प्रस्ताव:** 'लोक सेवा वितरण को बेहतर करना- सरकारों की भूमिका' विषय पर नागपुर में सम्पन्न हुए क्षेत्रीय सम्मेलन के दौरान नागरिकों को सशक्त बनाने के लिए एक समग्र दृष्टिकोण अपनाया गया था। इस प्रस्ताव में निम्नलिखित बिंदुओं पर बल दिया गया:
  - नागरिक घोषणा पत्रों को समय-समय पर अद्यतन करके नागरिकों को सशक्त बनाना;
  - शिकायत निवारण की गुणवत्ता में सुधार के लिए निर्णय प्रक्रिया को निचले स्तर से ऊपरी स्तर की ओर संचालित करने का दृष्टिकोण अपनाकर नागरिकों को सशक्त बनाना;
  - डिजिटल प्लेटफॉर्मों के माध्यम से बेहतर सेवा वितरण के लिए समग्र दृष्टिकोण अपनाना;
  - गतिशील नीति निर्माण और रणनीतिक निर्णयों, कार्यान्वयन की निगरानी, प्रमुख कर्मियों की नियुक्ति, समन्वय और मूल्यांकन पर ध्यान केंद्रित करना।

8.5. संकटकाल में नागरिक समाज की भूमिका (Role of Civil Society In Times of Crisis)

सुर्ख़ियों में क्यों?

नागरिक समाज संगठन (Civil Society Organisations: CSOs) कोविड-19 महामारी के दौरान लोगों की सहायता करने में अग्रणी भूमिका का निर्वहन कर रहे हैं।

परिचय

- **विश्व बैंक** औपचारिक और अनौपचारिक संगठनों की एक विस्तृत श्रेणी के रूप में नागरिक समाज संगठनों को परिभाषित करता है: जिसमें सामुदायिक समूह, गैर-सरकारी संगठन (NGOs), श्रमिक संघ, स्वदेशी समूह, धर्मार्थ संगठन, विश्वास-आधारित संगठन, व्यवसायी संघ और अन्य प्रतिष्ठान (foundations) शामिल हैं।
- सरकार द्वारा कोविड-19 जैसी वैश्विक महामारी की अभूतपूर्व चुनौती से निपटने हेतु CSOs के नेटवर्क का लाभ प्राप्त करने के लिए नीति आयोग के मुख्य कार्यकारी अधिकारी (श्री अमिताभ कांत) की अध्यक्षता में **अधिकार प्राप्त समूह-6 {Empowered Group 6 (EG 6)}** का गठन किया गया है।
- **EG 6** ने 92,000 CSOs/NGOs के एक नेटवर्क को उनके सामर्थ्य और संसाधनों तथा पोषण, स्वास्थ्य, स्वच्छता व शिक्षा के क्षेत्र में उनकी विशेषज्ञता एवं समुदाय में उनकी व्यापक पहुंच का लाभ प्राप्त करने हेतु उन्हें सक्रिय करने में सफलता प्राप्त की है।

VISION IAS

संकटकाल में CSOs की भूमिका

- **संसाधनों के संग्रहण और उन्हें चैनलाइज़ करने में:** समुदायों के साथ निकटतम एवं सुदृढ़ संबंधों तथा स्वयंसेवकों और संसाधनों के तैयार पूल का लाभ प्राप्त करने हेतु CSOs महत्वपूर्ण हैं। इसके अतिरिक्त ये संसाधनों को नियोजित करने के लिए निजी क्षेत्र के लिए एक चैनल के रूप में भी कार्य करते हैं।
  - **EG 6** द्वारा चिन्हित CSOs/NGOs शहरी क्षेत्रों में कार्य करने वाले, विशेष रूप से प्रवासियों और निराश्रय लोगों के लिए आवश्यक सेवाएं प्रदान करने में स्थानीय प्रशासन को सहायता और समर्थन प्रदान करते रहे हैं।
- **तत्काल राहत प्रदान करने में:** किसी भी प्रकार की आपदा की स्थिति में, सिविल सोसायटी (नागरिक समाज) शिविरों में भोजन प्रदान करके, जल और स्वच्छता की सुविधा सुनिश्चित करके तथा विशेष रूप से सुदूरवर्ती क्षेत्रों में सुरक्षात्मक उपकरण वितरित करके प्रथम उत्तरदाताओं (first responders) के रूप में सहायता प्रदान कर सकते हैं। सरकार के अनुसार, EG 6 द्वारा संगठित NGOs निम्नलिखित कार्यों को करने में सफल रहे हैं:
  - निराश्रय, दिहाड़ी मजदूरों और शहरी गरीब परिवारों को आश्रय प्रदान करना।
  - सामुदायिक कार्यकर्ताओं और स्वयंसेवकों के लिए व्यक्तिगत सुरक्षात्मक उपकरणों (PPE) के वितरण हेतु व्यापक समर्थन।
  - स्वास्थ्य शिविर स्थापित करने में सरकार का समर्थन करना।
  - हॉटस्पॉट्स तथा बुजुर्गों, दिव्यांग जनों, बच्चों, ट्रांसजेंडर व्यक्तियों और अन्य सुभेद्य समूहों को सेवाएं प्रदान करने के लिए नियुक्त स्वयंसेवकों एवं देखभाल करने वालों की पहचान करना।
  - प्रवासी मजदूरों के सामूहिक पलायन को नियंत्रित करना। NGOs जिला प्रशासन और राज्य सरकारों के साथ मिलकर उनके प्रयासों एवं कार्यों का समन्वय कर रहे हैं ताकि देखभाल, क्वारंटाइन और उपचार के उपाय साथ-साथ उपलब्ध कराए जा सकें।
- **जागरूकता अभियान के संचालन में:** गलत सूचना के प्रवाह को ध्यान में रखते हुए, समुदायों, पंचायतों और जन प्रतिनिधियों के मध्य जागरूकता बढ़ाने में CSOs की प्रमुख भूमिका है। सरकार के अनुसार, EG 6 द्वारा संगठित CSOs/NGOs के नेटवर्क निम्नलिखित मुद्दों के संदर्भ में जागरूकता उत्पन्न करने में सफल रहे हैं:
  - रोकथाम, स्वच्छता, सोशल डिस्टेंसिंग, आइसोलेशन और कलंक का सामना करने में।
  - उन्होंने सामुदायिक स्तर पर जागरूकता उत्पन्न करने हेतु सक्रिय भागीदारी के साथ कम्युनिकेशन रणनीति को अलग-अलग स्थानीय भाषा में विकसित किया है ताकि कोविड-19 के प्रसार को प्रभावी तरीके से नियंत्रित किया जा सके।
- **सरकार को जवाबदेह बनाए रखने में:** इस संकटकाल में भ्रष्टाचार का व्यापक जोखिम विद्यमान है। ऐसे में कोविड-19 महामारी के दौरान निर्दिष्ट उद्देश्य पर धन का व्यय सुनिश्चित करने में नागरिक समाज की एक महत्वपूर्ण भूमिका है।

महामारी के दौरान नागरिक समाज द्वारा सामना की जाने वाली चुनौतियां

विद्यमान महामारी के दौरान लॉकडाउन, सोशल डिस्टेंसिंग और क्वारंटाइन उपायों के परिणामस्वरूप, नागरिक समाज को अपने कार्यों को संपादित करने में विभिन्न अवरोधों का सामना करना पड़ रहा है।

- **उनकी जवाबदेही से संबंधित चिंताएं:**
  - विगत कुछ वर्षों में हजारों NGOs पर की गई कार्रवाई ने CSOs को प्रशासनिक विवेकाधिकार के अधीन ला दिया है। भ्रष्टाचार में लिप्त होने और विदेशी फंडिंग से संबंधित मानदंडों का उल्लंघन करने के कारण अनेक NGOs की आलोचना की गई है।
  - इससे CSOs के लिए ऐसे संकटकाल में सरकार की जवाबदेही सुनिश्चित करना कठिन हो गया है। यहां तक कि ये स्वयं भी अपनी विश्वसनीयता को बनाए रखने के प्रयास में संलग्न हैं।
- **सूचना तक पहुँच:**
  - लॉकडाउन के कारण कार्य स्थल, शैक्षणिक संस्थानों, पुस्तकालयों आदि में उपलब्ध सूचनाओं तक भौतिक पहुंच बाधित हुई है।
  - इसके अतिरिक्त, इंटरनेट पर प्रतिबंध और डिजिटल निरक्षरता के साथ-साथ डिजिटल कनेक्टिविटी का अभाव व्यापक रूप से हितधारकों को डिजिटल जुड़ाव या सूचना और संचार तक पहुंच को प्रतिबंधित करता है।
- **नागरिक पहल की प्रगति में बाधा:**
  - संकट की इस घड़ी में किसी पहल की प्रगति और उसके लिए प्रतिभागियों को प्राप्त करना बहुत कठिन हो सकता है, क्योंकि मीडिया तथा जनता का ध्यान मुख्यत: वर्तमान आपात स्थिति पर केंद्रित है।
- **आवागमन पर प्रतिबंध उन गतिविधियों को बाधित करता है जिसके लिए प्रत्यक्ष संपर्क की आवश्यकता होती है:**
  - यह विशेष रूप से सामाजिक जवाबदेही से संबंधित नागरिक समाज के कार्यक्रमों को प्रभावित करता है, क्योंकि अधिकांश सामाजिक जवाबदेही कार्यक्रमों में भाग लेने हेतु स्थानीय समुदायों को शामिल करने की आवश्यकता होती है। किंतु, सोशल डिस्टेंसिंग के अनुपालन की स्थिति में यह संभव नहीं है।

VISION IAS

महामारी के दौरान नागरिक समाज के समक्ष अवसर

- वर्तमान में नागरिक समाज के पास यह अवसर है कि वह ऑनलाइन पत्रकारों और कार्यकर्ताओं के एक नेटवर्क द्वारा समुदाय (जिसमें वे निवास करते है) के साथ एक सुदृढ़ संबंध स्थापित कर अपनी वैधता को बढ़ाएं।
- वर्तमान स्थिति में व्यापक भागीदारी की आवश्यकता उत्पन्न हुई है तथा इसे PM-केयर्स फंड में अत्यधिक दान से समझा जा सकता है। अधिकांश संगठन और लोग प्रवासियों को उनके गृहनगर जाने के मार्ग में सहायता करने हेतु आगे आए हैं। ऐसे में इस कार्य-निष्पादन में शामिल लोगों को रचनात्मक समर्थन प्रदान कर, नागरिक कार्य के वैकल्पिक रूपों के साथ उन्हें संबद्ध किया जा सकता है।
- गैर-सरकारी संगठनों से परे अन्य प्रकार के CSOs के रूप में नए संगठनों का निर्माण किया जा सकता है, जैसे- पेशेवर संघ (यथा- नर्सों का यूनियन), सदस्यता-आधारित संगठन आदि।
    - CSOs के इन विभिन्न रूपों में प्रायः बेहतर संचार संरचनाएं होती हैं और यह कोविड-19 प्रतिक्रियाओं की निगरानी एवं निरीक्षण में विभिन्न लोगों को संलग्न कर सकता है।
    - नए संगठन और नेटवर्क के निर्माण के माध्यम से नागरिक समाज संगठनों को साइलो (silos) को समाप्त करने में सहायता मिल सकती है। पुनः संगठनों के मध्य नवीन तरीके से सामंजस्य स्थापित करने से संकट की इस स्थिति में सहायता प्राप्त हो सकती है।
- **डिजिटल नागरिक जुड़ाव के लिए प्लेटफॉर्म निर्माण:** इस बात के विभिन्न उदाहरण मौजूद हैं कि किस प्रकार डिजिटल भागीदारी का उपयोग करने के लिए अनेक अप्रयुक्त संसाधनों के साथ नागरिक जुड़ाव और जवाबदेही बढ़ाने हेतु इन संगठनों ने ऑनलाइन पद्धति का उपयोग किया है।
    - उदाहरण के लिए, यूनाइटेड किंगडम में, **'फ्रंटलाइन PPE'** व्यक्तिगत सुरक्षात्मक उपकरण की उपलब्धता के बारे में जानकारी प्रदान करता है। स्पेन में, 'फ्रीन ला कर्वा' (Frene La Curva) भोजन या दवा लेने के लिए सहायता या प्रस्ताव के लिए अनुरोध प्रकाशित करता है।

कोविड-19 के दौरान CSOs का योगदान

केंद्र सरकार द्वारा 7 अप्रैल को उच्चतम न्यायालय में प्रस्तुत किए गए एक हलफनामे के अनुसार, 25 मार्च को शुरू हुए लॉकडाउन के पश्चात् से देश भर में 84 लाख लोगों को भोजन उपलब्ध कराया गया।

- इनमें से 54.15 लाख लोगों को राज्य सरकारों और शेष 30.11 लाख को NGOs द्वारा भोजन उपलब्ध कराया गया।
- केंद्र द्वारा प्रस्तुत राज्य-वार आंकड़ों से ज्ञात होता है कि 13 राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों में, गैर-सरकारी संगठनों ने राज्य सरकारों को निःशुल्क भोजन के रूप में मानवीय राहत प्रदान करने में सहायता प्रदान की है। इनमें से अधिकांश भोजन फंसे हुए प्रवासी मजदूरों और गरीबों को मुहैया कराया गया था, जो लॉकडाउन के दौरान आय हानि के कारण बुरी तरह प्रभावित हुए हैं।
    - कुल मिलाकर, 9 राज्य और केंद्र शासित प्रदेश ऐसे थे, जहां NGOs ने लॉकडाउन के दौरान 75% से अधिक लोगों को भोजन उपलब्ध कराया था।
- जरूरतमंदों को भोजन उपलब्ध कराने के अतिरिक्त, देश भर के गैर-सरकारी संगठनों ने शरण लेने वाले लोगों के लिए राहत या आश्रय गृह स्थापित किए हैं। केंद्र सरकार के हलफनामे के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि:
    - भारत में 10.37 लाख लोगों ने राज्य सरकारों और गैर-सरकारी संगठनों द्वारा प्रदान किए गए आश्रय गृहों में शरण ली। इन 10.37 लाख लोगों में से 39.14%, गैर-सरकारी संगठनों द्वारा स्थापित शिविरों में रह रहे हैं।
    - महाराष्ट्र में, 83.56% लोग गैर-सरकारी संगठनों द्वारा स्थापित शिविरों में रह रहे थे। मेघालय में यह आंकड़ा 95% था।
- एक अन्य घटनाक्रम (जो जमीनी स्तर के संगठनों और श्रमिकों के महत्व को प्रदर्शित करता है) यह देखने को मिला है कि, सरकार ने बिना ई-नीलामी प्रक्रिया के माध्यम से खुले बाजार में बिक्री दर (OMSS) के आधार पर इन संगठनों को गेहूं और चावल प्रदान करने के लिए भारतीय खाद्य निगम को निर्देशित किया है।

निष्कर्ष

संयुक्त राष्ट्र संघ सरकारी और निजी व्यवसायों के साथ नागरिक समाज को "तृतीय क्षेत्र" के रूप में संदर्भित करता है। संकट की इस घड़ी में, CSOs राहत पहुँचाने हेतु राज्य के एक महत्वपूर्ण सहयोगी के रूप में उभरे हैं। उन्होंने राज्य की पहुंच को व्यापक बनाने में सहायता प्रदान की है। इस प्रकार उनकी क्षमता को ध्यान में रखते हुए, राज्य के साथ वार्ता करने के तरीके को संस्थागत बनाने की आवश्यकता है। इससे न केवल उनकी वैधता बढ़ेगी बल्कि व्यापक और गहन सहयोग का मार्ग भी प्रशस्त होगा।

VISION IAS

8.6. आकांक्षी जिला कार्यक्रम (Aspirational Districts Programme)

सुर्ख़ियों में क्यों?

हाल ही में, भारत के इंस्टिट्यूट फॉर कॉम्पेटिटिवनेस और अमेरिका स्थित "सोशल प्रोग्रेस इम्पेरेटिव" द्वारा संयुक्त रूप से आकांक्षी जिला कार्यक्रम की एक मूल्यांकन रिपोर्ट जारी की गई।

आकांक्षी जिला कार्यक्रम (Aspirational Districts Programme: ADP) के बारे में

- ADP को भारत सरकार द्वारा देश के **सबसे अविकसित जिलों के सामाजिक-आर्थिक संकेतकों में सुधार में तेजी लाने के लिए जनवरी 2018 में प्रारंभ किया गया था।**
- वर्तमान में, इस कार्यक्रम को भारत के **739 जिलों** में से **112 जिलों** में लागू किया गया है। इन आकांक्षी जिलों में संपूर्ण देश के 35 वामपंथी उग्रवाद (Left Wing Extremism: LWE) से प्रभावित जिले भी शामिल हैं।
- यह कार्यक्रम **निम्नलिखित विचारों से प्रेरित है,** जो नीति और शासन को अपनाने हेतु सरकार की मंशा को प्रकट करते हैं:
  - सफलता से और आगे आर्थिक उपाय करना;
  - समान क्षेत्रीय विकास को सक्षम करना; तथा
  - सहकारी और प्रतिस्पर्धी संघवाद के माध्यम से परिवर्तन का संचालन करना।
- यह कार्यक्रम जीवन की गुणवत्ता और साथ ही साथ नागरिकों की आर्थिक उत्पादकता को भी प्रत्यक्षत: प्रभावित करने वाले **6 मुख्य विषयों में व्यावहारिक एवं मापन योग्य सामाजिक प्रगति के परिणामों पर केंद्रित है।**
  - 6 मुख्य विषयों में सम्मिलित हैं- **स्वास्थ्य और पोषण, शिक्षा, कृषि एवं जल संसाधन, वित्तीय समावेशन व कौशल विकास तथा मूलभूत अवसंरचना।** उपर्युक्त विषयों को पुन: **49 संकेतकों** में विभाजित किया गया है।
- **यह कार्यक्रम तीन मुख्य सिद्धांतों पर आधारित है,** जो **3C दृष्टिकोण** से परिलक्षित होते हैं यथा- केंद्र एवं राज्य योजनाओं का **अभिसरण (Convergence);** केंद्र, राज्यों, जिलों व नागरिकों के मध्य **सहयोग (Collaboration);** तथा एक जन आंदोलन द्वारा संचालित जिलों के मध्य **प्रतिस्पर्धा (Competition)।**
- **इस कार्यक्रम की मूल संरचना:**
  - **केंद्रीय स्तर पर, नीति आयोग** (NITI Aayog) द्वारा कार्यक्रम का संचालन किया जा रहा है और प्रत्येक संबंधित मंत्रालयों ने जिलों की प्रगति के संवर्धन हेतु उत्तरदायित्व स्वीकार किया है।
  - **राज्य सरकारें परिवर्तन की मुख्य संचालक हैं।** प्रत्येक राज्य ने कार्यक्रम के क्रियान्वन के साथ-साथ इसकी प्रगति की निगरानी करने के लिए अपने मुख्य सचिवों की अध्यक्षता में एक समिति का गठन भी किया है।
  - **प्रत्येक जिले के लिए,** अतिरिक्त सचिव / संयुक्त सचिव रैंक के **एक केंद्रीय प्रभारी अधिकारी** को नियुक्त किया गया है, जो अपने स्थानीय स्तर के निष्कर्षों के आधार पर प्रतिक्रिया और अनुशंसाएं प्रदान करेगा।
- **इस कार्यक्रम के तहत नीति आयोग द्वारा डेल्टा रैंकिंग जारी की जाती है।** इसके अंतर्गत चैंपियंस ऑफ चेंज डैशबोर्ड (एक ऑनलाइन डैशबोर्ड) के माध्यम से पांच मुख्य क्षेत्रों (विषयों) में संपादित किए मासिक सुधारों के आधार पर जिलों को रैंक प्रदान की जाती है।

इस रिपोर्ट के प्रमुख निष्कर्ष

- **क्षेत्रों के मध्य उच्च असमानताएं विद्यमान हैं:** स्वास्थ्य और शिक्षा ऐसे क्षेत्र हैं, जिनमें जिले अपने लक्ष्यों को प्राप्त करने के सर्वाधिक निकट हैं। जबकि कृषि और वित्तीय समावेशन चिंता के मुख्य क्षेत्र हैं, जहां अधिकांश जिलों द्वारा अभी अपने लक्ष्यों का 40%-90% तक पूर्ण करना है।
- **ADP द्वारा आर्थिक और सामाजिक प्रभाव उत्पन्न हो रहे हैं:** उदाहरण के लिए, स्वास्थ्य और पोषण के मामले में बच्चों में गंभीर तीव्र कुपोषण (Severe Acute Malnutrition: SAM) को कम करने का आर्थिक प्रभाव **उत्पादकता व आजीवन अधिगम पर प्रभाव** के माध्यम से अनुभव किया गया है। SAM को कम करने के लिए सभी राज्यों पर (केवल आकांक्षी जिलों के लिए) समग्र आर्थिक प्रभाव बहुत अधिक अर्थात् 1.43 लाख करोड़ रुपये है।
- **ADP के उद्देश्य SDGs (के साथ संरेखित होने आवश्यक हैं:** यह कार्य एक समयबद्ध मूल्यांकन संरचना को स्थापित करने के लिए महत्वपूर्ण है। ADP और संधारणीय विकास लक्ष्य (Sustainable Development Goals: SDGs) दोनों ही सर्वाधिक हाशिए पर स्थित समुदायों और लोगों को संधारणीय साधनों के माध्यम से बुनियादी सेवाओं की प्रदायगी पर बल देते हैं। **ADP के उद्देश्य** असमानताओं के विभिन्न रूपों को कम करने के लिए **SDG-10 के मूल प्रयोजनों के साथ संरेखित** हैं।
- **कार्यक्रम से सुदृढ़ श्रेष्ठ प्रथाओं का उद्भव हो रहा है:** ADP कार्यक्रम से सर्वोत्तम प्रथा के तीन प्रमुख क्षेत्रों का उद्भव हुआ है, यथा- **जागरूकता** (कई जिलों ने जागरूकता अभियानों का उपयोग जनसंख्या के उस भाग तक पहुंच स्थापित करने के लिए किया है, जो

VISION IAS

विकास प्रक्रिया से वंचित हो गए हैं), **सहयोग** (निजी एवं नागरिक समाज संगठनों के साथ सरकार के अभिकरणों और स्तरों के मध्य) तथा **डेटा आधारित हस्तक्षेप** (प्रभाव के मापन, सुधारों की निगरानी व साथ ही साथ नीतियों और हस्तक्षेपों की पहचान करने के लिए डेटा का उपयोग करना)।

ADP के समक्ष विद्यमान चुनौतियां

- **अपर्याप्त बजटीय संसाधन।**
- विभिन्न मंत्रालयों के मध्य समन्वय का अभाव।
- **उच्च-गुणवत्ता आधारित प्रशासनिक डेटा का अभाव,** जिससे स्थानीय स्तर पर कार्यान्वयन और डिज़ाइन प्रभावित होता है।
- डेल्टा रैंकिंग बहुत हद तक गुणवत्ता की बजाय **परिमाण** (अर्थात् पहुंच का कवरेज) का आकलन करने पर केंद्रित है।

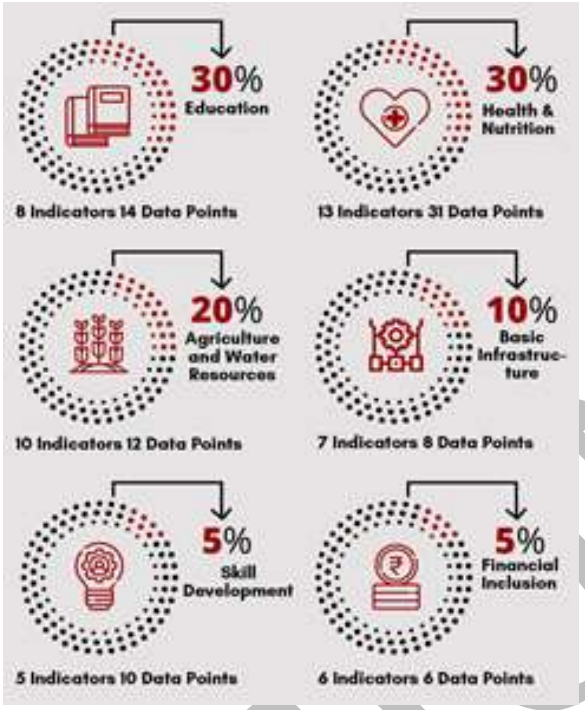

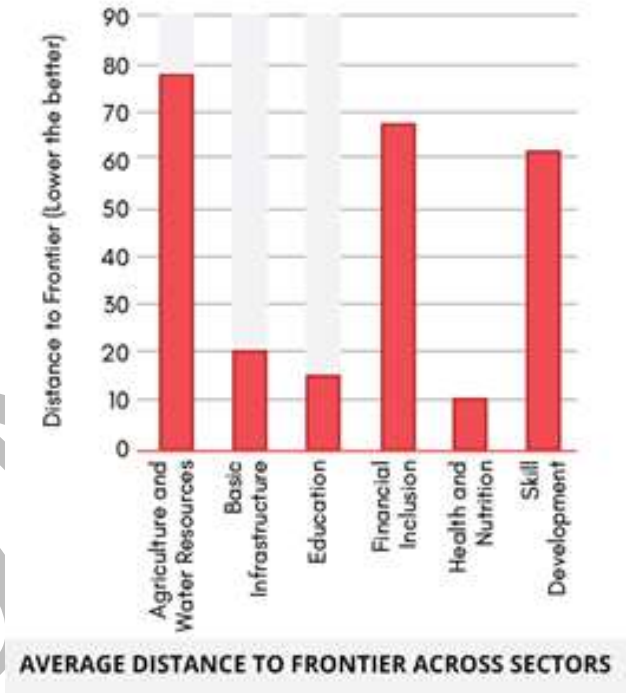

जिलों में सर्वोत्तम प्रथाएँ

- **स्वास्थ्य और पोषण:**
  - **हाइलाकांदी (असम):** यहां एक नवजात बालिका के माता-पिता को **5 अंकुरित पौधे** (नारियल, लीची, असमी नींबू, अमरूद व आंवला) उपहारस्वरूप प्रदान करने की एक अभिनव प्रथा संचालित की गई है। इस प्रथा का औचित्य यह है कि वृक्षों से प्राप्त होने वाले फल का उपयोग बच्चे के भरण-पोषण हेतु किया जा सकता है, जिससे प्रतिरक्षा के निर्माण और कुपोषण के निवारण में सहायता प्राप्त होगी।
- **शिक्षा:**
  - **राजनांदगांव (छत्तीसगढ़) ने प्रत्येक बालिका के लिए स्वच्छता सुविधाओं तक पहुंच सुनिश्चित की है,** जिसके लिए विद्यालयों में शौचालय स्थापित किए गए हैं।
  - **बांका (बिहार) में 'उन्नयन बांका- प्रौद्योगिकी का उपयोग करके शिक्षा का पुनर्सृजन कार्यक्रम** आरंभ किया गया है। इस कार्यक्रम के अंतर्गत शिक्षण परिवेश में सुधार करने हेतु प्रौद्योगिकी का लाभ उठाने का प्रयास किया जाता है।
- **वित्तीय समावेशन क्षेत्र:**
  - **गजपति (ओडिशा):** ओडिशा आजीविका मिशन के तहत जिन पंचायतों में बैंकिंग सुविधाएं नहीं थीं, वहाँ **मिनी बैंक** स्थापित किए गए हैं। इन मिनी बैंकों ने सामान्य सेवा केंद्रों (common service centres) के रूप में कार्य किया है और 27,463 स्वयं सहायता समूह (SHGs) सदस्यों के बैंक खाते खोले हैं। इसके अतिरिक्त, 23,000 खातों को आधार के साथ संबद्ध भी किया गया है।
- **कृषि और जल संसाधन:**
  - **कुपवाड़ा (जम्मू और कश्मीर)** ने कृषि उत्पादकता में सुधार लाने और संसाधनों का इष्टतम उपयोग सुनिश्चित करने के लिए **उच्च घनत्व वाली कृषि** की शुरुआत की है। इसके अंतर्गत पारंपरिक अंकुर आधारित फलोद्यानों को उच्च घनत्व वाले फलोद्यानों में

परिवर्तित किया गया है। इससे उत्पादकों को सेब और अखरोट जैसी फसलों की कृषि में सफलता प्राप्त हुई है तथा फसल उत्पादन में तीन गुना तक वृद्धि हुई है।

- **कौशल विकास:**
  - **गजपति (ओडिशा)** जिले में **दीन दयाल उपाध्याय ग्रामीण कौशल्य योजना (DDU-GKY)** के तहत कौशल विकास के लिए लोगों का नामांकन आरंभ किया गया है। प्रयासों के परिणामस्वरूप, 11,600 उम्मीदवारों को संगठित किया गया है और 450 से अधिक को विभिन्न शिल्पों में प्रशिक्षित किया गया है।
- **बुनियादी अवसंरचना:**
  - **कुपवाड़ा (जम्मू और कश्मीर),** में 176 जल-संचयन पोखरों (water-harvesting tanks) के एक नेटवर्क को सुदृढ़ किया गया है, जिसने जल संरक्षण के माध्यम से किसानों की आय बढ़ाने में सहायता प्रदान की है।
  - **दाहोद (गुजरात),** में **सौर ऊर्जा संचालित सामुदायिक नलकूपों की स्थापना** से पाँच गाँवों के सौ घरों को लाभ प्राप्त हुआ है।

अध्ययन के आधार पर की गई अनुशंसाएं

- **डेटा संग्रह को व्यवस्थित करना तथा प्रभावी फीडबैक तंत्र सुनिश्चित करना:** डेटा संग्रह और प्रसार के लिए अधिक वास्तविक समय प्रणाली की आवश्यकता है, क्योंकि वर्तमान में, सर्वेक्षण संग्रह एवं जिलों के डेटा तक पहुंच के मध्य कुछ माह का अंतर विद्यमान है।
- **नए ज्ञान के आधार पर कार्य योजना को अद्यतित करना:** जिले विभिन्न मापदंडों पर अपनी स्थानीय आवश्यकताओं के अनुरूप इन सर्वोत्तम प्रथाओं से अधिगम को संशोधित कर सकते हैं। साथ ही, तुलनात्मक समकक्ष समूहों के उद्भव के आधार पर जिलों का मूल्यांकन किया जा सकता है।
- **अनुकूलित स्थानीय स्तर के हस्तक्षेपों में संलग्नता:**
  - समुदाय आधारित हस्तक्षेप मॉडल की शुरुआत के लिए **व्यक्तिगत स्थानीय पदाधिकारियों के साथ सहयोग**, हितधारकों के लिए भागीदारी की सुविधा प्रदान कर सकता है। उदाहरण के लिए, स्व-सहायता समूहों और आंगनवाड़ी जैसे महिला-संचालित संस्थानों ने विशेष रूप से योजनाओं के वितरण में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन किया है।
  - **युवा पेशेवरों** को ज़मीनी स्तर के प्रशासन में शामिल किया जाना चाहिए, जो संलग्नताओं की निरंतरता को बढ़ावा दे सकते हैं।
- पूर्वोत्तर क्षेत्र की विशिष्ट अवस्थिति व चुनौतियों के कारण देश के इस भाग में **केंद्रित हस्तक्षेपों के तीव्र कार्यान्वयन** की आवश्यकता है।

निष्कर्ष

- क्षेत्रों और नागरिकों के मध्य आर्थिक लाभ का असमान वितरण केवल समावेशी विकास एवं सामाजिक प्रगति पर लक्षित व्यापक एजेंडे की आवश्यकता को प्रकट करता है।
- समावेशी विकास और सामाजिक प्रगति को आगे बढ़ाने में "क्या कार्य करता है" पर ध्यान केंद्रित करके, ADP भारत की भावी आर्थिक एवं सामाजिक विकास रणनीति के लिए एक आदर्श के रूप में कार्य करने की क्षमता से युक्त है।

8.7. राष्ट्रीय भर्ती एजेंसी (National Recruitment Agency)

सुर्ख़ियों में क्यों?

हाल ही में, केंद्रीय मंत्रिमंडल ने सरकारी नौकरियों के लिए परीक्षाएं आयोजित करने हेतु एक स्वतंत्र निकाय 'राष्ट्रीय भर्ती एजेंसी (National Recruitment Agency: NRA)' के गठन की स्वीकृति प्रदान की है।

अन्य संबंधित तथ्य

- NRA **सरकारी तथा सार्वजनिक क्षेत्रक के बैंकों में गैर-राजपत्रित पदों की भर्ती के लिए सामान्य पात्रता परीक्षा (CET)** आयोजित करेगी।
- सरकार ने **NRA के लिए कुल 1500 करोड़ रुपये की स्वीकृति प्रदान की है** जिसका उपयोग तीन वर्ष की अवधि में किया जाएगा।

प्रमुख विशेषताएं

- NRA, **सोसायटी पंजीकरण अधिनियम** के अंतर्गत पंजीकृत एक सोसायटी के रूप में होगी, जिसकी अध्यक्षता भारत सरकार में सचिव रैंक के अधिकारी(Chairman) द्वारा की जाएगी।
- इसमें रेल मंत्रालय, वित्त मंत्रालय, कर्मचारी चयन आयोग (SSC), रेलवे भर्ती बोर्ड (RRB) तथा बैंकिंग कार्मिक चयन संस्थान (IBPS) के **प्रतिनिधि सम्मिलित होंगे।**
- CET वर्ष में **दो बार आयोजित** की जाएगी। **विभिन्न स्तरों पर** रिक्तियों की भर्ती हेतु **स्नातक स्तर, 12वीं पास स्तर और 10वीं पास स्तर के लिए** अलग-अलग **CET आयोजित की जाएगी।**

VISION IAS

- **आरंभ में CET को तीन एजेंसियों** अर्थात **RRB, IBPS और SSC द्वारा की गई भर्तियों हेतु आयोजित जाएगा**, किन्तु कालांतर में इसे चरणबद्ध रीति से अन्य भर्तियों तक भी विस्तारित किया जाएगा।
- CET **12 प्रमुख भारतीय भाषाओं में आयोजित की जाएगी।**
- CET उम्मीदवारों को शॉर्टलिस्ट करने हेतु प्रथम परीक्षा होगी तथा **प्राप्त अंक तीन वर्ष के लिए मान्य होंगे।**

विद्यार्थियों के लिए लाभ

- CET का उद्देश्य प्रत्येक वर्ष विज्ञापित होने वाली सरकारी नौकरियों हेतु भर्ती एजेंसियों द्वारा आयोजित की जाने वाली **विभिन्न परीक्षाओं** को एकल ऑनलाइन परीक्षा के माध्यम से **प्रतिस्थापित करना है**। इस प्रकार, **CET विभिन्न परीक्षाओं में उपस्थित होने की परेशानी को दूर करता है।**
- CET का आयोजन वर्तमान में प्रचलित शहरी पूर्वाग्रह को दूर करने के लिए देश भर के 1,000 केंद्रों में किया जाएगा। **देश के प्रत्येक जिले में एक परीक्षा केंद्र स्थापित होगा।** यह **अधिक से अधिक महिला अभ्यर्थियों** को आवेदन के लिए प्रोत्साहित करेगा। साथ ही, केंद्र सरकार 117 आकांक्षी जिलों में आवश्यक अवसंरचना में निवेश करेगी।
- इसके लिए एक कॉमन रजिस्ट्रेशन (पंजीयन) और एकल शुल्क मान्य होगा। यह विभिन्न परीक्षाओं के कारण पड़ने वाले **वित्तीय भार को कम करेगी।**
- इसके अतिरिक्त, ऑनलाइन परीक्षा प्रणाली से परिचित कराने हेतु ग्रामीण एवं दूर दराज के क्षेत्रों में अभ्यर्थियों की सहायता के लिए **योजनाबद्ध पहुंच तथा जागरूकता सुविधा** प्रदान की जाएगी, जो अधिक भागीदारी सुनिश्चित करेगी।

संस्थानों के लिए लाभ

- यह 600 करोड़ रुपये की अनुमानित बचत के साथ वर्ष भर आयोजित होने वाली **प्रत्येक परीक्षा के लिए परीक्षा केंद्र स्थापित करने की लागत को कम करेगी।**
- वर्तमान में, प्रत्येक वर्ष लगभग 1.25 लाख सरकारी नौकरियों का विज्ञापन दिया जाता है, जिसके लिए 2.5 करोड़ अभ्यर्थी विभिन्न परीक्षाओं में उपस्थित होते हैं। रिक्त पदों को तेजी से भरकर कुशल प्रशासन को बढ़ावा देते हुए **एक एकल पात्रता परीक्षा भर्ती चक्र (recruitment cycle) को उल्लेखनीय रूप से कम करेगी।**
- **NRA** एकल परीक्षा आयोजित कर तथा अभ्यर्थियों से एक बार शुल्क लेकर **भर्ती चक्र में पारदर्शिता व दक्षता सुनिश्चित करेगी।**

8.8. सिविल सेवाओं में सुधार (Civil Services Reforms)

सुर्ख़ियों में क्यों?

हाल ही में, सिविल सेवाओं में सुधार के भाग के रूप में **मिशन कर्मयोगी** का शुभारंभ किया गया।

सिविल सेवाओं में सुधारों की आवश्यकता

- **जवाबदेही:** जवाबदेही संबंधी पारंपरिक उपायों के अंतर्गत रेखीय या टॉप डाउन (शीर्ष से निचले स्तर की ओर) दृष्टिकोण शामिल है तथा आवश्यक नहीं कि यह दृष्टिकोण जवाबदेही संबंधी संस्कृति को समग्र रूप से दक्ष मार्गदर्शन प्रदान करे। इस प्रकार, जवाबदेही की बहुआयामी अनिवार्यता को सुनिश्चित करना आवश्यक है।
- **प्रदर्शन को महत्व देना:** वर्तमान में सिविल सेवाओं में पदोन्नति की व्यवस्था पदावधि के वर्षों पर आधारित है तथा इसमें कार्यकाल की सुरक्षा भी सम्मिलित है। सिविल सेवाओं की यह व्यवस्था सक्रिय और योग्य सिविल सेवकों को उदासीन बना रही है तथा कई पदोन्नति संरक्षणवादी प्रणाली के आधार पर भी की जाती हैं।
- **वरिष्ठ स्तर की नियुक्तियों के लिए विशिष्ट ज्ञान की आवश्यकता:** समय के साथ-साथ नीति निर्माण का कार्य और अधिक जटिल होता जा रहा है, इसलिए यह विषयगत विशिष्ट ज्ञान रखने वाले लोगों की आवश्यकता को अनिवार्य बनाता है। विद्यमान व्यवस्था में, केंद्रीय सचिवालय में सबसे वरिष्ठ स्तर पर नियुक्तियों के साथ ही क्षेत्र में कार्य करने के लिए शीर्ष पदों पर, भारतीय प्रशासनिक सेवा (IAS) के अधिकारियों को ही नियुक्त किया जाता है, जिनमें विषयगत विशिष्ट ज्ञान का अभाव होता है।
- **प्रभावी अनुशासित व्यवस्था:** वर्तमान में, अनुशासन संबंधी नियम इतने जटिल हैं कि अवज्ञा तथा दुर्व्यवहार के लिए किसी दोषी कर्मचारी के विरूद्ध कार्रवाई करना कठिन हो जाता है। इस प्रकार, एक बार नियुक्ति हो जाने के पश्चात्, किसी कर्मचारी को हटाना या पदावनति करना लगभग असंभव हो जाता है।
- **कार्य संस्कृति में परिवर्तन:** अधिकांश सरकारी विभाग निम्नस्तरीय कार्य संस्कृति तथा अल्प उत्पादकता का सामना कर रहे हैं।
- **नियम तथा प्रक्रियाओं को सरल बनाना:** नागरिकों की सामान्य सरकारी गतिविधियों हेतु निर्मित सरकारी नियम व प्रक्रियाएं अप्रासंगिक और अक्षम हो गए हैं। इस प्रकार, इससे लोक सेवकों को कार्य करने में विलंब एवं उत्पीड़न का अवसर प्राप्त होता है।
- **कार्यकाल की स्थिरता:** कभी भी स्थानांतरण किए जाने का खतरा अधिकारियों के मनोबल तथा अवांछित स्थानीय दबाव का विरोध करने की उनकी क्षमता को नकारात्मक रूप से प्रभावित करता है।

VISION IAS

8.8.1. मिशन कर्मयोगी (Mission Karmayogi)

सुर्ख़ियों में क्यों?

हाल ही में, केंद्रीय मंत्रिमंडल द्वारा "मिशन कर्मयोगी"- राष्ट्रीय सिविल सेवा क्षमता विकास कार्यक्रम (National Programme for Civil Services Capacity Building: NPCSCB) को स्वीकृति प्रदान की गई है।

प्रमुख विशेषताएँ

- **वित्तीय आवंटन:** इसके तहत लगभग 46 लाख केंद्रीय कर्मचारियों को सम्मिलित करने के लिए, वर्ष 2020-21 से लेकर वर्ष 2024-25 तक, **5 वर्षों की अवधि के दौरान 510.86 करोड़ रुपये** की धनराशि व्यय की जाएगी। यह व्यय आंशिक रूप से 50 मिलियन अमरीकी डॉलर तक की सहायता से **बहुपक्षीय सहयोग द्वारा वित्त पोषित** है।
- **NPCSCB के मुख्य मार्गदर्शक सिद्धांतों के अंतर्गत शामिल हैं:**
  - सिविल सेवकों को उनके पद की आवश्यकताओं के अनुसार आवंटित कार्यों को उनकी क्षमताओं के साथ समायोजित कर **'नियम आधारित (Rules based)' से 'भूमिका आधारित (Roles based)' मानव संसाधन (HR) प्रबंधन को अपनाया जाएगा।**
  - **'ऑफ साइट लर्निंग' (सीखने की पद्धति)** को बेहतर बनाते हुए **'ऑन साइट लर्निंग'** पर बल दिया जाएगा।
  - शिक्षण सामग्री, संस्थानों और कर्मियों सहित **साझा प्रशिक्षण अवसंरचना** के एक पारिस्थितिकी तंत्र का निर्माण करना।
  - सिविल सेवा से संबंधित सभी पदों को **भूमिकाओं, गतिविधियों तथा दक्षता ढांचा (Framework of Roles, Activities and Competencies: FRACs)** आधारित दृष्टिकोण के साथ अद्यतित करना।
  - सभी सिविल सेवकों को अपनी **व्यवहारात्मक, कार्यात्मक और कार्यक्षेत्र से संबंधित दक्षताओं (Behavioral, Functional and Domain Competencies)** को निरंतर विकसित एवं सुदृढ़ करने का अवसर उपलब्ध कराना।
  - सभी केंद्रीय मंत्रालयों और विभागों को साझे पारिस्थितिकी तंत्र के **सह-निर्माण** की दिशा में **अपने संसाधनों को प्रत्यक्ष रूप से निवेश करने में सक्षम बनाना।**
  - सार्वजनिक प्रशिक्षण संस्थानों, विश्वविद्यालयों आदि सहित सीखने की प्रक्रियाओं से संबंधित **सर्वोत्तम विषय-वस्तु के निर्माताओं के साथ** साझेदारी करना।
- इस कार्यक्रम को **एकीकृत सरकारी ऑनलाइन प्रशिक्षण-आईगॉट कर्मयोगी प्लेटफॉर्म (iGOT Karmayogi Platform)** की स्थापना द्वारा कार्यान्वित किया जाएगा। यह क्षमता निर्माण के लिए व्यवस्थित व डिजिटल ई-लर्निंग सामग्री उपलब्ध करवाएगा। क्षमता विकास के अतिरिक्त, सेवा मामलों जैसे कि परिवीक्षा अवधि (probation period) के बाद पुष्टीकरण या स्थायीकरण, तैनाती, कार्य निर्धारण और रिक्तियों की अधिसूचना इत्यादि को अंततः प्रस्तावित दक्षता या योग्यता संरचना के साथ एकीकृत कर दिया जाएगा।
  - आईगॉट (iGOT)-कर्मयोगी मंच के सभी उपयोगकर्ताओं के प्रदर्शन मूल्यांकन के लिए एक **उपयुक्त निगरानी और मूल्यांकन ढांचा** भी निर्धारित किया जाएगा, ताकि **मुख्य प्रदर्शन संकेतकों** (Key Performance Indicators) का **डैशबोर्ड अवलोकन** तैयार किया जा सके।
- **संस्थागत संरचना:**
  - **प्रधान मंत्री की सार्वजनिक मानव संसाधन परिषद {Prime Minister's Public Human Resources (HR) Council}:** यह परिषद **प्रधान मंत्री की अध्यक्षता** में सिविल सेवा सुधार और क्षमता निर्माण के कार्य को रणनीतिक दिशा प्रदान करने के लिए शीर्ष निकाय के रूप में कार्य करेगी। इसमें कुछ चयनित केंद्रीय मंत्री, मुख्यमंत्री, प्रख्यात सार्वजनिक मानव संसाधन पेशेवर, विचारक, वैश्विक विचारक और लोक सेवा पदाधिकारी शामिल होंगे।
- **क्षमता विकास आयोग:** इस आयोग की निम्नलिखित भूमिका होगी-
  - वार्षिक क्षमता निर्माण योजनाओं का अनुमोदन करने में प्रधान मंत्री की सार्वजनिक मानव संसाधन परिषद की सहायता करना तथा हितधारक विभागों के साथ इन योजनाओं के कार्यान्वयन का समन्वय एवं पर्यवेक्षण करना।
  - सिविल सेवा क्षमता विकास से संबद्ध सभी **केंद्रीय प्रशिक्षण संस्थानों का कार्यात्मक निरीक्षण** करना।
  - सरकार को मानव संसाधन के प्रबंधन, प्रशिक्षण और क्षमता विकास के क्षेत्रों में आवश्यक नीतिगत उपायों का सुझाव देना।
- **स्पेशल पर्पज व्हीकल (विशेष प्रयोजन वाहन):** इसकी स्थापना कंपनी अधिनियम, 2013 की धारा 8 के तहत ऑनलाइन प्रशिक्षण के लिए डिजिटल परिसम्पत्ति और **आईगॉट-कर्मयोगी** प्लेटफॉर्म का स्वामित्व धारण एवं संचालन करने के लिए की जाएगी।
- **कैबिनेट सचिव की अध्यक्षता में समन्वय यूनिट (Coordination Unit) की भी स्थापना की जाएगी।**

VISION IAS

अपेक्षित लाभ (Intended Benefits)

- **कुशल सेवा वितरण सुनिश्चित होगा:** क्योंकि, विशिष्ट भूमिका-क्षमताओं वाले सिविल सेवकों को कार्य आवंटित किया जाएगा और नियुक्ति करने वाले अधिकारियों के पास सही कार्य के लिए उचित उम्मीदवार के चयन हेतु तैयार डेटा उपलब्ध होगा।
- **शासन में जवाबदेही एवं पारदर्शिता का समावेश होगा:** यह वास्तविक समय आधारित मूल्यांकन और लक्ष्य संचालित तथा निरंतर प्रशिक्षण के माध्यम से सामान्य जन के लिए "ईज़ ऑफ लिविंग" और सभी के लिए "ईज़ ऑफ डूइंग बिज़नेस" सुनिश्चित करेगा।
- **नागरिक-केन्द्रीयता (Citizen-Centricity) दृष्टिकोण सृजित होगा:** 'ऑन-साइट लर्निंग' द्वारा सरकार और नागरिकों के मध्य अन्तराल को कम किया जा सकता है।
- **भारतीय सिविल सेवकों को भविष्य के लिए तैयार करेगा:** प्रौद्योगिकी संचालित शिक्षा के माध्यम से और संस्थानों में प्रशिक्षण प्राथमिकताओं तथा शिक्षा शास्त्र के मानकीकरण के द्वारा उन्हें और अधिक नवोन्मेषी, पेशेवर, प्रगतिशील व प्रौद्योगिकी-समर्थ बनाया जाएगा।
- **सहयोगात्मक और साझा पारिस्थितिकी-तंत्र निर्मित होगा:** यह विभाजित कार्य संचालन संस्कृति को समाप्त कर देगा, प्रयासों के दोहराव को कम करेगा तथा एक नई कार्य संस्कृति का समावेश करेगा, जो व्यक्तिगत और साथ ही संस्थागत क्षमता निर्माण पर ध्यान केंद्रित करेगी।
- **सामान्यीकरण और विशेषज्ञता के मध्य का अंतराल समाप्त होगा,** जो सभी स्तरों पर मध्य-स्तरीय प्रशिक्षण के अभाव के कारण मौजूद है।

सिविल सेवाओं से संबंधित आरंभ किए गए कुछ अन्य सुधार

- **पार्श्व प्रवेश (Lateral entry):** पार्श्व प्रवेश या लैटरल एंट्री का आशय, पदोन्नति (प्रमोशन) के माध्यम से नियमित भर्तियों के बजाए प्रशासनिक पदानुक्रम के मध्य या वरिष्ठ स्तर पर डोमेन एक्सपर्ट्स (अर्थात् विषय विशेषज्ञों) की सीधी भर्ती (direct induction) से है। ज्ञातव्य है कि कुछ समय पूर्व कार्मिक और प्रशिक्षण विभाग (Department of Personnel and Training: DoPT) ने प्रदर्शन के आधार पर तीन से पांच वर्षों के लिए अल्पकालिक अनुबंध पर नियुक्ति हेतु संयुक्त सचिव स्तर के 10 पदों के लिए आवेदन आमंत्रित किए थे।
- **"360 डिग्री" प्रदर्शन मूल्यांकन तंत्र ("360 degree" performance appraisal mechanism):** वरिष्ठ नौकरशाहों के लिए इसकी शुरुआत की गयी है। इसके तहत अधिकारियों को उनके वरिष्ठों, जूनियर्स और बाह्य हितधारकों से प्राप्त व्यापक फीडबैक (प्रतिपुष्टि) के आधार पर श्रेणीकृत किया जाता है।

इस कार्यक्रम से संबंधित चिंताएं

- **प्रोत्साहन-संबद्ध प्रशिक्षण से संबंधित चुनौतियां:** प्रदर्शन मूल्यांकन के लिए विगत पद्धतियां सुसंगत, विश्वसनीय और पारदर्शी नहीं रही हैं।
- **प्रणाली का अति-केंद्रीयकरण:** एक विविध सार्वजनिक क्षेत्र के कार्यबल को एक विकेंद्रीकृत प्रशिक्षण और अधिगम पारिस्थितिकी-तंत्र की आवश्यकता होती है।
- दूरस्थ स्व-अधिगम (Distance self-learning) अनुपूरक कौशल का निर्माण कर सकती है और अग्रिम पंक्ति पर ज्ञान को अद्यतित कर सकती है, परन्तु यह **मुख्य ज्ञान विकास** (core knowledge development) के लिए भलीभांति अनुकूल नहीं हो सकती है।
- **स्व-अधिगम का पूर्ण भार पहले से ही अतिभारित व्यक्तियों को हस्तांतरित हो सकता है**, जिससे समग्र प्रेरणा और मनोबल में गिरावट आ सकती है।
- **प्रतिरोध:** भारतीय नौकरशाही काफी हद तक यथास्थितिवादी और रूढ़िवाद के पक्ष में रही है। यह प्रवृत्ति सुधारों और नवाचारों की विरोधी है। इसलिए, इस स्तर पर सुधार से नौकरशाही के भीतर से कई प्रतिरोधों का सामना करना पड़ सकता है।

निष्कर्ष

प्रस्तावित सुधार की केंद्रीकृत संस्थागत संरचना को विभिन्न कार्मिकों और शिक्षार्थियों के संदर्भों तथा आवश्यकताओं की समझ द्वारा संतुलित किया जाना चाहिए। प्रशिक्षण और प्रोत्साहन को सफलतापूर्वक संबद्ध करने के लिए पूर्ण पारदर्शिता के साथ विश्वसनीय मूल्यांकन हेतु एक रूपरेखा विकसित की जानी चाहिए। संगठनात्मक संस्कृति को बेहतर बनाने के लिए प्रशिक्षण को साझा दृष्टि विकास, उद्देश्यपूर्ण कार्य और कर्मचारियों के सशक्तीकरण के साथ पूरक होना चाहिए।

8.9. स्वयं सहायता समूह (Self- Help Groups)

सुर्ख़ियों में क्यों?

हाल ही में, सरकार ने **वर्ष 2022 तक कुल 75 लाख स्वयं सहायता समूहों (Self Help Groups: SHGs)** को गठित करने की योजना बनाई है, ताकि अधिक से अधिक महिलाओं की आजीविका को सुनिश्चित किया जा सके।

स्वयं सहायता समूह के बारे में

- SHG को राष्ट्रीय कृषि और ग्रामीण विकास बैंक (नाबार्ड/NABARD) द्वारा, एकसमान वर्ग के लगभग 20 व्यक्तियों के समूह के रूप में परिभाषित किया गया है, जो अपनी समान समस्याओं का समाधान करने के लिए एकजुट होते हैं। वे अपने सदस्यों को अल्प ब्याज वाले ऋण उपलब्ध कराने के लिए अपने द्वारा बचत किए गए संसाधनों का उपयोग करते हैं।
- **SHGs की कार्य पद्धति:**
  - SHGs के सदस्य **निश्चित अंतराल पर बैठक** करते हैं तथा इन बैठकों में पूर्व निर्धारित राशि संबंधी **अपनी बचतों को एकत्रित** करते हैं।
  - ये समूह सामान्यतया नियमित रूप से अपनी छोटी-छोटी बचतों के योगदान के माध्यम से **साझा निधि (common fund)** का सृजन करते हैं।
  - इस साझा निधि में से सदस्यों को **अल्प ब्याज वाले ऋण प्रदान किए जाते हैं।**
  - एक SHG किसी **बैंक से तब संबद्ध होता** है, जब बैंक द्वारा SHG का बचत बैंक खाता खोल दिया जाता है। इस प्रकार बैंक द्वारा SHG को ऋण प्रदान किया जाता है, तत्पश्चात समूह अपनी नीतियों के अनुसार अपने सदस्यों को कर्ज देते हैं।
  - बैंकों द्वारा **SHG के नाम पर ऋण** प्रदान किया जाता है तथा बैंक को ऋण का पुनर्भुगतान करना समूह के सदस्यों की सामूहिक जवाबदेही होती है।
  - इन्हें बैंकों से ऋण प्राप्त करने के लिए किसी **संपार्श्विक सुरक्षा (collateral security) की आवश्यकता नहीं** होती है, क्योंकि बैंक ऋण के लिए **समूह की एकजुटता तथा सहकर्मियों का दबाव** एक सुरक्षा के रूप में कार्य करता है।

भारत में SHG आंदोलन के बारे में

- **भारत में स्वयं-सहायता समूह आंदोलन का आरंभ 1980 के दशक में हुआ,** जब कई गैर-सरकारी संगठनों (NGOs) ने सामाजिक तथा वित्तीय सहायता प्रदान करने के लिए औपचारिक साधन प्रदान करने के उद्देश्य से ग्रामीण क्षेत्रों में निर्धन समुदायों को संगठित तथा व्यवस्थित किया था।
- **राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक (नाबार्ड)** के गठन को स्वयं सहायता समूहों के विकास के लिए एक उत्प्रेरक के रूप में माना जाता है। SHGs की भूमिका को स्वीकार करते हुए, RBI द्वारा एक परिपत्र के माध्यम से बैंकों को महिलाओं की सदस्यता वाले स्वयं सहायता समूहों को ऋण प्रदान करने की अनुमति भी दे दी गई थी।
- इस कार्यक्रम ने तब और गति प्राप्त की, जब नाबार्ड ने **स्वयं-सहायता समूह बैंक लिंकेज कार्यक्रम** (Self-Help Group Bank Linkage Program: SBLP) के तहत कुछ स्वयं सहायता समूहों को बैंक के साथ संबद्ध करना आरंभ किया था।
- SHGs को बैंकों के साथ संबद्ध करने का उद्देश्य बैंकों और उनके ग्रामीण ग्राहकों दोनों के लिए लेन-देन की लागत में कटौती करने के लिए बैंकों तथा ग्रामीणों निर्धनों के बीच SHGs की मध्यस्थता का उपयोग करना है।
- **राष्ट्रीय ग्रामीण/शहरी आजीविका मिशन (DAY-NRLM) तथा (DAY-NULM):** इसका उद्देश्य ग्रामीण/शहरी निर्धन महिलाओं को स्वयं सहायता समूहों में संगठित करना तथा आर्थिक गतिविधियां आरंभ करने के लिए उन्हें लगातार पोषित तथा सहायता प्रदान करना है। इसके तहत उन्हें तब तक सहायता प्रदान की जाती है जब तक कि वे समय के साथ-साथ अपने जीवन स्तर में सुधार हेतु आवश्यक आय में पर्याप्त वृद्धि नहीं कर लें और चरम निर्धनता से बाहर नहीं आ जाएं।

स्वयं सहायता समूहों का महत्व

- **जमीनी स्तर पर सशक्तीकरण:** SHGs का निहित उद्देश्य लोगों के सशक्तीकरण के माध्यम से उनकी भागीदारी में वृद्धि करके अन्यायपूर्ण सामाजिक संबंधों का सामना करना है।
- **लैंगिक समानता को बढ़ावा:** निर्धनता उन्मूलन कार्यक्रमों का मूलाधार महिला स्वयं सहायता समूह हैं, क्योंकि वर्तमान में देश भर में 60 लाख से अधिक स्वयं सहायता समूहों द्वारा 6 करोड़ से अधिक महिलाओं को संगठित किया जा रहा है।
- **वित्तीय अनुशासन को बढ़ावा:** एक अध्ययन के अनुसार, स्वयं सहायता समूह के सदस्यों वाले परिवारों में औपचारिक माध्यम (मुख्य रूप से स्वयं सहायता समूहों की साझा निधि से) से ऋण लेने की प्रवृत्ति 8% अधिक थी तथा अनौपचारिक माध्यम से ऋण प्राप्त करने की प्रवृत्ति 9% कम थी (अर्थात् मित्रों, दुकानदारों आदि से ऋण लेने में गिरावट)।

VISION IAS

- **ग्रामीण तथा मानव संसाधन विकास:** SHGs को केवल ऋण प्रदान करने वाले माध्यम के रूप में ही संदर्भित नहीं किया जाना चाहिए, बल्कि ये उद्यमशीलता हेतु प्रशिक्षण, आजीविका संवर्धन गतिविधि इत्यादि जैसी अन्य कई सेवाओं हेतु वितरण प्रणाली के रूप में भी कार्य करते हैं।

SHGs के समक्ष चुनौतियां

- **स्थिर वृद्धि:** आरंभिक सफलता के बावजूद भी विगत पांच वर्षों में **स्वयं-सहायता समूह बैंक लिंकेज कार्यक्रम** की वृद्धि दर धीमी है। इसके लिए कई कारक समेकित रूप से उत्तरदायी हैं, जैसे कि:
  - औसत ऋण आकार से कम ऋण की उपलब्धता।
  - **स्व-सहायता समूह संघों** द्वारा निगरानी तथा प्रशिक्षण सहायता का अभाव।
- **SHGs के विकास में राज्यों के मध्य व्यापक असमानता:** विभिन्न राज्यों में SHGs आंदोलन की असमान वृद्धि तथा बैंकों के साथ SHGs की ऋण संबद्धता में व्यापक असमानताएं व्याप्त हैं।
- **शासन संबंधी समस्याएं:** विभिन्न अध्ययनों से ज्ञात हुआ है कि SHGs अपने कार्य संचालन में गुणवत्ता, पारदर्शिता तथा अनियमितता का सामना कर रहे हैं। इसके साथ ही, ग्रामीण महिलाओं की निम्नस्तरीय साक्षरता भी इस संबंध में और चुनौतियां प्रस्तुत करती हैं।
- **SHGs का विघटन:** इन समूहों में समन्वय संबंधी मुद्दों के कारण SHGs समय के साथ विघटित हो रहे हैं। SHGs के कुछ सदस्य ही वांछित वित्तीय दस्तावेज के प्रबंधन का ज्ञान रखते हैं, इसलिए यदि वे सदस्य SHG की सदस्यता त्याग दें, तो SHG भी विघटित हो जाएगा।

आगे की राह: स्वयं-सहायता समूहों का भविष्य

- **समर्थन तथा निगरानी:** स्वयं सहायता समूहों की नियमित निगरानी की जानी चाहिए तथा उनके प्रवर्तकों को समूह की संरचनाओं को सुदृढ़ करना चाहिए ताकि सदस्यों को कम से कम प्रथम पांच वर्ष अपेक्षित सहायता मिल सके।
- **वित्तीय समावेशन का लाभ उठाना:** सरकार को देश के वित्तीय समावेशन कार्य-योजना का विस्तार करने के लिए स्वयं सहायता समूह मंच का लाभ उठाना चाहिए।
- **सरकारी सेवाओं के वितरण के लिए SHG नेटवर्क का उपयोग करना:** सामाजिक सुरक्षा योजनाएं इत्यादि जैसे सरकार के कार्यक्रमों को SHGs के माध्यम से क्रियान्वित किया जा सकता है। इससे न केवल पारदर्शिता व दक्षता में सुधार होगा, बल्कि समाज, महात्मा गांधी द्वारा अभिकल्पित स्व-शासन के उद्देश्यों को भी प्राप्त करने में अग्रसर भी हो सकेगा।
- **सामाजिक समस्याओं से निपटने के लिए SHGs एक साधन के रूप में:** SHGs की सामाजिक पूंजी विभिन्न सामाजिक मुद्दों का समाधान करने के लिए उपयोगी सिद्ध हो सकती है। इस प्रकार वृद्धिशील सामाजिक पूंजी विद्यमान सामाजिक संकटों के निवारण का एक माध्यम भी हो सकती है। उदाहरण के लिए, कई सफल प्रकरण दृष्टिगोचर हुए हैं, जहां SHGs की सदस्य महिलाएं अपने गांव में शराब की दुकानों को बंद करने के लिए एकत्रित हुई हैं।
- **आधुनिकीकरण अभियान:** भारत सरकार ने हाल ही में डिजिटल वित्तीय समावेशन पर ध्यान केंद्रित किया है, जिसे देखते हुए स्वयं सहायता समूहों का डिटिलीकरण करने संबंधी प्रयास किए जा रहे हैं।

8.10. अप्रचलित कानूनों का निरसन (Repeal of Obsolete Laws)

सुर्ख़ियों में क्यों?

हाल ही में, संसद द्वारा "अप्रासंगिक" हो चुके अनेक पुराने केंद्रीय कानूनों को निरस्त कर दिया गया है।

अप्रचलित कानूनों को निरस्त करने के कारण

- जब किसी **कानून की विषय-वस्तु अप्रचलित हो चुकी होती है** तथा उक्त विषय-वस्तु को प्रशासित करने की और अधिक आवश्यकता नहीं होती है।
- जब किसी **कानून का उद्देश्य पूर्ण हो चुका** होता है और वर्तमान में उसकी आवश्यकता नहीं है।
- जब एक ही **विषय-वस्तु के विनियमन** हेतु कोई नया कानून या विनियमन विद्यमान है।
- कई ऐसे कानून हैं जो एक **विशिष्ट समूह के लिए अपमानजनक** होते हैं।

कानूनों को निरस्त करने से संबंधित मुद्दे

- **अप्रचलित कानूनों की पहचान:** रामानुजम समिति के अनुसार, 15 अक्टूबर 2014 तक 2,781 केंद्रीय अधिनियम अस्तित्व में थे। इतनी व्यापक संख्या में कानूनों की विद्यमानता पहचान के कार्य को कठिन बना देती है। हालांकि, अनेक प्रयासों के बावजूद, कई अप्रचलित कानून अभी भी अस्तित्व में हैं।

- **समय की बर्बादी:** ऐसे मामले कदाचित ही प्रकट हुए हैं जब किसी कानून को पूर्ण रूप से निरस्त किया गया हो। इसलिए, किसी कानून को निरसित करने हेतु उसके प्रत्येक खंड की जांच करने की आवश्यकता होती है, परिणामत: इस प्रक्रिया में अत्यधिक समय की हानि होती है।
- **नागरिकों को सूचित करना:** सामान्य नागरिक के लिए यह पता लगाना कठिन होगा कि किस विशिष्ट अधिनियम या प्रावधान को निरस्त किया गया है अथवा नहीं। प्रत्येक निरसन एवं संशोधन विधेयकों की जाँच करके यह देखना होगा कि क्या निरस्त किया गया है। इससे लोगों के शोषण की संभावना बढ़ जाती है।

भारत में कानूनों का निरसन

- भारत में, किसी कानून को केवल विधायिका द्वारा निरस्त या संशोधित किया जा सकता है, जो उस विषय (केंद्र या कोई राज्य) पर कानून पारित करने के लिए सक्षम है।
- हाल ही में, भारत सरकार द्वारा वर्ष 2015, 2016, 2017 और 2019 में चार निरसन अधिनियमों के माध्यम से 1,175 कानूनों को निरस्त कर दिया गया है।
- यह **विधि-आयोग** और **रामानुजम समिति** की अनुसंशाओं पर आधारित है। रामानुजम समिति का गठन सितंबर 2014 में प्रधानमंत्री कार्यालय (PMO) द्वारा केंद्र सरकार के उन कानूनों की पहचान करने हेतु किया गया था, जिन्हें निरस्त किया जा सके।

उठाए जाने वाले कदम

- **कानूनों को आवधिक रूप से निरसित करना:** सरकार को एक तंत्र स्थापित करना चाहिए जहां केंद्र, राज्य विधान-मंडल और नगरपालिका स्तर पर विधिनिर्माताओं द्वारा अप्रचलित कानूनों एवं विनियमों को अद्यतित, संशोधित व निरसित किया जा सके।
- **भावी कानूनों के लिए सनसेट क्लॉज:** सरकार को अप्रचलित कानूनों की आवधिक जांच सुनिश्चित करने हेतु भावी कानूनों के लिए "सनसेट क्लॉज" को शामिल करना चाहिए।
- **न्यायिक सक्रियता:** न्यायालय को 'अप्रचलन (desuetude)' की प्रथा को अपनाना चाहिए, अर्थात् एक ऐसा मानदंड जिसके तहत दीर्घ समय तक प्रयुक्त या लागू न किए गए कानून स्वतः ही समाप्त हो जाएं।

निष्कर्ष

अप्रचलित कानूनों को निरस्त करने के प्रयासों का कठोरता से अनुपालन किया जाना चाहिए ताकि भारत अपनी अर्थव्यवस्था के लिए "ईज ऑफ़ डूइंग बिज़नेस" और अपने समाज के लिए "ईज ऑफ़ लिविंग" को प्रोत्साहित कर सके।

9. स्थानीय शासन (Local Governance)

9.1. पंचायतें और महामारी (Panchayats and Pandemic)

सुर्ख़ियों में क्यों?

राष्ट्रीय पंचायती राज दिवस (24 अप्रैल) के अवसर पर पंचायत प्रतिनिधियों के साथ संवाद के दौरान प्रधान मंत्री द्वारा संकट की इस घड़ी में उनके द्वारा अपनाए गए अग्रसक्रिय दृष्टिकोण के लिए स्थानीय सरकारों की सराहना की गई।

परिचय

- **73वें संविधान संशोधन अधिनियम, 1992** के माध्यम से स्व-शासन की संस्थाओं के रूप में जिला, मध्यवर्ती और ग्राम स्तर पर पंचायतों का गठन अनिवार्य घोषित कर दिया गया था।
    - यह ज़मीनी स्तर पर सामाजिक न्याय और आर्थिक विकास हेतु कार्यक्रमों की योजना निर्माण एवं कार्यान्वयन के लिए **शक्तियों व उत्तरदायित्वों** की प्रदायगी हेतु प्रावधान करता है।
- **तीस लाख से अधिक निर्वाचित प्रतिनिधियों के साथ** देश का स्थानीय शासन अथवा पंचायती राज वर्तमान महामारी के विरुद्ध संघर्ष में अग्रसक्रिय भूमिका का निर्वहन कर रहा है।
    - पंचायतों द्वारा लोगों के उपचार हेतु अवसंरचनाओं को तैयार करने, सामुदायिक रसोइयों (community kitchens) के लिए खाद्यान्नों की व्यापक आपूर्ति का प्रबंधन करने और ग्राम स्तर पर **स्वच्छता व "सोशल डिस्टेंसिंग" को बनाए रखने** में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन किया गया है।
    - पंचायतें नीति निर्माताओं और समुदाय के मध्य एक सेतु के रूप में उभरी हैं, जिन्हें इस प्रकार के निर्णयों को अनुकूलित या कार्यान्वित करना होगा।

राष्ट्रीय पंचायती राज दिवस, 2020 के अवसर पर प्रधान मंत्री द्वारा वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग के माध्यम से संपूर्ण देश की ग्राम पंचायतों के सरपंचों के साथ संवाद स्थापित किया गया। उन्होंने एक एकीकृत **ई-ग्राम स्वराज पोर्टल** और **स्वामित्व योजना** का शुभारंभ किया।

- **ई-ग्राम स्वराज पोर्टल** ग्राम पंचायत विकास योजनाओं के निर्माण और कार्यान्वयन में सहायता प्रदान करेगा। यह पोर्टल वास्तविक समय में निगरानी और जवाबदेही सुनिश्चित करेगा। यह पोर्टल ग्राम पंचायत स्तर तक डिजिटलीकरण की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है।
- **स्वामित्व योजना** ग्रामीण भारत हेतु एकीकृत संपत्ति प्रमाणन समाधान उपलब्ध कराती है। ग्रामीण क्षेत्रों में आवासित भूमि का सीमांकन विविध सर्वेक्षण विधियों द्वारा किया जाएगा, जैसे- पंचायती राज मंत्रालय, राज्य पंचायती राज विभागों, राज्य राजस्व विभागों तथा सर्वे ऑफ़ इंडिया के सहयोगात्मक प्रयास से ड्रोन तकनीक का उपयोग।

महामारी के दौरान पंचायतों की भूमिका

- **स्थानीय स्तर के ज्ञान का व्यावहारिक प्रयोग:**
    - अपनी निकटता के कारण, पंचायतें अधिकांश नागरिकों हेतु **संपर्क का प्रथम बिंदु** होती हैं तथा इस प्रकार, ये गत्यात्मकता के साथ-साथ सामाजिक सुरक्षा संबंधी आवश्यकताओं को ज्ञात करने हेतु सर्वोत्तम स्थल हैं।
    - राज्य स्तर से संसाधनों के परिनियोजन की तुलना में इनके माध्यम से **समुदाय स्तरीय संलग्नता** और **सूचना का प्रसार** अधिक सुगम होता है।
    - राज्यों अथवा जिलों से होकर यात्रा करने वाले व्यक्तियों की निगरानी के लिए अंतिम बिंदु तक समन्वयात्मक प्रयासों को जारी रखना अनिवार्य है। इस प्रयास में पंचायतें, विशेष रूप से सामुदायिक संगरोध (community quarantine) के दौरान, व्यक्तियों और परिवारों के प्रवेश एवं निकास की निगरानी हेतु सर्वाधिक महत्वपूर्ण निकाय हैं।
- **प्रशासनिक पक्ष:**
    - प्रशासनिक रूप से, यद्यपि पंचायतों के कार्य विविधतापूर्ण हैं, तथापि पंचायत सदस्य अधिकांश समाज कल्याण कार्यक्रमों के लिए **नोडल बिंदु** होते हैं तथा उन्हें प्रत्यक्ष पहुंच का लाभ प्राप्त है।
    - **2.6 लाख ग्रामीण स्थानीय निकायों (अथवा ग्राम पंचायतों) और 10 लाख से अधिक अग्रिम पंक्ति के कार्यकर्ताओं (ASHAs व ANMs आदि)** के साथ पंचायतें यह सुनिश्चित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं कि कल्याणकारी सेवाएं ज़मीनी स्तर पर प्रभावी रूप से वितरित की जाएं तथा कोई भी व्यक्ति दस्तावेज़ों अथवा ज्ञान के अभाव के कारण राहत पैकजों तक पहुंच से वंचित न रह जाए।

VISION IAS

- त्रि-स्तरीय पंचायती राज संस्थाओं (PRIs) में **महिलाओं हेतु आरक्षण, इन्हें** कोविड-19 के विरुद्ध संघर्ष में संलग्न **महिला स्वयं सहायता समूहों (SHGs)** की लाखों सदस्यों के साथ सहयोग में कार्य करने का अतिरिक्त लाभ प्रदान करता है।

- **विश्वास का स्तर:**
  - नागरिकों के परिप्रेक्ष्य से, **पंचायत सर्वोत्कृष्ट समुदाय का प्रतिनिधित्व करती है।** नागरिक तुलनात्मक रूप से अपने स्थानीय शासन के प्रति अधिक विश्वास प्रदर्शित करते हैं तथा इस प्रकार, अपनी आवश्यकताओं हेतु उनकी अन्य अधिकारियों की बजाय पंचायतों से सहायता प्राप्त करने की अधिक संभावना होती है।

अग्रिमपंक्ति पर संघर्षरत पंचायती राज संस्थान (Panchayati Raj Institutions: PRIs)

- स्वास्थ्य मंत्रालय की **'कोरोना वायरस (कोविड-19) के स्थानीय संचरण को रोकने हेतु सूक्ष्म योजना' {Micro Plan for Containing Local Transmission of Coronavirus Disease (COVID-19)}** के अंतर्गत सामुदायिक गतिशीलता में वृद्धि करने और सक्रिय निगरानी सुनिश्चित करने के लिए पंचायतों को अग्रिम पंक्ति पर रखा गया है।
- सरकार ने पंचायतों को **कोविड-19 से संबंधित गतिविधियों हेतु 14वें वित्त आयोग के तहत निर्धारित निधियों का प्रयोग करने** की अनुमति प्रदान की है।
  - संवैधानिक रूप से **स्वच्छता बनाए रखना स्थानीय शासन का कार्य है।** कोविड-19 से संबंधित क्रियाकलापों को इस कार्य की परिधि के अंतर्गत लाया गया है।
- विभिन्न राज्यों ने स्वास्थ्य गतिविधियों के संपादन, सूचना के प्रसार और सभी सुभेद्य समुदायों की खाद्य आपूर्ति तक पहुंच सुनिश्चित करने हेतु **समन्वय के लिए पंचायतों को नोडल एजेंसी घोषित किया है।**
- **केरल:**
  - **विकेंद्रीकरण के अपने दीर्घकालिक इतिहास** तथा प्राथमिक और द्वितीयक स्वास्थ्य देखभाल सुविधाओं को त्रि-स्तरीय संस्थाओं के दायरे के अंतर्गत शामिल करने के साथ केरल में पंचायतें लोगों की निगरानी, स्वास्थ्य जांच शिविरों के आयोजन, स्वच्छता, सोशल डिस्टेंसिंग के संदेश के प्रचार इत्यादि कार्यों में सरकार के साथ सहयोग कर रही हैं।
  - केरल की लगभग एक-तिहाई योजना निधियां लोचशील विकास और अनुरक्षण निधियों के रूप में पंचायतों को उपलब्ध करवाई गई हैं।
  - **कुदुंबश्री योजना** (जो महिलाओं को स्वयं सहायता समूहों एवं अपने संघों का निर्माण करने हेतु प्रोत्साहित करती है), पंचायतों के साथ सहयोग में तथा उन्हें उनके प्रदर्शन हेतु जवाबदेह बनाते हुए, उनके (पंचायतों) लिए एक पूरक व संगठित नागरिक समाज के रूप में कार्य करती है।
- **ओडिशा**
  - ओडिशा सरकार ने सरपंचों को **ग्राम स्तर पर क्वारंटाइन के प्रवर्तन हेतु ज़िलाधीश के समान शक्तियां प्रत्यायोजित** की हैं।
  - महामारी से निपटने की विकेंद्रित रीति को सुनिश्चित करने के लिए ओडिशा सरकार ने प्रत्येक ग्राम पंचायत को समुदाय आधारित निगरानी हेतु पंजीकरण सुविधा और तंत्रों के साथ प्राधिकृत किया है।
- **आंध्र प्रदेश**
  - ग्राम स्वयंसेवकों (लगभग 2.5 लाख) ने 14.3 मिलियन परिवारों में से **14.1 मिलियन परिवारों के सर्वेक्षण में सहायता प्रदान की है।**
  - उन्होंने विदेशों से लौटे लोगों की ट्रैवल हिस्ट्री के साथ उनको ट्रेस करने और राज्य में कोविड-19 के संक्रमणों के प्रसार को रोकने हेतु राज्य सरकार की सहायता की है।

आंध्र प्रदेश की ग्राम स्वयंसेवक प्रणाली (Village Volunteer System of Andhra Pradesh)

- इस प्रणाली के तहत ग्राम स्वयंसेवकों/वार्ड स्वयंसेवकों के एक नवीन विभाग और ग्राम सचिवालय/वार्ड सचिवालय का सृजन किया गया है।
- प्रत्येक **ग्राम सचिवालय** को 2,000 की आबादी पर स्थापित किया गया है तथा प्रत्येक सचिवालय में लगभग 12 ग्राम अधिकारी नियुक्त हैं।
- प्रत्येक स्वयंसेवक को **प्रति माह 5,000 रुपये का भुगतान किया जाता है** तथा उन्हें यह सुनिश्चित करना होता है कि गाँव में **50 घरों** में लोगों को लाभ (खाद्य आपूर्ति आदि) प्राप्त हुआ हो। कस्बों में वार्ड स्वयंसेवकों को नियोजित किया गया है।

इस प्रणाली को सृजित करने हेतु तर्काधार

- यह प्रणाली **कल्याणकारी योजनाओं के तहत** लोगों को विभिन्न लाभों की **बेहतर आपूर्ति** सुनिश्चित करने हेतु सृजित की गई है। ये

VISION IAS

स्वयंसेवक राज्य के 11,000 से अधिक ग्रामों में सरकारी कल्याणकारी कार्यक्रमों के कार्यान्वयन में सहयोग प्रदान करेंगे।

- यह प्रणाली परोक्ष रूप से ग्रामीण आंतरिक क्षेत्रों में **रोज़गार का सृजन करेगी** तथा साथ ही साथ **अभिगम्यता और जवाबदेही युक्त श्रृंखला** का निर्माण भी करेगी। इसके परिणामस्वरूप योजनाओं के कार्यान्वयन में **विकेंद्रीकरण** में वृद्धि होगी तथा **स्थानीय कार्यकर्ताओं** में क्षमता निर्माण भी सुनिश्चित होगा।

PRIs को सशक्त बनाने हेतु आगे की राह

- यद्यपि, संविधान द्वारा अधिदेशित अनेक कृत्य पंचायतों को हस्तांतरित किए गए हैं, तथापि एक निर्वाचित सरकार की भांति प्रभावपूर्ण रीति से कार्य करने हेतु उन्हें अभी तक उचित निधि एवं कार्यबल पूर्ण रूप से हस्तांतरित नहीं किए गए हैं। ऐसे संकट से बेहतर तरीके से निपटने हेतु पंचायतों को उनके संवैधानिक अधिकार प्रदान करने का यह उपयुक्त समय है।
- प्रारंभिक कदम के रूप में **11वीं अनुसूची (अनुच्छेद 243G के तहत) की प्रविष्टि 23** सर्वोत्तम सिद्ध हो सकती है। इस प्रविष्टि के अंतर्गत **"स्वास्थ्य और स्वच्छता, जिनके अंतर्गत अस्पताल, प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र और औषधालय भी हैं"** का कार्य उपबंधित है।
- आर्थिक गतिविधियों के पूर्णतः सामान्य होने तक प्रत्यावर्तित प्रवासी श्रमिकों सहित लाखों ग्रामीणों को निःशुल्क अथवा उच्च सब्सिडीकृत खाद्य उपलब्ध करवाने की नितांत आवश्यकता होगी।
  - **11वीं अनुसूची की प्रविष्टि 28** में हस्तांतरण के विषयों के रूप में **"सार्वजनिक वितरण प्रणाली"** समाविष्ट है।
- जांच, क्वारंटाइन, आइसोलेशन और संभावित सीमा तक सोशल डिस्टेंसिंग सहित **प्रवासी श्रमिकों के अंतर्वाह को प्रबंधित करने हेतु योजना निर्माण** तथा सभी के लिए खाद्य आपूर्ति, शरणस्थल व मौद्रिक अनुदान की उपलब्धता सुनिश्चित करवाना सर्वाधिक महत्वपूर्ण आवश्यकता है।
  - **अंतिम बिंदु तक आपूर्ति** केवल पंचायतों (और नगरपालिकाओं) के सशक्तीकरण द्वारा **अनुच्छेद 243A एवं 243S** के अधीन अधिदेशित उनसे संबंधित ग्राम सभाओं तथा वार्ड सभाओं को सूचित करते हुए व्यापक रूप से सुनिश्चित की जा सकती है।
- कोविड-19 के संचरण का प्रतिरोध करने हेतु योजना के निर्माण के लिए **अनुच्छेद 243ZD के अंतर्गत प्रावधानित जिला नियोजन संबंधित तंत्र के पूर्ण परिनियोजन** की आवश्यकता है। इसके तहत पंचायतों और नगरपालिकाओं के तीनों स्तर को समाविष्ट करते हुए जिला योजना समिति का गठन किया जाना चाहिए।

9.2. शहरी स्थानीय निकायों का वित्तीय सशक्तीकरण (Financially Empowering Urban Local Bodies)

सुर्ख़ियों में क्यों?

भारत में शहरी स्थानीय निकायों (नगर पंचायत, नागलपालिका परिषद् और नगर निगम) के लिए निम्न वित्तीय संसाधनों की उपलब्धता एक स्थायी समस्या रही है।

भारत में शहरी स्थानीय निकायों (Urban Local Bodies: ULBs) के वित्त की वर्तमान स्थिति

15वें वित्त आयोग के एक अध्ययन ने **शहरी स्थानीय निकायों** वित्त के संबंध में निम्नलिखित चिंताजनक रुझानों को रेखांकित किया है:

- **सकल घरेलू उत्पाद (GDP) के अनुपात में नगरीय निकायों हेतु निम्न राजस्व:** भारत में GDP के अनुपात के संदर्भ में नगरीय निकायों हेतु राजस्व की उपब्धता वर्ष 2007-08 से वर्ष 2017-18 की अवधि के दौरान GDP के लगभग 1 प्रतिशत पर स्थिर बनी रही है।
- **इन निकायों के स्वयं के राजस्व में गिरावट:** ULBs के कुल राजस्व में इन निकायों द्वारा सृजित स्वयं के राजस्व (स्वयं के कर तथा गैर-कर संसाधनों के माध्यम से उत्पन्न) की हिस्सेदारी में उल्लेखनीय गिरावट आई है। यह वर्ष 2007-08 के लगभग 55% से कम होकर वर्ष 2017-18 में लगभग 43% पर पहुँच गयी।
- **कर संसाधनों के विकल्पों का अभाव:** वर्तमान में, संपत्ति कर भारत में ULBs द्वारा संग्रहित कर का एक मुख्य स्रोत है तथा इसने वर्ष 2017-18 में भारत में नगरीय निकायों के कर राजस्व में लगभग 60 प्रतिशत का योगदान दिया।
- **संपत्ति कर की अपर्याप्त वृद्धि दर:** वर्ष 2017-18 में, भारत की GDP में संपत्ति कर राजस्व की हिस्सेदारी **0.15 प्रतिशत थी,** जो OECD (आर्थिक सहयोग एवं विकास संगठन) देशों में अचल संपत्ति पर अनुमानित आवर्ती (recurrent) करों के 1 प्रतिशत के स्तर से काफी कम है।
- **अपर्याप्त अंतरसरकारी अंतरण:** नॉर्वे के 6.0 प्रतिशत तथा यूनाइटेड किंगडम के 9.9 प्रतिशत की तुलना में, भारत में इस प्रकार का अंतरण GDP का मात्र 0.45 प्रतिशत ही है।
- **अल्प उधारी:** नगरीय निकायों की कुल उधारी (म्युनिसिपल बॉण्ड सहित) नगरीय निकायों के राजस्व का मात्र 2 से 3 प्रतिशत ही है।

VISION IAS

- **छोटे नगरीय निकायों की निम्नस्तरीय वित्त व्यवस्था:** वर्ष 2017-18 में, नगर निगमों की प्रति व्यक्ति राजस्व उपलब्धता नगर परिषदों तथा नगर पंचायतों की प्रति व्यक्ति राजस्व उपलब्धता से क्रमशः चार गुना व छह गुना से अधिक थी।

ULBs के समक्ष वित्त संबंधी चुनौतियां

- **राज्य सरकारों का रवैया:** राज्य सरकारों ने ULBs को आरंभ करने के साथ उनकी अधिकारिता के अधीन सीमित संख्या में करों को विकसित किया था, वहीं वर्षों के दौरान कई राज्य सरकारों द्वारा (संपत्ति कर के अलावा) अधिकतर स्थानीय करों को अपने नियंत्रण में ले लिया गया है।
- **शहरी स्थानीय निकायों द्वारा उपलब्ध सेवाओं की लागत की निम्नस्तरीय वसूली:** भारत में उपयोगकर्ता शुल्क तथा सेवा के प्रावधान, सेवाओं की निम्नस्तरीय गुणवत्ता के कारण एक दुष्चक्र बन जाता है, जिसके कारण उपयोगकर्ता इन सेवाओं के लिए भुगतान करने में तत्पर नहीं होते हैं तथा इसके परिणामस्वरूप उपयोगकर्ता शुल्क व फीस संग्रह बहुत कम हो पाता है।
- **खातों का अनुपयुक्त रखरखाव:** स्थानीय सरकारों के संबंध में नियन्त्रक एवं महालेखापरीक्षक (CAG) की विभिन्न रिपोर्टों में, खातों को तैयार करने (जैसे- बजट प्रस्तुति का अभाव इत्यादि) के संबंध में ULBs की तैयारी में अनेक कमियों को उजागर किया गया है।
- **राज्य वित्त आयोगों (State Finance Commissions: SFCs) से संबंधित समस्याएं:** SFCs की अकुशल कार्य-पद्धति ने ULBs की क्षमता को प्रभावित किया है, जिसके कारण केंद्रीय वित्त आयोग को ULBs के वित्तीय संसाधनों में वृद्धि करनी पड़ती है।
- **बाजार स्रोतों से उधार लेने में असमर्थता:** अधिकांश ULBs को बाजार स्रोतों से उधार लेने के लिए राज्य सरकारों की अनुमति की आवश्यकता होती है। नगरपालिका बॉण्ड्स जैसे वित्तीय बाजार साधनों में वृद्धि अधिकांशतः अपर्याप्त रही है।
- **वस्तु एवं सेवा कर (GST) का प्रभाव:** GST की शुरुआत ने शहरी स्थानीय सरकारों के कर राजस्व के महत्वपूर्ण स्रोतों, जैसे- चुंगी, स्थानीय निकाय कर, प्रवेश कर तथा विज्ञापन कर को समाप्त कर दिया है।
- **प्रच्छन्न शहरीकरण (Hidden Urbanization):** भारत में अनियोजित शहरीकरण के कारण प्रच्छन्न शहरीकरण को बढ़ावा मिला है तथा बड़ी संख्या में बस्तियां, नगरपालिकों की सीमाओं से परे शहरी संकुलन (agglomeration) का हिस्सा बनती जा रही हैं।

ULBs के वित्त में सुधार के लिए उठाए गए कदम

- **15वें वित्त आयोग की अनुशंसाएं:** ULBs हेतु वर्ष 2020-21 के लिए अनुशंसित कुल अनुदान को बढ़ाकर 29,250 करोड़ रुपये कर दिया गया, जबकि 14वें वित्त आयोग द्वारा वर्ष 2019-20 के लिए अनुशंसित अनुदान 26,665 करोड़ रुपये था।
- **प्रदर्शन आधारित अनुदान:** उत्तरोत्तर वित्त आयोगों ने ULBs की राजकोषीय स्थिति में सुधार के लिए अनुदानों के भुगतान पर शर्तें आरोपित कर दी हैं।
- **राष्ट्रीय म्युनिसिपल लेखा नियमावली (National Municipal Accounts Manual: NMAM):** यह नियमावली सटीक एवं प्रासंगिक वित्तीय रिपोर्ट प्रस्तुत करने हेतु सभी राज्यों / संघ राज्य क्षेत्रों को लेखांकन नीतियों, प्रक्रियाओं तथा दिशा-निर्देशों के संबंध में विस्तृत रूप से विवरण प्रदान करती है ताकि नगरपालिका के लेन-देन की सही व समयबद्ध रिकॉर्डिंग सुनिश्चित की जा सके।
- **योजनाओं के माध्यम से धन का आवंटन: आवासन और शहरी कार्य मंत्रालय** की कई योजनाएं शहरी अवसंरचना व सेवाओं इत्यादि के विकास से संबंधित परियोजनाओं के लिए ULBs को वित्तीय सहायता प्रदान करती हैं। उदाहरण के लिए, अटल नवीकरण और शहरी परिवर्तन मिशन (अमृत) (Atal Mission for Rejuvenation and Urban Transformation: AMRUT), स्मार्ट सिटी मिशन आदि।
- **नगरपालिका बॉण्ड्स को बढ़ावा:** भारतीय प्रतिभूति और विनिमय बोर्ड (Securities and Exchange Board of India: SEBI) द्वारा **नगरपालिकाओं द्वारा ऋण प्रतिभूतियों का निर्गम और इनकी सूचीबद्धता (Issue and Listing of Debt Securities by Municipalities: ILDM) विनियम, 2015** के जारी होने के पश्चात् से सात नगरपालिकाओं ने अपनी ऋण प्रतिभूतियों को जारी करते हुए लगभग 1,400 करोड़ रुपये जुटाए हैं (इन्हें आमतौर पर 'मुनि बॉण्ड्स' के रूप में जाना जाता है)।

आगे की राह

- **राज्यों द्वारा अंतरण में वृद्धि:** ULBs को वृत्ति कर, स्थानीय निकाय मनोरंजन कर, मोटर वाहन कर इत्यादि तक पहुँच प्रदान की जा सकती है।
- **भूमि मूल्य का मुद्रीकरण:** प्रभाव शुल्क, खुशहाली लेवी (betterment levy), रिक्त भूमि कर इत्यादि जैसे लाभ शुल्कों (benefit charges) का उपयोग करके ULBs द्वारा भूमि मूल्य का मुद्रीकरण किया जा सकता है।
- **संपत्ति कर सुधार:** उदाहरण के लिए- 13वें वित्त आयोग द्वारा अनुशंसित संपत्ति कर बोर्ड्स का गठन करना, भौगोलिक सूचना प्रणाली का उपयोग करना इत्यादि।

VISION IAS

- स्थानीय क्षमता निर्माण, वित्तीय सशक्तीकरण, राज्य-ULBs राजकोषीय संबंधों को तार्किक बनाना आदि के माध्यम से **नगरपालिका बॉण्ड्स को सुदृढ़ करना।**
- तकनीकी सहायता के माध्यम से **ULBs का क्षमता निर्माण करना;** वित्तीय योजना में सहायता करना जैसे कि पूंजी निवेश के लिए आंतरिक व बाह्य स्रोतों की पहचान करना, लेखांकन मानकों में सुधार करना, इत्यादि।

भारत में नगरपालिका बॉण्ड्स बाजार अपेक्षा के अनुरूप विकास होने में क्यों विफल रहे हैं?

- नगरपालिका बॉण्ड्स तब जारी किए जाते हैं, जब **कोई नगरीय निकाय अपने विभिन्न परियोजनाओं के लिए धन जुटाना चाहती है,** जैसे कि अवसंरचना, सड़क, हवाई अड्डा, रेलवे स्टेशन, विद्यालय, इत्यादि। भारत में इन्हें **वर्ष 1997** से जारी किया जा रहा है तथा **बैंगलोर नगर निगम** म्युनिसिपल बॉण्ड्स जारी करने वाला देश का पहला शहरी स्थानीय निकाय है।
- हालांकि, सरकारों द्वारा किए गए अनेक प्रयासों के बावजूद भारत में म्युनिसिपल बॉण्ड्स बाजार निम्नलिखित कारणों से लोकप्रिय नहीं हो पाया है:
  - खराब क्रेडिट रेटिंग;
  - इन्हें प्रायः जोखिम भरा माना जाता है;
  - अवास्तविक नियोजन;
  - सरकारी प्रतिभूति बाजारों का असंतोषजनक विकास;
  - संस्थागत निवेशकों पर नियंत्रण; आदि।

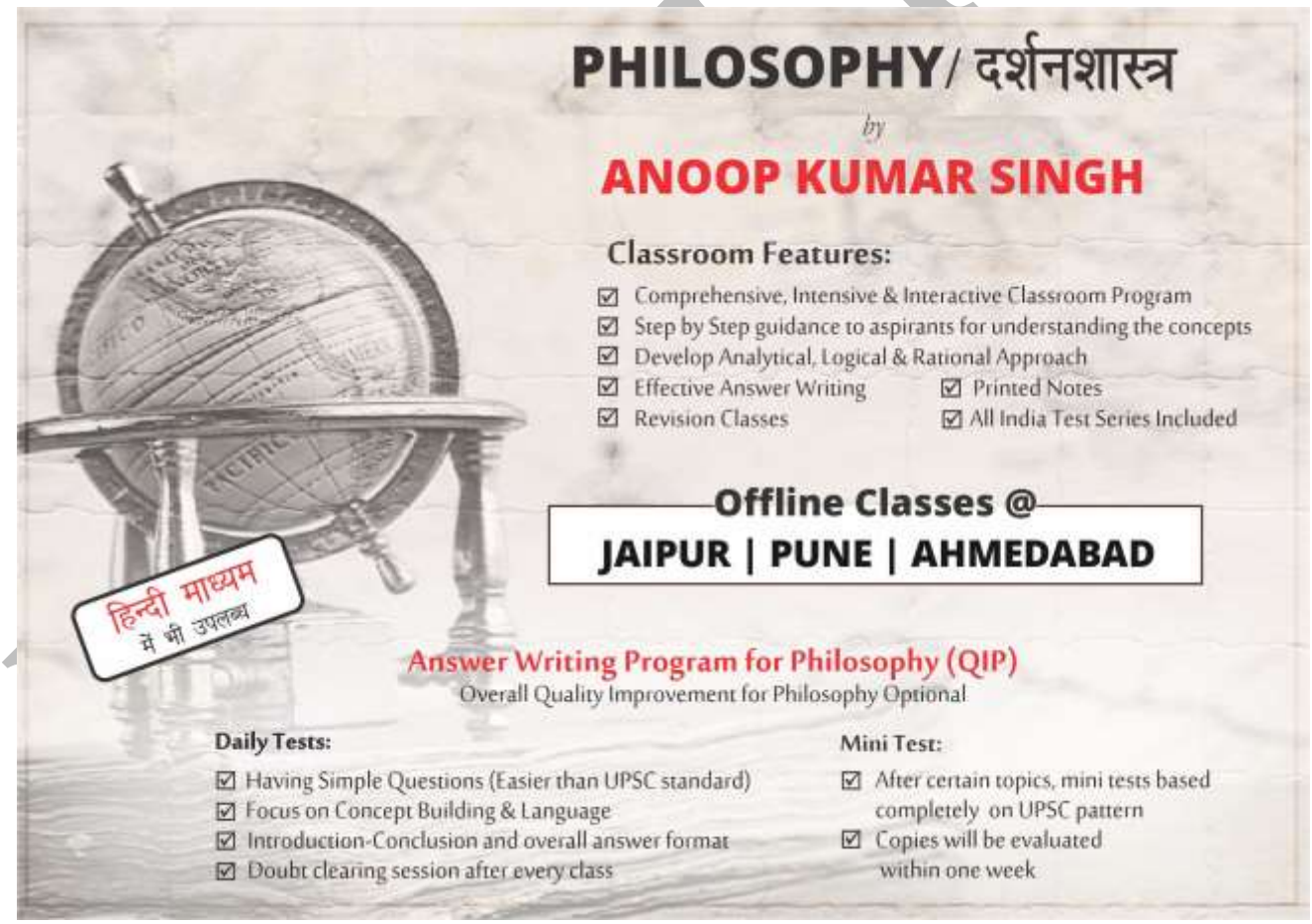

Copyright © by Vision IAS

All rights are reserved. No part of this document may be reproduced, stored in a retrieval system or transmitted in any form or by any means, electronic, mechanical, photocopying, recording or otherwise, without prior permission of Vision IAS.